

OSHO

संयोग से समाधि के ओर

जीवन-ऊर्जा
रूपांतरण का विज्ञान

ओशा



संभोग से समाधि की ओर

OSHO

ISBN: 978-0-88050-910-7

Copyright © 1968, 2018 OSHO International Foundation
www.osho.com/copyrights

Images and cover design © OSHO International Foundation

All rights reserved. No part of this book may be reproduced or transmitted in any form or by any means, electronic or mechanical, including photocopying, recording, or by any information storage and retrieval system, without prior written permission from the publisher.

OSHO is a registered trademark of OSHO International Foundation
www.osho.com/trademarks

This book is a series of original talks by Osho, given to a live audience. All of Osho's talks have been published in full as books and are also available as original audio recordings. Audio recordings and the complete text archive can be found via the online OSHO Library at
www.osho.com/Library

OSHO MEDIA INTERNATIONAL
www.osho.com/oshointernational

ISBN- 978-0-88050-910-7

मेरे प्रिय आत्मन्!

प्रेम क्या है?

जीना और जानना तो आसान है, लेकिन कहना बहुत कठिन है। जैसे कोई मछली से पूछे कि सागर क्या है? तो मछली कह सकती है, यह है सागर, यह रहा चारों तरफ, वही है। लेकिन कोई पूछे कि कहो क्या है, बताओ मत, तो बहुत कठिन हो जाएगा मछली को।

आदमी के जीवन में भी जो श्रेष्ठ है, सुंदर है और सत्य है, उसे जीया जा सकता है, जाना जा सकता है, हुआ जा सकता है, लेकिन कहना बहुत मुश्किल है। और दुर्घटना और दुर्भाग्य यह है कि जिसमें जीया जाना चाहिए, जिसमें हुआ जाना चाहिए, उसके संबंध में मनुष्य-जाति पांच-छह हजार वर्ष से केवल बातें कर रही है।

प्रेम की बात चल रही है, प्रेम के गीत गाए जा रहे हैं, प्रेम के भजन गाए जा रहे हैं, और प्रेम का मनुष्य के जीवन में कोई स्थान नहीं है। अगर आदमी के भीतर खोजने जाएं तो प्रेम से ज्यादा असत्य शब्द दूसरा नहीं मिलेगा। और जिन लोगों ने प्रेम को असत्य सिद्ध कर दिया है और जिन्होंने प्रेम की समस्त धाराओं को अवरुद्ध कर दिया है और बड़ा दुर्भाग्य यह है कि लोग समझते हैं वे ही प्रेम के जन्मदाता भी हैं।

धर्म प्रेम की बातें करता है, लेकिन आज तक जिस प्रकार का धर्म मनुष्य-जाति के ऊपर दुर्भाग्य की भांति छाया हुआ है, उस धर्म ने ही मनुष्य के जीवन से प्रेम के सारे द्वार बंद कर दिए हैं। और न इस संबंध में पूरब और पश्चिम में कोई फर्क है, न हिंदुस्तान में और न अमेरिका में कोई फर्क है। मनुष्य के जीवन में प्रेम की धारा प्रकट ही नहीं हो पाई। और नहीं हो पाई तो हम दोष देते हैं कि मनुष्य ही बुरा है, इसलिए नहीं प्रकट हो पाई। हम दोष देते हैं कि यह मन ही जहर है, इसलिए प्रकट नहीं हो पाई।

मन जहर नहीं है। और जो लोग मन को जहर कहते रहे हैं, उन्होंने ही प्रेम को जहरीला कर दिया, प्रेम को प्रकट नहीं होने दिया है। मन जहर हो कैसे सकता है? इस जगत में कुछ भी जहर नहीं है। परमात्मा के इस सारे उपक्रम में कुछ भी विष नहीं है, सब अमृत है। लेकिन आदमी ने सारे अमृत को जहर कर लिया है। और इस जहर करने में शिक्षक, साधु-संत और तथाकथित धार्मिक लोगों का सबसे ज्यादा हाथ है।

इस बात को थोड़ा समझ लेना जरूरी है। क्योंकि अगर यह बात दिखाई न पड़े तो मनुष्य के जीवन में कभी भी प्रेम भविष्य में भी नहीं हो सकेगा। क्योंकि जिन कारणों से प्रेम नहीं पैदा हो सका है, उन्हीं कारणों को हम प्रेम प्रकट करने के आधार और कारण बना रहे हैं! हालतें ऐसी हैं कि गलत सिद्धांतों को अगर हजारों वर्ष तक दोहराया जाए तो फिर हम यह भूल ही जाते हैं कि सिद्धांत गलत हैं; और दिखाई पड़ने लगता है कि आदमी गलत है, क्योंकि उन सिद्धांतों को पूरा नहीं कर पा रहा है।

मैंने सुना है, एक सम्राट के महल के नीचे से एक पंखा बेचने वाला गुजरता था और जोर से चिल्ला रहा था कि अनूठे और अदभुत पंखे मैंने निर्मित किए हैं। ऐसे पंखे कभी भी नहीं बनाए गए। ये पंखे कभी देखे भी नहीं गए हैं। सम्राट ने खिड़की से झांक कर देखा कि कौन है जो अनूठे पंखे ले आया है! सम्राट के पास सब तरह के पंखे थे-- दुनिया के कोने-कोने में जो मिल सकते थे। और नीचे देखा, गलियारे में खड़ा हुआ एक आदमी साधारण दो-दो पैसे के पंखे होंगे और चिल्ला रहा है कि अनूठे, अद्वितीय।

उस आदमी को ऊपर बुलाया और पूछा कि इन पंखों में क्या खूबी है? दाम क्या हैं इन पंखों के? उस पंखे वाले ने कहा कि महाराज, दाम ज्यादा नहीं हैं। पंखे को देखते हुए दाम बहुत कम हैं, सिर्फ सौ रुपये का पंखा है। सम्राट ने कहा, सौ रुपये! यह दो पैसे का पंखा, जो बाजार में जगह-जगह मिलता है, और सौ रुपये दाम! क्या है इसकी खूबी? उस आदमी ने कहा, खूबी! यह पंखा सौ वर्ष चलता है। सौ वर्ष के लिए गारंटी है। सौ वर्ष से कम में खराब नहीं होता है। सम्राट ने कहा, इसको देख कर तो ऐसा लगता है कि यह सप्ताह भी चल जाए पूरा तो मुश्किल है। धोखा देने की कोशिश कर रहे हो? सरासर बेईमानी, और वह भी सम्राट के सामने! उस आदमी ने कहा, आप मुझे भलीभांति जानते हैं, इसी गलियारे में रोज पंखे बेचता हूं। सौ रुपये दाम हैं इसके और अगर सौ वर्ष न चले तो जिम्मेवार मैं हूं। रोज तो नीचे मौजूद होता हूं। और फिर आप सम्राट हैं, आपको धोखा देकर जाऊंगा कहाँ?

वह पंखा खरीद लिया गया। सम्राट को विश्वास तो न था, लेकिन आश्चर्य भी था कि यह आदमी सरासर झूठ

बोल रहा है, किस बल पर बोल रहा है! पंखा सौ रुपये में खरीद लिया गया और उससे कहा कि सातवें दिन तुम उपस्थित हो जाना।

दो-चार दिन में ही पंखे की डंडी बाहर निकल गई। सातवें दिन तो वह बिलकुल मुर्दा हो गया। लेकिन सम्राट ने सोचा कि शायद पंखे वाला आएगा नहीं। लेकिन ठीक समय पर सातवें दिन वह पंखे वाला हाजिर हो गया और उसने कहा, कहो महाराज!

उन्होंने कहा, कहना नहीं है, यह पंखा पड़ा हुआ है टूटा हुआ। यह सात दिन में ही यह गति हो गई, तुम कहते सौ वर्ष चलेगा। पागल हो या धोखेबाज? क्या हो?

उस आदमी ने कहा कि मालूम होता है आपको पंखा झलना नहीं आता है। पंखा तो सौ वर्ष चलता ही। पंखा तो गारंटीड है। आप पंखा झलते कैसे थे?

सम्राट ने कहा, और भी सुनो, अब मुझे यह भी सीखना पड़ेगा कि पंखा कैसे किया जाता है!

उस आदमी ने कहा, कृपा करके बताइए कि इस पंखे की गति सात दिन में ऐसी कैसे बना दी आपने? किस भांति पंखा किया?

सम्राट ने पंखा उठा कर करके दिखाया कि इस भांति मैंने पंखा किया है।

उस आदमी ने कहा, समझ गया भूल। इस तरह पंखा नहीं किया जाता।

सम्राट ने कहा, और क्या रास्ता है पंखा झलने का?

उस आदमी ने कहा, पंखा पकड़िए सामने और सिर को हिलाइए। पंखा सौ वर्ष चलेगा। आप समाप्त हो जाएंगे, लेकिन पंखा बचेगा। पंखा गलत नहीं है, आपके झलने का ढंग गलत है।

यह आदमी पैदा हुआ है--पांच-छह हजार या दस हजार वर्ष की संस्कृति का यह आदमी फल है। लेकिन संस्कृति गलत नहीं है, यह आदमी गलत है। आदमी मरता जा रहा है रोज और संस्कृति की दुहाई चलती चली जाती है--कि महान संस्कृति, महान धर्म, महान सब कुछ! और उसका यह फल है आदमी, उसी संस्कृति से गुजरा है और यह परिणाम है उसका। लेकिन नहीं, आदमी गलत है और आदमी को बदलना चाहिए अपने को। और कोई कहने की हिम्मत नहीं उठाता कि कहीं ऐसा तो नहीं है कि दस हजार वर्षों में जो संस्कृति और धर्म आदमी को प्रेम से नहीं भर पाए वह संस्कृति और धर्म गलत हों! और अगर दस हजार वर्षों में आदमी प्रेम से नहीं भर पाया तो आगे कोई संभावना है इसी धर्म और इसी संस्कृति के आधार पर कि आदमी कभी प्रेम से भर जाए?

दस हजार वर्षों में जो नहीं हो पाया, वह आगे भी दस हजार वर्षों में होने वाला नहीं है। क्योंकि आदमी यही है, कल भी यही होगा आदमी। आदमी हमेशा से यही है और हमेशा यही होगा। और संस्कृति और धर्म, जिनके हम नारे दिए चले जाते हैं, और संतों और महात्माओं की जिनकी दुहाइयां दिए चले जाते हैं...सोचने के लिए हम तैयार नहीं कि कहीं हमारे बुनियादी चिंतन की दिशा ही तो गलत नहीं है?

मैं कहना चाहता हूं कि वह गलत है। और गलत का सबूत है यह आदमी। और क्या सबूत होता है? एक बीज को हम बोएं और फल जहरीले और कड़वे हों तो क्या सिद्ध होता है? सिद्ध होता है कि वह बीज जहरीला और कड़वा रहा होगा। हालांकि बीज में पता लगाना मुश्किल है कि उससे जो फल पैदा होंगे, वे कड़वे पैदा होंगे। बीज में कुछ खोजबीन नहीं की जा सकती। बीज को तोड़ो-फोड़ो, कोई पता नहीं चल सकता कि इससे जो फल पैदा होंगे, वे कड़वे होंगे। बीज को बोओ, सौ वर्ष लग जाएंगे--वृक्ष होगा, बड़ा होगा, आकाश में फैलेगा, तब फल आएंगे--और तब पता चलेगा कि वे कड़वे हैं।

दस हजार वर्ष में संस्कृति और धर्म के जो बीज बोए गए हैं, यह आदमी उसका फल है और यह कड़वा है और घृणा से भरा हुआ है। लेकिन उसी की दुहाई दिए चले जाते हैं हम और सोचते हैं कि उससे प्रेम हो जाएगा। मैं आपसे कहना चाहता हूं, उससे प्रेम नहीं हो सकता है। क्योंकि प्रेम के पैदा होने की जो बुनियादी संभावना है, धर्मों ने उसकी ही हत्या कर दी है और उसमें ही जहर घोल दिया है।

मनुष्य से भी ज्यादा प्रेम पशु और पक्षियों में और पौधों में दिखाई पड़ता है; जिनके पास न कोई संस्कृति है, न कोई धर्म है। संस्कृत और सुसंस्कृत और सभ्य मनुष्यों की बजाय असभ्य और जंगल के आदमी में ज्यादा प्रेम दिखाई पड़ता है; जिसके पास न कोई विकसित धर्म है, न कोई सभ्यता है, न कोई संस्कृति है। जितना आदमी सभ्य, सुसंस्कृत और तथाकथित धर्मों के प्रभाव में मंदिरों और चर्चों में प्रार्थना करने लगता है, उतना ही प्रेम से शून्य क्यों होता चला जाता है?

जरूर कुछ कारण हैं। और दो कारणों पर मैं विचार करना चाहता हूं। अगर वे खयाल में आ जाएं तो प्रेम के अवरुद्ध स्रोत टूट सकते हैं और प्रेम की गंगा बह सकती है। वह हर आदमी के भीतर है, उसे कहीं से लाना नहीं है। प्रेम कोई ऐसी बात नहीं है कि कहीं खोजने जाना है उसे। वह है। वह प्राणों की प्यास है हर एक के भीतर, वह

प्राणों की सुगंध है प्रत्येक के भीतर। लेकिन चारों तरफ से परकोटा है उसके और वह प्रकट नहीं हो पाती। सब तरफ पत्थर की दीवार है और वे झरने नहीं फूट पाते। तो प्रेम की खोज और प्रेम की साधना कोई पाजिटिव, कोई विधायक खोज और साधना नहीं है कि हम जाएं और कहीं प्रेम सीख लें।

एक मूर्तिकार एक पत्थर को तोड़ रहा था। कोई देखने गया था कि मूर्ति कैसे बनाई जाती है। उसने देखा कि मूर्ति तो बिलकुल नहीं बनाई जा रही है; सिर्फ छैनी और हथौड़े से पत्थर तोड़ा जा रहा है। तो उस आदमी ने पूछा कि यह आप क्या कर रहे हैं? मूर्ति नहीं बनाएंगे! मैं तो मूर्ति का बनना देखने आया हूँ। आप तो सिर्फ पत्थर तोड़ रहे हैं।

उस मूर्तिकार ने कहा कि मूर्ति तो पत्थर के भीतर छिपी है, उसे बनाने की जरूरत नहीं है; सिर्फ उसके ऊपर जो व्यर्थ पत्थर जुड़ा है उसे अलग कर देने की जरूरत है और मूर्ति प्रकट हो जाएगी। मूर्ति बनाई नहीं जाती, मूर्ति सिर्फ आविष्कृत होती है, डिस्कवर होती है, अनावृत होती है, उघाड़ी जाती है।

मनुष्य के भीतर प्रेम छिपा है, सिर्फ उघाड़ने की बात है। उसे पैदा करने का सवाल नहीं है, अनावृत करने की बात है। कुछ है जो हमने ऊपर से ओढ़ा हुआ है, जो उसे प्रकट नहीं होने देता।

एक चिकित्सक से जाकर आप पूछें कि स्वास्थ्य क्या है? और दुनिया का कोई चिकित्सक नहीं बता सकता कि स्वास्थ्य क्या है। बड़े आश्चर्य की बात है! स्वास्थ्य पर ही तो सारा चिकित्सा-शास्त्र खड़ा है, सारी मेडिकल साइंस खड़ी है और कोई नहीं बता सकता कि स्वास्थ्य क्या है। लेकिन चिकित्सक से पूछें कि स्वास्थ्य क्या है? तो वह कहेगा, बीमारियों के बावत हम बता सकते हैं कि बीमारियां क्या हैं, उनके लक्षण हमें पता हैं, एक-एक बीमारी की अलग-अलग परिभाषा हमें पता है। स्वास्थ्य? स्वास्थ्य का हमें कोई भी पता नहीं है। इतना हम कह सकते हैं कि जब कोई बीमारी नहीं होती, तो जो होता है, वह स्वास्थ्य है।

स्वास्थ्य तो मनुष्य के भीतर छिपा है, इसलिए मनुष्य की परिभाषा के बाहर है। बीमारी बाहर से आती है, इसलिए बाहर से परिभाषा की जा सकती है। स्वास्थ्य भीतर से आता है, उसकी कोई परिभाषा नहीं की जा सकती। इतना ही हम कह सकते हैं कि बीमारियों का अभाव स्वास्थ्य है। लेकिन यह स्वास्थ्य की कहां परिभाषा हुई? स्वास्थ्य के संबंध में तो हमने कुछ भी न कहा। कहा कि बीमारियां नहीं हैं, तो बीमारियों के संबंध में कहा। सच यह है कि स्वास्थ्य पैदा नहीं करना होता, या तो छिप जाता है बीमारियों में या बीमारियां हट जाती हैं तो प्रकट हो जाता है।

स्वास्थ्य हममें है। स्वास्थ्य हमारा स्वभाव है।

प्रेम हममें है। प्रेम हमारा स्वभाव है।

इसलिए यह बात गलत है कि मनुष्य को समझाया जाए कि तुम प्रेम पैदा करो। सोचना यह है कि प्रेम पैदा क्यों नहीं हो पा रहा है? बाधा क्या है? अड़चन क्या है? कहां रुकावट डाल दी गई है? अगर कोई भी रुकावट न हो तो प्रेम प्रकट होगा ही, उसे सिखाने की और समझाने की कोई भी जरूरत नहीं है। अगर मनुष्य के ऊपर गलत संस्कृति और गलत संस्कार की धाराएं और बाधाएं न हों, तो हर आदमी प्रेम को उपलब्ध होगा ही। यह अनिवार्यता है। प्रेम से कोई बच ही नहीं सकता। प्रेम स्वभाव है।

गंगा बहती है हिमालय से। बहेगी गंगा, उसके प्राण हैं, उसके पास जल है। वह बहेगी और सागर को खोज ही लेगी। न किसी पुलिसवाले से पूछेगी, न किसी पुरोहित से पूछेगी कि सागर कहां है? देखा किसी गंगा को चौरस्ते पर खड़े होकर पूछते कि सागर कहां है? उसके प्राणों में है छिपी सागर की खोज और ऊर्जा है, तो पहाड़ तोड़ेगी, मैदान तोड़ेगी और पहुंच जाएगी सागर तक। सागर कितना ही दूर हो, कितना ही छिपा हो, खोज ही लेगी। और कोई रास्ता नहीं है, कोई गाइड-बुक नहीं है कि जिससे पता लगा ले कि कहां से जाना है, लेकिन पहुंच जाती है।

लेकिन बांध बांध दिए जाएं, चारों तरफ परकोटे उठा दिए जाएं। प्रकृति की बाधाओं को तोड़ कर तो गंगा सागर तक पहुंच जाती है, लेकिन अगर आदमी की इंजीनियरिंग की बाधाएं खड़ी कर दी जाएं, तो हो सकता है गंगा सागर तक न पहुंच पाए। यह भेद समझ लेना जरूरी है।

प्रकृति की कोई भी बाधा असल में बाधा नहीं है, इसलिए गंगा सागर तक पहुंच जाती है, हिमालय को काट कर पहुंच जाती है। लेकिन अगर आदमी ईजाद करे, इंतजाम करे, तो गंगा को सागर तक नहीं भी पहुंचने दे सकता है।

प्रकृति का तो एक सहयोग है, प्रकृति तो एक हार्मनी है। वहां जो बाधा भी दिखाई पड़ती है, वह भी शायद शक्ति को जगाने के लिए चुनौती है। वहां जो विरोध भी दिखाई पड़ता है, वह भी शायद भीतर प्राणों में जो छिपा है, उसे प्रकट करने के लिए बुलावा है। वहां शायद कोई बाधा नहीं है। वहां हम बीज को दबाते हैं जमीन में; दिखाई पड़ता है कि जमीन की एक पर्त बीज के ऊपर पड़ी है, बाधा दे रही है। लेकिन वह बाधा नहीं दे रही। अगर वह पर्त न होगी, तो बीज अंकुरित भी नहीं हो पाएगा। ऐसे दिखाई पड़ता है कि एक पर्त जमीन की बीज को

नीचे दबा रही है। लेकिन वह पत दबा इसलिए रही है, ताकि बीज दबे, गले और टूट जाए और अंकुर बन जाए। ऊपर से दिखाई पड़ता है कि वह जमीन बाधा दे रही है, लेकिन वह जमीन मित्र है और सहयोग कर रही है बीज को प्रकट करने में।

प्रकृति तो एक हार्मनी है, एक संगीतपूर्ण लयबद्धता है।

लेकिन आदमी ने जो-जो निसर्ग के ऊपर इंजीनियरिंग की है, जो-जो उसने अपनी यांत्रिक धारणाओं को ठोकने की और बिठाने की कोशिश की है, उससे गंगाएं रुक गई हैं, जगह-जगह अवरुद्ध हो गई हैं। और फिर आदमी को दोष दिया जाता है। किसी बीज को दोष देने की जरूरत नहीं है। अगर वह पौधा न बन पाए, तो हम कहेंगे कि जमीन नहीं मिली होगी ठीक, पानी नहीं मिला होगा ठीक, सूरज की रोशनी नहीं मिली होगी ठीक। लेकिन आदमी के जीवन में खिल न पाए फूल प्रेम का, तो हम कहते हैं--तुम हो जिम्मेवार। और कोई नहीं कहता कि भूमि न मिली होगी ठीक, पानी न मिला होगा ठीक, सूरज की रोशनी न मिली होगी ठीक; इसलिए यह आदमी का पौधा अवरुद्ध रह गया, विकसित नहीं हो पाया, फूल तक नहीं पहुंच पाया।

मैं आपसे कहना चाहता हूं कि बुनियादी बाधाएं आदमी ने खड़ी की हैं। प्रेम की गंगा तो बह सकती है और परमात्मा के सागर तक पहुंच सकती है। आदमी बना इसलिए है कि वह बहे और प्रेम बहे और परमात्मा तक पहुंच जाए। लेकिन हमने कौन सी बाधाएं खड़ी कर दी हैं?

पहली बात, आज तक मनुष्य की सारी संस्कृतियों ने सेक्स का, काम का, वासना का विरोध किया है। इस विरोध ने, मनुष्य के भीतर प्रेम के जन्म की संभावना तोड़ दी, नष्ट कर दी--इस निषेध ने! क्योंकि सच्चाई यह है कि प्रेम की सारी यात्रा का प्राथमिक बिंदु काम है, सेक्स है। प्रेम की यात्रा का जन्म, गंगोत्री--जहां से गंगा पैदा होगी प्रेम की--वह सेक्स है, वह काम है। और उसके सब दुश्मन हैं--सारी संस्कृतियां, और सारे धर्म, और सारे गुरु, और सारे महात्मा--तो गंगोत्री पर ही चोट कर दी, वहीं रोक दिया। पाप है काम, अधम है काम, जहर है काम। और हमने सोचा भी नहीं कि काम की ऊर्जा ही, सेक्स एनर्जी ही अंततः प्रेम में परिवर्तित होती और रूपांतरित होती है। प्रेम का जो विकास है, वह काम की शक्ति का ही ट्रांसफॉर्मेशन है, वह उसी का रूपांतरण है।

एक कोयला पड़ा हो और आपको खयाल भी नहीं आएगा कि कोयला ही रूपांतरित होकर हीरा बन जाता है। हीरे और कोयले में बुनियादी रूप से कोई भी फर्क नहीं है। हीरे में भी वे ही तत्व हैं जो कोयले में हैं। और कोयला हजारों वर्ष की प्रक्रिया से गुजर कर हीरा बन जाता है। लेकिन कोयले की कोई कीमत नहीं है, उसे कोई घर में रखता भी है तो ऐसी जगह जहां दिखाई न पड़े। और हीरे को लोग छातियों पर लटका कर घूमते हैं, कि वह दिखाई पड़े। और हीरा और कोयला एक ही हैं! लेकिन कोई दिखाई नहीं पड़ता कि इन दोनों के बीच अंतर्संबंध है, एक यात्रा है।

कोयले की शक्ति ही हीरा बनती है। और अगर आप कोयले के दुश्मन हो गए--जो कि हो जाना बिलकुल आसान है, क्योंकि कोयले में कुछ भी नहीं दिखाई पड़ता--तो हीरे के पैदा होने की संभावना भी समाप्त हो गई, क्योंकि कोयला ही हीरा बन सकता था।

सेक्स की शक्ति ही, काम की शक्ति ही प्रेम बनती है।

लेकिन उसके विरोध में हैं, सारे दुश्मन हैं उसके। अच्छे आदमी उसके दुश्मन हैं। और उसके विरोध ने प्रेम के अंकुर भी नहीं फूटने दिए। और जमीन से, प्रथम से, पहली सीढ़ी से नष्ट कर दिया भवन को। फिर वह हीरा नहीं बन पाता कोयला, क्योंकि उसके बनने के लिए जो स्वीकृति चाहिए, जो उसका विकास चाहिए, जो उसको रूपांतरित करने की प्रक्रिया चाहिए, उसका सवाल ही नहीं उठता। जिसके हम दुश्मन हो गए, जिसके हम शत्रु हो गए, जिससे हमारी द्वंद्व की स्थिति बन गई और जिससे हम निरंतर लड़ने लगे--अपनी ही शक्ति से आदमी को लड़ा दिया गया है, सेक्स की शक्ति से आदमी को लड़ा दिया गया है। और शिक्षाएं दी जाती हैं कि द्वंद्व छोड़ना चाहिए, कांफ्लिक्ट छोड़नी चाहिए, लड़ना नहीं चाहिए। और सारी शिक्षाएं बुनियाद में सिखा रही हैं कि लड़ो।

मन जहर है; तो मन से लड़ो। जहर से तो लड़ना पड़ेगा। सेक्स पाप है; तो उससे लड़ो। और ऊपर से कहा जा रहा है कि द्वंद्व छोड़ो। जिन शिक्षाओं के आधार पर मनुष्य द्वंद्व से भर रहा है, वे ही शिक्षाएं दूसरी तरफ कह रही हैं कि द्वंद्व छोड़ो। एक तरफ आदमी को पागल बनाओ और दूसरी तरफ पागलखाने खोलो कि उनका इलाज करना है! एक तरफ कीटाणु फैलाओ बीमारियों के और फिर अस्पताल खोलो कि बीमारियों का इलाज यहां किया जाता है!

एक बात समझ लेनी जरूरी है इस संबंध में।

मनुष्य कभी भी काम से मुक्त नहीं हो सकेगा। काम उसके जीवन का प्राथमिक बिंदु है, उसी से जन्म होता है। परमात्मा ने काम की शक्ति को ही, सेक्स को ही सृष्टि का मूल बिंदु स्वीकार किया है। और परमात्मा जिसे पाप

नहीं समझ रहा है, महात्मा उसे पाप बता रहे हैं! अगर परमात्मा उसे पाप समझता है, तो परमात्मा से बड़ा पापी इस पृथ्वी पर, इस जगत में, इस विश्व में कोई भी नहीं है।

फूल खिला हुआ दिखाई पड़ रहा है। कभी सोचा है कि फूल का खिल जाना भी सेक्सुअल एक्ट है! फूल का खिल जाना भी काम की एक घटना है, वासना की एक घटना है! फूल में है क्या--उसके खिल जाने में? उसके खिल जाने में कुछ भी नहीं है, वे बिंदु हैं पराग के, वीर्य के कण हैं, जिन्हें तितलियां उड़ा कर दूसरे फूलों पर ले जाएंगी और नया जन्म देंगी।

एक मोर नाच रहा है--और कवि गीत गा रहे हैं और संत भी देख कर प्रसन्न होंगे। लेकिन उन्हें खयाल नहीं कि नृत्य एक सेक्सुअल एक्ट है। मोर पुकार रहा है अपनी प्रेयसी को या अपने प्रेमी को। वह नृत्य किसी को रिझाने के लिए है। पपीहा गीत गा रहा है; कोयल बोल रही है; एक आदमी जवान हो गया है; एक युवती सुंदर होकर विकसित हो गई है। वे सब की सब सेक्सुअल एनर्जी की अभिव्यक्तियां हैं। वह सब का सब काम का ही रूपांतरण है। यह सब का सब काम की ही अभिव्यक्ति, काम की ही अभिव्यंजना है। सारा जीवन, सारी अभिव्यक्ति, सारी फ्लावरिंग काम की है।

और उस काम के खिलाफ संस्कृति और धर्म आदमी के मन में जहर डाल रहे हैं। उससे लड़ने की कोशिश कर रहे हैं। मौलिक शक्ति से मनुष्य को उलझा दिया है लड़ने के लिए। इसलिए मनुष्य दीन-हीन, प्रेम से रिक्त और थोथा और ना-कुछ हो गया है।

काम से लड़ना नहीं है, काम के साथ मैत्री स्थापित करनी है और काम की धारा को और ऊंचाइयों तक ले जाना है। किसी ऋषि ने किसी वधू को, नव वर और वधू को आशीर्वाद देते हुए कहा था कि तेरे दस पुत्र पैदा हों और अंततः तेरा पति तेरा ग्यारहवां पुत्र हो जाए।

वासना रूपांतरित हो, तो पत्नी मां बन सकती है।

वासना रूपांतरित हो, तो काम प्रेम बन सकता है।

लेकिन काम ही प्रेम बनता है, काम की ऊर्जा ही प्रेम की ऊर्जा में विकसित होती है, फलित होती है। लेकिन हमने मनुष्य को भर दिया है काम के विरोध में। इसका परिणाम यह हुआ कि प्रेम तो पैदा नहीं हो सका--क्योंकि वह तो आगे का विकास था, काम की स्वीकृति से आता--प्रेम तो विकसित नहीं हुआ और काम के विरोध में खड़े होने के कारण मनुष्य का चित्त ज्यादा से ज्यादा कामुक और सेक्सुअल होता चला गया। हमारे सारे गीत, हमारी सारी कविताएं, हमारे चित्र, हमारी पेंटिंग्स, हमारे मंदिर, हमारी मूर्तियां सब घूम-फिर कर सेक्स के आस-पास केंद्रित हो गईं। हमारा मन ही सेक्स के आस-पास केंद्रित हो गया। इस जगत में कोई भी पशु मनुष्य की भांति सेक्सुअल नहीं है। मनुष्य चौबीस घंटे सेक्सुअल हो गया। उठते-बैठते, सोते-जागते सेक्स ही सब कुछ हो गया। उसके प्राण में एक घाव हो गया--विरोध के कारण, दुश्मनी के कारण, शत्रुता के कारण। जो जीवन का मूल था, उससे मुक्त तो हुआ नहीं जा सकता था, लेकिन उससे लड़ने की चेष्टा में सारा जीवन रुग्ण जरूर हो सकता था, वह रुग्ण हो गया है।

और यह जो मनुष्य-जाति इतनी ज्यादा कामुक दिखाई पड़ रही है, इसके पीछे तथाकथित धर्मों और संस्कृति का बुनियादी हाथ है। इसके पीछे बुरे लोगों का नहीं, सज्जनों और संतों का हाथ है। और जब तक मनुष्य-जाति सज्जनों और संतों के इस अनाचार से मुक्त नहीं होती, तब तक प्रेम के विकास की कोई संभावना नहीं है।

मुझे एक घटना याद आती है। एक फकीर अपने घर से निकला था, किसी मित्र के पास मिलने जा रहा था। निकला है कि घोड़े पर उसका चढ़ा हुआ एक बचपन का दोस्त घर आकर सामने खड़ा हो गया है। उसने कहा कि दोस्त, तुम घर पर रुको, वर्षों से प्रतीक्षा करता था कि तुम आओगे तो बैठेंगे और बात करेंगे, और दुर्भाग्य कि मुझे किसी मित्र से मिलने जाना है। मैं वचन दे चुका हूं तो मैं वहां जाऊंगा। घंटे भर में जल्दी से जल्दी लौट आऊंगा, तब तक तुम विश्राम करो।

उसके मित्र ने कहा कि मुझे तो चैन नहीं है, अच्छा होगा कि मैं तुम्हारे साथ ही चला चलूं। लेकिन उसने कहा कि मेरे कपड़े सब गंदे हो गए हैं धूल से रास्ते की। अगर तुम्हारे पास कुछ अच्छा कपड़ा हो तो मुझे दे दो, तो मैं डाल लूं और साथ हो जाऊं।

निश्चित था उस फकीर के पास। किसी सम्राट ने उसे एक बहुमूल्य कोट, एक पगड़ी और धोती भेंट की थी। उसने सम्हाल कर रखी थी, कभी जरूरत पड़ेगी तो पहनूंगा। वह जरूरत नहीं आई थी। निकाल कर ले आया खुशी में।

मित्र ने जब पहन लिए, तब उसे थोड़ी ईर्ष्या पैदा हुई। मित्र ने पहन कर...तो मित्र सम्राट मालूम होने लगा। बहुमूल्य कोट था, पगड़ी थी, धोती थी, शानदार जूते थे। और उसके सामने वह फकीर बिलकुल ही नौकर-चाकर, दीन-हीन दिखाई पड़ने लगा। उसने सोचा कि यह तो बड़ा मुश्किल हुआ, यह तो बड़ा गलत हुआ। जिनके घर मैं ले

जाऊंगा, ध्यान इस पर जाएगा, मुझ पर किसी का भी ध्यान जाएगा नहीं। अपने ही कपड़े और आज अपने ही कपड़ों के कारण मैं दीन-हीन हो जाऊंगा।

लेकिन बार-बार मन को समझाया कि मैं फकीर हूं, आत्मा-परमात्मा की बात करने वाला। क्या रखा है कोट में, पगड़ी में, छोड़ो! पहने रहने दो, कितना फर्क पड़ता है! लेकिन जितना समझाने की कोशिश की कि कोट-पगड़ी में क्या रखा है, कोट-पगड़ी, कोट-पगड़ी ही उसके मन में घूमने लगी।

मित्र दूसरी बात करने लगा। लेकिन वह भीतर तो...ऊपर तो कुछ और दूसरी बातें कर रहा है, लेकिन वहां उसका मन नहीं है। भीतर उसे बस कोट और पगड़ी! रास्ते पर जो भी आदमी देखता है, उसको कोई भी नहीं देखता, मित्र की तरफ सबकी आंखें जाती हैं। वह बड़ी मुश्किल में पड़ गया कि यह तो आज भूल कर ली--अपने हाथ से भूल कर ली। जिनके घर जाना था, वहां पहुंचा। जाकर परिचय दिया कि मेरे मित्र हैं जमाल, बचपन के दोस्त हैं, बहुत प्यारे आदमी हैं। और फिर अचानक अनजाने मुंह से निकल गया कि रह गए कपड़े, सो कपड़े मेरे हैं। क्योंकि मित्र भी, जिनके घर गए थे, वे भी उसके कपड़ों को देख रहे थे! और भीतर उसके चल रहा था: कोट-पगड़ी। मेरी कोट-पगड़ी, और उन्हीं की वजह से मैं परेशान हो रहा हूं। निकल गया मुंह से कि रह गए कपड़े, कपड़े मेरे हैं!

मित्र भी हैरान हुआ, घर के लोग भी हैरान हुए कि यह क्या पागलपन की बात है। खयाल उसको भी आया बोल जाने के बाद, तब पछताया कि यह तो भूल हो गई। पछताया तो और दबाया अपने मन को। बाहर निकल कर क्षमा मांगने लगा कि क्षमा कर दो, बड़ी गलती हो गई। मित्र ने कहा, मैं तो हैरान हुआ कि तुमसे निकल कैसे गया? उसने कहा कि कुछ नहीं, सिर्फ जबान की चूक हो गई। हालांकि जबान की चूक कभी भी नहीं होती है। भीतर कुछ चलता होता है, तो कभी-कभी बेमौके जबान से निकल जाता है। चूक कभी नहीं होती है। माफ कर दो, भूल हो गई। कैसे यह खयाल आ गया, कुछ समझ में नहीं आता। हालांकि पूरी तरह समझ में आ रहा था कि खयाल कैसे आया है!

दूसरे मित्र के घर गए। अब वह तय करता रहा रास्ते में कि अब चाहे कुछ भी हो जाए, यह नहीं कहना है कि कपड़े मेरे हैं, पक्का कर लेना है अपने मन को। घर के द्वार पर उसने जाकर बिलकुल दृढ़ संकल्प कर लिया कि यह बात नहीं उठानी है कि कपड़े मेरे हैं।

लेकिन उस पागल को पता नहीं कि जितना वह दृढ़ संकल्प कर रहा है इस बात का, वह दृढ़ संकल्प बता रहा है इस बात को कि उतने ही जोर से उसके भीतर यह भावना घर कर रही है कि ये कपड़े मेरे हैं। आखिर दृढ़ संकल्प किया क्यों जाता है?

एक आदमी कहता है कि मैं ब्रह्मचर्य का दृढ़ व्रत लेता हूं! उसका मतलब है कि उसके भीतर कामुकता दृढ़ता से धक्के मार रही है। नहीं तो और कारण क्या है? एक आदमी कहता है कि मैं कसम खाता हूं कि आज से कम खाना खाऊंगा! उसका मतलब यह है कि कसम खानी पड़ रही है, ज्यादा खाने का मन है उसका। और तब अनिवार्यरूपेण द्वंद्व पैदा होता है। जिससे हम लड़ना चाहते हैं, वही हमारी कमजोरी है। और तब द्वंद्व पैदा हो जाना स्वाभाविक है।

वह लड़ता हुआ दरवाजे के भीतर गया, सम्हल-सम्हल कर बोला कि मेरे मित्र हैं। लेकिन जब वह बोल रहा है, तब उसको कोई नहीं देख रहा है, उसके मित्र को ही उस घर के लोग देख रहे हैं। तब फिर उसे खयाल आया--कि मेरा कोट, मेरी पगड़ी। उसने कहा कि दृढ़ता से कसम खाई है, इसकी बात नहीं उठानी है। मेरा क्या है कपड़ा-लत्ता! कपड़े-लत्ते किसी के होते हैं! यह तो सब संसार है, यह तो सब माया है! लेकिन यह सब समझा रहा है। लेकिन असलियत तो बाहर से भीतर, भीतर से बाहर हो रही है। समझाया कि मेरे मित्र हैं, बचपन के दोस्त हैं, बहुत प्यारे आदमी हैं; रह गए कपड़े, कपड़े उन्हीं के हैं, मेरे नहीं हैं। पर घर के लोगों को खयाल आया कि कपड़े उन्हीं के हैं, मेरे नहीं हैं--आज तक ऐसा परिचय कभी देखा नहीं गया था।

बाहर निकल कर क्षमा मांगने लगा कि बड़ी भूल हुई जा रही है, मैं क्या करूं, क्या न करूं, यह क्या हो गया है मुझे। आज तक मेरी जिंदगी में कपड़ों ने इस तरह से मुझे नहीं पकड़ा था। किसी को नहीं पकड़ा है, लेकिन अगर तरकीब उपयोग में करें तो कपड़े पकड़ ले सकते हैं। मित्र ने कहा, मैं जाता नहीं तुम्हारे साथ। पर वह हाथ जोड़ने लगा कि नहीं, ऐसा मत करो। जीवन भर के लिए दुख रह जाएगा कि मैंने क्या दुर्व्यवहार किया। अब मैं कसम खाकर कहता हूं कि कपड़ों की बात ही नहीं उठानी है, मैं बिलकुल भगवान की कसम खाता हूं कि कपड़ों की बात नहीं उठानी है।

और कसम खाने वालों से हमेशा सावधान रहना जरूरी है; क्योंकि जो भी कसम खाता है, उसके भीतर उस कसम से भी मजबूत कोई बैठा है, जिसके खिलाफ वह कसम खा रहा है। और वह जो भीतर बैठा है वह ज्यादा

भीतर है, कसम ऊपर है और बाहर है। कसम चेतन मन से खाई गई है। और जो भीतर बैठा है, वह अचेतन की परतों तक समाया हुआ है। अगर मन के दस हिस्से कर दें, तो कसम एक हिस्से ने खाई है, नौ हिस्सा उलटा भीतर खड़ा हुआ है। ब्रह्मचर्य की कसमें एक हिस्सा खा रहा है मन का और नौ हिस्सा परमात्मा की दुहाई दे रहा है, वह जो परमात्मा ने बनाया है वह उसके लिए ही कहे चला जा रहा है।

गए तीसरे मित्र के घर। अब उसने बिलकुल ही अपनी सांसों तक पर संयम कर रखा है।

संयमी आदमी बड़े खतरनाक होते हैं; क्योंकि उनके भीतर ज्वालामुखी उबल रहा है, और ऊपर से वे संयम साधे हुए हैं। और इस बात को स्मरण रखना कि जिस चीज को साधना पड़ता है--साधने में इतना श्रम लग जाता है कि साधना पूरे वक्त हो नहीं सकती। फिर शिथिल होना पड़ेगा, विश्राम करना पड़ेगा। अगर मैं जोर से मुट्ठी बांध लूं, तो कितनी देर बांधे रख सकता हूं? चौबीस घंटे? जितनी जोर से बांधूंगा, उतनी ही जल्दी थक जाऊंगा और मुट्ठी खुल जाएगी।

जिस चीज में भी श्रम करना पड़ता है, जितना ज्यादा श्रम करना पड़ता है, उतनी जल्दी थकान आ जाती है, शक्ति खतम हो जाती है और उलटा होना शुरू हो जाता है। मुट्ठी बांधी जितनी जोर से, उतनी ही जल्दी मुट्ठी खुल जाएगी। मुट्ठी खुली रखी जा सकती है चौबीस घंटे, लेकिन बांध कर नहीं रखी जा सकती है। जिस काम में श्रम पड़ता है, उस काम को आप जीवन नहीं बना सकते, कभी सहज नहीं हो सकता वह काम। श्रम पड़ेगा, फिर विश्राम का वक्त आएगा ही।

इसलिए जितना सधा हुआ संत होता है उतना ही खतरनाक आदमी होता है; क्योंकि उसका विश्राम का वक्त आएगा, चौबीस घंटे में घंटे भर को उसे शिथिल होना पड़ेगा। उसी बीच दुनिया भर के पाप उसके भीतर खड़े हो जाएंगे। नरक सामने आ जाएगा।

तो उसने बिलकुल ही अपने को सांस-सांस रोक लिया और कहा कि अब कसम खाता हूं कि इन कपड़ों की बात ही नहीं उठानी है।

लेकिन आप सोच लें उसकी हालत! अगर आप थोड़े-बहुत भी धार्मिक आदमी होंगे, तो आपको अपने अनुभव से भी पता चल सकता है कि उसकी क्या हालत हुई होगी। अगर आपने कसम खाई हो, व्रत लिए हों, संकल्प साधे हों, तो आपको भलीभांति पता होगा कि भीतर क्या हालत हो जाती है।

भीतर गया। उसके माथे से पसीना चू रहा है। इतना श्रम पड़ रहा है। मित्र डरा हुआ है उसके पसीने को देख कर कि वह उसकी सब नसें खिंची हुई हैं। वह बोल रहा है एक-एक शब्द--कि मेरे मित्र हैं, बड़े पुराने दोस्त हैं, बहुत अच्छे आदमी हैं। और एक क्षण को वह रुका। जैसे भीतर से कोई जोर का धक्का आया हो और सब बह गया, बाढ़ आ गई और सब बह गया हो। और उसने कहा कि रह गई कपड़ों की बात, तो मैंने कसम खा ली है कि कपड़ों की बात ही नहीं करनी है।

यह जो इस आदमी के साथ हुआ, वह पूरी मनुष्य-जाति के साथ सेक्स के संबंध में हो गया है। सेक्स को आब्सेशन बना दिया, सेक्स को रोग बना दिया, घाव बना दिया और सब विषाक्त कर दिया। सब विषाक्त कर दिया। छोटे-छोटे बच्चों को समझाया जा रहा है कि सेक्स पाप है। लड़कियों को समझाया जा रहा है, लड़कों को समझाया जा रहा है कि सेक्स पाप है। फिर यह लड़की जवान होगी, यह लड़का जवान होगा; इनकी शादियां होंगी और सेक्स की दुनिया शुरू होगी। और इन दोनों के भीतर यह भाव है कि यह पाप है। और फिर कहा जाएगा स्त्री को कि पति को परमात्मा मान। जो पाप में ले जा रहा है उसको परमात्मा कैसे माना जा सकता है? यह कैसे संभव है कि जो पाप में घसीट रहा है वह परमात्मा हो? और उस लड़के को कहा जाएगा, उस युवक को कहा जाएगा कि तेरी पत्नी है, तेरी साथिनी है, तेरी संगी है। लेकिन जो नरक में ले जा रही है! शास्त्रों में लिखा है कि स्त्री नरक का द्वार है। यह नरक का द्वार संगी और साथिनी? यह मेरा आधा अंग--यह नरक की तरफ जाता हुआ आधा अंग मेरा यह--इसके साथ कौन सा सामंजस्य बन सकता है?

सारी दुनिया का दांपत्य जीवन नष्ट किया है इस शिक्षा ने। और जब दंपति का जीवन नष्ट हो जाए तो प्रेम की कोई संभावना नहीं रही। क्योंकि जब पति और पत्नी प्रेम न कर सकें एक-दूसरे को, जो कि अत्यंत सहज और नैसर्गिक प्रेम है, तो फिर कौन और किसको प्रेम कर सकेगा? इस प्रेम को बढ़ाया जा सकता है कि पत्नी और पति का प्रेम इतना विकसित हो, इतना उदात्त हो, इतना ऊंचा बने कि धीरे-धीरे बांध तोड़ दे और दूसरों तक फैल जाए। यह हो सकता है। लेकिन इसको समाप्त ही कर दिया जाए, तोड़ ही दिया जाए, विषाक्त कर दिया जाए, तो फैलेगा क्या? बढ़ेगा क्या?

रामानुज एक गांव में ठहरे थे और एक आदमी ने आकर कहा कि मुझे परमात्मा को पाना है। तो उन्होंने कहा कि तूने कभी किसी को प्रेम किया है? उस आदमी ने कहा, इस झंझट में मैं कभी पड़ा ही नहीं। प्रेम वगैरह की

झंझट में नहीं पड़ा। मुझे तो परमात्मा को खोजना है।

रामानुज ने कहा, तूने कभी झंझट ही नहीं की प्रेम की?

उसने कहा, मैं बिलकुल सच कहता हूँ आपसे।

और बेचारा ठीक ही कह रहा था। क्योंकि धर्म की दुनिया में प्रेम एक डिस-क्वालिफिकेशन है, एक अयोग्यता है। तो उसने सोचा कि अगर मैं कहीं किसी को प्रेम किया है, तो वे कहेंगे, अभी प्रेम-व्रेम छोड़, यह राग-वाग छोड़, पहले इन सबको छोड़ कर आ, तब इधर आना। तो उस बेचारे ने किया भी हो तो वह कहता गया कि मैंने नहीं किया है, नहीं किया है। ऐसा कौन आदमी होगा जिसने थोड़ा-बहुत प्रेम नहीं किया हो?

रामानुज ने तीसरी बार पूछा कि तू कुछ तो बता, थोड़ा-बहुत भी कभी भी किसी को?

उसने कहा, माफ़ करिए, आप क्यों बार-बार वही बात पूछे चले जा रहे हैं? मैंने प्रेम की तरफ़ आंख उठा कर नहीं देखा। मुझे तो परमात्मा को खोजना है।

तो रामानुज ने कहा, मुझे क्षमा कर, तू कहीं और खोज। क्योंकि मेरा अनुभव यह है कि अगर तूने किसी को प्रेम किया हो तो उस प्रेम को फिर इतना बड़ा जरूर किया जा सकता है कि वह परमात्मा तक पहुँच जाए। लेकिन अगर तूने प्रेम ही नहीं किया है तो तेरे पास कुछ है ही नहीं जिसको बड़ा किया जा सके। बीज ही नहीं है तेरे पास जो वृक्ष बन सके। तो तू जा, कहीं और पूछ।

और जब पति और पत्नी में प्रेम न हो, जिस पत्नी ने अपने पति को प्रेम न किया हो और जिस पति ने अपनी पत्नी को प्रेम न किया हो, वे बेटों को, बच्चों को प्रेम कर सकते हैं, तो आप

गलती में हैं। पत्नी उसी मात्रा में बेटे को प्रेम करेगी जिस मात्रा में उसने अपने पति को प्रेम किया है। क्योंकि यह बेटा पति का ही फल है; उसका ही प्रतिफलन है, उसका ही रिफ्लेक्शन है। यह इस बेटे के प्रति जो प्रेम होने वाला है, वह उतना ही होगा, जितना उसने पति को चाहा और प्रेम किया हो। यह पति की ही मूर्ति है जो फिर नई होकर वापस लौट आई है। अगर पति के प्रति प्रेम नहीं है, तो बेटे के प्रति प्रेम सच्चा कभी भी नहीं हो सकता। और अगर बेटे को प्रेम नहीं किया गया--पालना, पोसना और बड़ा कर देना प्रेम नहीं है--तो बेटा मां को कैसे प्रेम कर सकता है? बाप को कैसे प्रेम कर सकता है?

वह जो यूनिट है जीवन का, परिवार, वह विषाक्त हो गया है--सेक्स को दूषित कहने से, कंडेम करने से, निंदित करने से। और परिवार ही फैल कर पूरा जगत है, पूरा विश्व है। और फिर हम कहते हैं कि प्रेम! प्रेम बिलकुल दिखाई नहीं पड़ता! प्रेम कैसे दिखाई पड़ेगा? हालांकि हर आदमी कहता है कि मैं प्रेम करता हूँ। मां कहती है, पत्नी कहती है, बाप कहता है, भाई कहता है, बहन कहती है, मित्र कहते हैं कि हम प्रेम करते हैं। सारी दुनिया में हर आदमी कहता है कि हम प्रेम करते हैं। और दुनिया में इकट्ठा देखो तो प्रेम कहीं दिखाई ही नहीं पड़ता! इतने लोग अगर प्रेम करते हैं तो दुनिया में तो प्रेम की वर्षा हो जानी चाहिए थी; प्रेम के फूल ही फूल खिल जाने चाहिए थे; प्रेम के दीये ही दीये जल जाते, घर-घर प्रेम का दीया होता, तो दुनिया में इकट्ठी इतनी रोशनी होती प्रेम की।

लेकिन वहाँ तो घृणा की रोशनी दिखाई पड़ती है, क्रोध की रोशनी दिखाई पड़ती है, युद्धों की रोशनी दिखाई पड़ती है। प्रेम का तो कोई पता नहीं चलता। झूठी है यह बात! और यह झूठ जब तक हम मानते चले जाएंगे तब तक सत्य की दिशा में खोज भी नहीं हो सकती। कोई किसी को प्रेम नहीं कर रहा है। और जब तक काम के निसर्ग को परिपूर्ण आत्मा से स्वीकृति नहीं मिलती है, तब तक कोई किसी को प्रेम कर भी नहीं सकता है।

मैं आपसे कहना चाहता हूँ कि काम दिव्य है, डिवाइन है। सेक्स की शक्ति परमात्मा की शक्ति है, ईश्वर की शक्ति है। और इसीलिए तो उससे ऊर्जा पैदा होती है और नया जीवन विकसित होता है। वही तो सबसे रहस्यपूर्ण शक्ति है, वही तो सबसे ज्यादा मिस्टीरियस फोर्स है। उससे दुश्मनी छोड़ दें। अगर आप चाहते हैं कि कभी आपके जीवन में प्रेम की वर्षा हो जाए, उससे दुश्मनी छोड़ दें। उसे आनंद से स्वीकार करें। उसकी पवित्रता को स्वीकार करें, उसकी धन्यता को स्वीकार करें। और खोजें उसमें और गहरे, और गहरे--तो आप हैरान हो जाएंगे! जितनी पवित्रता से काम की स्वीकृति होगी, उतना ही काम पवित्र होता चला जाता है; और जितनी अपवित्रता और पाप की दृष्टि से काम से विरोध होगा, काम उतना ही पापपूर्ण और कुरूप होता चला जाता है।

जब कोई अपनी पत्नी के पास ऐसे जाए जैसे कोई मंदिर के पास जाता है, जब कोई पत्नी अपने पति के पास ऐसे जाए जैसे सच में कोई परमात्मा के पास जाता है। क्योंकि जब दो प्रेमी काम से निकट आते हैं, जब वे संभोग से गुजरते हैं, तब सच में ही वे परमात्मा के मंदिर के निकट से गुजर रहे हैं। वहीं परमात्मा काम कर रहा है, उनकी उस निकटता में। वहीं परमात्मा की सृजन शक्ति काम कर रही है।

और मेरी अपनी दृष्टि यह है कि मनुष्य को समाधि का, ध्यान का जो पहला अनुभव मिला हो कभी भी मनुष्य के इतिहास में, तो वह संभोग के क्षण में मिला है और कभी नहीं। संभोग के क्षण में ही पहली बार यह स्मरण

आया है आदमी को कि इतने आनंद की वर्षा हो सकती है। और जिन्होंने सोचा, जिन्होंने मेडिटेट किया, जिन लोगों ने काम के संबंध पर और मैथुन पर चिंतन किया और ध्यान किया, उन्हें यह दिखाई पड़ा कि काम के क्षण में, मैथुन के क्षण में, संभोग के क्षण में मन विचारों से शून्य हो जाता है। एक क्षण को मन के सारे विचार रुक जाते हैं। और वह विचारों का रुक जाना और वह मन का ठहर जाना ही आनंद की वर्षा का कारण होता है।

तब उन्हें सीक्रेट मिल गया, राज मिल गया कि अगर मन को विचारों से मुक्त किया जा सके किसी और विधि से भी, तो भी इतना ही आनंद मिल सकता है। और तब समाधि और योग की सारी व्यवस्थाएं विकसित हुईं, जिनमें ध्यान और सामायिक और मेडिटेशन और प्रेयर, इनकी सारी व्यवस्थाएं विकसित हुईं। इन सबके मूल में संभोग का अनुभव है। और फिर मनुष्य को अनुभव हुआ कि बिना संभोग में जाए भी चित्त शून्य हो सकता है। और जो रस की अनुभूति संभोग में हुई थी, वह बिना संभोग के भी बरस सकती है। फिर संभोग क्षणिक हो सकता है, क्योंकि शक्ति और ऊर्जा का वह निकास और बहाव है। लेकिन ध्यान सतत हो सकता है। तो मैं आपसे कहना चाहता हूं कि एक युगल संभोग के क्षण में जिस आनंद को अनुभव करता है, एक योगी चौबीस घंटे उस आनंद को अनुभव करने लगता है। लेकिन इन दोनों आनंदों में बुनियादी विरोध नहीं है। और इसलिए जिन्होंने कहा कि विषयानंद और ब्रह्मानंद भाई-भाई हैं, उन्होंने जरूर सत्य कहा है। वे सहोदर हैं, एक ही उदर से पैदा हुए हैं, एक ही अनुभव से विकसित हुए हैं। उन्होंने निश्चित ही सत्य कहा है।

तो पहला सूत्र आपसे कहना चाहता हूं: अगर चाहते हैं कि पता चले कि प्रेम-तत्त्व क्या है, तो पहला सूत्र है-- काम की पवित्रता, दिव्यता, उसकी ईश्वरीय अनुभूति की स्वीकृति, उसको परम हृदय से, पूर्ण हृदय से अंगीकार। और आप हैरान हो जाएंगे, जितने परिपूर्ण हृदय से काम की स्वीकृति होगी, उतने ही आप काम से मुक्त होते चले जाएंगे। जितना अस्वीकार होता है, उतने ही हम बंधते हैं। जैसा वह फकीर कपड़ों से बंध गया। जितना स्वीकार होता है, उतने हम मुक्त होते हैं।

अगर परिपूर्ण स्वीकार है, टोटल एक्सेप्टविलिटी है जीवन का जो निसर्ग है उसकी, तो आप पाएंगे कि वह परिपूर्ण स्वीकृति को मैं आस्तिकता कहता हूं, वही आस्तिकता व्यक्ति को मुक्त करती है।

नास्तिक मैं उनको कहता हूं जो जीवन के निसर्ग का अस्वीकार करते हैं, निषेध करते हैं--यह बुरा है, यह पाप है, यह विष है, यह छोड़ो, यह छोड़ो, यह छोड़ो। जो छोड़ने की बातें कर रहे हैं, वे ही नास्तिक हैं।

जीवन जैसा है, उसे स्वीकार करो और जीओ उसकी परिपूर्णता में। वही परिपूर्णता रोज-रोज सीढ़ियां-सीढ़ियां ऊपर उठाती जाती है। वही स्वीकृति मनुष्य को ऊपर ले जाती है। और एक दिन उसके दर्शन होते हैं, जिसका काम मैं पता भी नहीं चलता था। काम अगर कोयला था तो एक दिन हीरा भी प्रकट होता है प्रेम का। तो पहला सूत्र यह है।

दूसरा सूत्र आपसे कहना चाहता हूं। और वह दूसरा सूत्र भी संस्कृति ने और आज तक की सभ्यता ने और धर्मों ने हमारे भीतर मजबूत किया है। दूसरा सूत्र भी स्मरणीय है। क्योंकि पहला सूत्र तो काम की ऊर्जा को प्रेम बना देगा और दूसरा सूत्र द्वार की तरह रोके हुए है उस ऊर्जा को बहने से, वह बह नहीं पाएगी। वह दूसरा सूत्र है मनुष्य का यह भाव कि मैं हूं; ईगो, उसका अहंकार, कि मैं हूं। बुरे लोग तो कहते ही हैं कि मैं हूं। अच्छे लोग और जोर से कहते हैं कि मैं हूं--और मुझे स्वर्ग जाना है, और मोक्ष जाना है, और मुझे यह करना है, और मुझे वह करना है। लेकिन मैं--वह मैं खड़ा हुआ है वहां भीतर।

और जिस आदमी का मैं जितना मजबूत है, उतना ही उस आदमी की सामर्थ्य दूसरे से संयुक्त हो जाने की कम हो जाती है। क्योंकि मैं एक दीवाल है, एक घोषणा है कि मैं हूं। मैं की घोषणा कह देती है: तुम तुम हो, मैं मैं हूं। दोनों के बीच फासला है। फिर मैं कितना ही प्रेम करूं और आपको अपनी छाती से लगा लूं, लेकिन फिर भी हम दो हैं। छातियां कितनी ही निकट आ जाएं, फिर भी बीच में फासला है--मैं मैं हूं, तुम तुम हो। इसीलिए निकटतम अनुभव भी निकट नहीं ला पाते। शरीर पास बैठ जाते हैं, आदमी दूर-दूर बने रह जाते हैं। जब तक भीतर मैं बैठा हुआ है, तब तक दूसरे का भाव नष्ट नहीं होता।

सार्त्र ने कहीं एक अदभुत वचन कहा है। कहा है कि दि अदर इज़ हेला। वह जो दूसरा है, वही नरक है। लेकिन सार्त्र ने यह नहीं कहा कि व्हाय दि अदर इज़ अदर? वह दूसरा दूसरा क्यों है? वह दूसरा दूसरा इसलिए है कि मैं मैं हूं। और जब तक मैं मैं हूं, तब तक दुनिया में हर चीज दूसरी है, अन्य है, भिन्न है। और जब तक भिन्नता है, तब तक प्रेम का अनुभव नहीं हो सकता।

प्रेम है एकात्म का अनुभव।

प्रेम है इस बात का अनुभव कि गिर गई दीवाल और दो ऊर्जाएं मिल गई और संयुक्त हो गई।

प्रेम है इस बात का अनुभव कि एक व्यक्ति और दूसरे व्यक्ति की सारी दीवालें गिर गई और प्राण संयुक्त हुए,

मिले और एक हो गए।

जब यही अनुभव एक व्यक्ति और समस्त के बीच फलित होता है, तो उस अनुभव को मैं कहता हूँ--परमात्मा। और जब दो व्यक्तियों के बीच फलित होता है, तो उसे मैं कहता हूँ--प्रेम।

अगर मेरे और किसी दूसरे व्यक्ति के बीच यह अनुभव फलित हो जाए कि हमारी दीवालें गिर जाएं, हम किसी भीतर के तल पर एक हो जाएं, एक संगीत, एक धारा, एक प्राण, तो यह अनुभव है प्रेम। और अगर ऐसा ही अनुभव मेरे और समस्त के बीच घटित हो जाए कि मैं विलीन हो जाऊं और सब और मैं एक हो जाऊं, तो यह अनुभव है परमात्मा।

इसलिए मैं कहता हूँ: प्रेम है सीढ़ी और परमात्मा है उस यात्रा की अंतिम मंजिल। यह कैसे संभव है कि दूसरा मिट जाए? जब तक मैं न मिटूँ तब तक दूसरा कैसे मिट सकता है? वह दूसरा पैदा किया है मेरे मैं की प्रतिध्वनि ने। जितने जोर से मैं चिल्लाता हूँ कि मैं, उतने ही जोर से वह दूसरा पैदा हो जाता है। वह दूसरी प्रतिध्वनि है, उस तरफ इको हो रही है मेरे मैं की। और यह अहंकार, यह ईगो द्वार पर दीवाल बन कर खड़ी है।

और मैं है क्या? कभी सोचा आपने कि यह मैं है क्या? आपका हाथ है मैं? आपका पैर है? आपका मस्तिष्क है? आपका हृदय है? क्या है आपका मैं?

अगर आप एक क्षण भी शांत होकर भीतर खोजने जाएंगे कि कहां है मैं, कौन सी चीज है मैं? तो आप एकदम हैरान रह जाएंगे--भीतर कोई मैं खोजे से मिलने को नहीं है। जितना गहरा खोजेंगे, उतना ही पाएंगे--भीतर एक सन्नाटा और शून्य है, वहां कोई आई नहीं, वहां कोई मैं नहीं, वहां कोई ईगो नहीं।

एक भिक्षु नागसेन को एक सम्राट मिलिंद ने निमंत्रण दिया था कि तुम आओ दरबार में। तो जो राजदूत गया था निमंत्रण देने, उसने नागसेन को कहा कि भिक्षु नागसेन, आपको बुलाया है सम्राट मिलिंद ने। मैं निमंत्रण देने आया हूँ। तो वह नागसेन कहने लगा, मैं चलूंगा जरूर; लेकिन एक बात विनय कर दूँ, पहले ही कह दूँ कि भिक्षु नागसेन जैसा कोई है नहीं। यह केवल एक नाम है, कामचलाऊ नाम है। आप कहते हैं तो मैं चलूंगा जरूर, लेकिन ऐसा कोई आदमी कहीं है नहीं।

राजदूत ने जाकर सम्राट को कह दिया कि बड़ा अजीब आदमी है वह। वह कहने लगा कि मैं चलूंगा जरूर, लेकिन ध्यान रहे कि भिक्षु नागसेन जैसा कहीं कोई है नहीं, यह केवल एक कामचलाऊ नाम है। सम्राट ने कहा, अजीब सी बात है, जब वह कहता है, मैं चलूंगा। आएगा वह!

वह आया भी रथ पर बैठ कर। सम्राट ने द्वार पर स्वागत किया और कहा, भिक्षु नागसेन, हम स्वागत करते हैं आपका। वह हंसने लगा। उसने कहा कि स्वागत स्वीकार करता हूँ, लेकिन स्मरण रहे, भिक्षु नागसेन जैसा कोई है नहीं।

सम्राट कहने लगा, बड़ी पहेली की बातें करते हैं आप। अगर आप नहीं हैं तो कौन है? कौन आया है यहां? कौन स्वीकार कर रहा है स्वागत? कौन दे रहा है उत्तर?

नागसेन मुड़ा और उसने कहा कि देखते हैं, सम्राट मिलिंद, यह रथ खड़ा है जिस पर मैं आया। सम्राट ने कहा, हां, यह रथ है। तो भिक्षु नागसेन पूछने लगा, घोड़ों को निकाल कर अलग कर लिया जाए। घोड़े अलग कर लिए गए। और उसने पूछा सम्राट से, ये घोड़े रथ हैं?

सम्राट ने कहा, घोड़े कैसे रथ हो सकते हैं? घोड़े अलग कर दिए गए। सामने के डंडे जिनसे घोड़े बंधे थे, खिंचवा लिए गए। और उसने पूछा कि ये रथ हैं?

सिर्फ दो डंडे कैसे रथ हो सकते हैं? डंडे अलग कर दिए गए। चाक निकलवा लिए और कहा, ये रथ हैं?

सम्राट ने कहा, ये चाक हैं, ये रथ नहीं हैं।

और एक-एक अंग रथ का निकलता चला गया। और एक-एक अंग पर सम्राट को कहना पड़ा कि नहीं, ये रथ नहीं हैं। फिर आखिर पीछे शून्य बच गया, वहां कुछ भी न बचा। भिक्षु नागसेन पूछने लगा, रथ कहां है अब? रथ कहां है अब? और जितनी चीजें मैंने निकालीं, तुमने कहा, ये भी रथ नहीं! ये भी रथ नहीं! ये भी रथ नहीं! अब रथ कहां है?

तो सम्राट चौंक कर खड़ा रह गया--रथ पीछे बचा भी नहीं था और जो चीजें निकल गई थीं उनमें कोई रथ था भी नहीं।

तो वह भिक्षु कहने लगा, समझे आप? रथ एक जोड़ था। रथ कुछ चीजों का संग्रह मात्र था। रथ का अपना होना नहीं है कोई, ईगो नहीं है कोई। रथ एक जोड़ है।

आप खोजें--कहां है आपका मैं? और आप पाएंगे कि अनंत शक्तियों के एक जोड़ हैं; मैं कहीं भी नहीं है। और एक-एक अंग आप सोचते चले जाएं तो एक-एक अंग समाप्त होता चला जाता है, फिर पीछे शून्य रह जाता है।

उसी शून्य से प्रेम का जन्म होता है, क्योंकि वह शून्य आप नहीं हैं, वह शून्य परमात्मा है।

एक गांव में एक आदमी ने मछलियों की एक दुकान खोली थी। बड़ी दुकान थी, उस गांव में पहली दुकान थी। तो उसने एक बहुत खूबसूरत तख्ती बनवाई और उस पर लिखाया--फ्रेश फिश सोल्ड हियर--यहां ताजी मछलियां बेची जाती हैं।

पहले ही दिन दुकान खुली और एक आदमी आया और कहने लगा, फ्रेश फिश सोल्ड हियर? ताजी मछलियां? कहीं बासी मछलियां भी बेची जाती हैं? ताजी लिखने की क्या जरूरत?

दुकानदार ने सोचा कि बात तो ठीक है। इससे और व्यर्थ बासे का भी खयाल पैदा होता है। उसने फ्रेश अलग कर दिया, ताजा अलग कर दिया। तख्ती रह गई--फिश सोल्ड हियर--मछलियां यहां बेची जाती हैं।

दूसरे दिन एक बूढ़ी औरत आई और उसने कहा कि मछलियां यहां बेची जाती हैं--सोल्ड हियर? कहीं और कहीं भी बेचते हो?

उस आदमी ने कहा कि यह हियर बिलकुल फिजूल है। उसने तख्ती पर एक शब्द और अलग कर दिया, रह गया--फिश सोल्ड।

तीसरे दिन एक आदमी आया और वह कहने लगा, फिश सोल्ड? मछलियां बेची जाती हैं? मुफ्त भी देते हो क्या?

उस आदमी ने कहा, यह सोल्ड भी बेकार है। उस सोल्ड को भी अलग कर दिया। अब रह गई वहां तख्ती--फिश।

एक बुढ़ा आया और कहने लगा, फिश? अंधे को भी मील भर दूर से बास मिल जाती है। यह तख्ती काहे के लिए लटकाई हुई है यहां?

फिश भी चली गई। खाली तख्ती रह गई वहां।

और एक आदमी आया और उसने कहा, यह तख्ती किसलिए लगाई है? इससे दुकान पर आड़ पड़ती है।

वह तख्ती भी चली गई, वहां कुछ भी नहीं रह गया। इलीमिनेशन होता गया। एक-एक चीज हटती चली गई। पीछे जो शेष रह गया--शून्य।

उस शून्य से प्रेम का जन्म होता है, क्योंकि उस शून्य में दूसरे के शून्य से मिलने की क्षमता है। सिर्फ शून्य ही शून्य से मिल सकता है, और कोई नहीं। दो शून्य मिल सकते हैं, दो व्यक्ति नहीं। दो इंडिविजुअल नहीं मिल सकते; दो वैक्यूम, दो एंटीनेस मिल सकते हैं, क्योंकि बाधा अब कोई भी नहीं है। शून्य की कोई दीवाल नहीं होती, और हर चीज की दीवाल होती है।

तो दूसरी बात स्मरणीय है: व्यक्ति जब मिटता है, नहीं रह जाता; पाता है कि हूं ही नहीं; जो है वह मैं नहीं हूं, जो है वह सब है; तब द्वार गिरता है, दीवाल टूटती है। और तब वह गंगा बहती है जो भीतर छिपी है और तैयार है। वह शून्य की प्रतीक्षा कर रही है कि कोई शून्य हो जाए तो उससे बह उठे।

हम एक कुआं खोदते हैं। पानी भीतर है; पानी कहीं से लाना नहीं होता। लेकिन बीच में मिट्टी-पत्थर पड़े हैं, उनको निकाल कर बाहर कर देते हैं। करते क्या हैं हम? करते हैं हम--एक शून्य बनाते हैं, एक खाली जगह बनाते हैं, एक एंटीनेस बनाते हैं। कुआं खोदने का मतलब है खाली जगह बनाना। ताकि खाली जगह में, जो भीतर छिपा हुआ पानी है, वह प्रकट होने के लिए जगह पा जाए, स्पेस पा जाए। वह भीतर है, उसको जगह चाहिए प्रकट होने को। जगह नहीं मिल रही है; भरा हुआ है कुआं मिट्टी-पत्थर से। मिट्टी-पत्थर हमने अलग कर दिए, वह पानी उबल कर बाहर आ गया।

आदमी के भीतर प्रेम भरा हुआ है। स्पेस चाहिए, जगह चाहिए, जहां वह प्रकट हो जाए।

और हम भरे हुए हैं अपने में से। हर आदमी चिल्लाए चला जा रहा है--मैं। और स्मरण रखें, जब तक आपकी आत्मा चिल्लाती है मैं, तब तक आप मिट्टी-पत्थर से भरे हुए कुएं हैं। आपके कुएं में प्रेम के झरने नहीं फूटेंगे, नहीं फूट सकते हैं।

मैंने सुना है, एक बहुत पुराना वृक्ष था। आकाश में सम्राट की तरह उसके हाथ फैले हुए थे। उस पर फूल आते थे तो दूर-दूर से पक्षी सुगंध लेने आते। उस पर फल लगते थे तो तितलियां उड़तीं। उसकी छाया, उसके फैले हाथ, हवाओं में उसका वह खड़ा रूप आकाश में बड़ा सुंदर था। एक छोटा बच्चा उसकी छाया में रोज खेलने आता था। और उस बड़े वृक्ष को उस छोटे बच्चे से प्रेम हो गया। बड़ों को छोटों से प्रेम हो सकता है, अगर बड़ों को पता न हो कि हम बड़े हैं। वृक्ष को कोई पता नहीं था कि मैं बड़ा हूं--यह पता सिर्फ आदमी को होता है--इसलिए उसका प्रेम हो गया।

अहंकार हमेशा अपने से बड़ों को प्रेम करने की कोशिश करता है। अहंकार हमेशा अपने से बड़ों से संबंध जोड़ता

है। प्रेम के लिए कोई बड़ा-छोटा नहीं। जो आ जाए, उसी से संबंध जुड़ जाता है।

वह एक छोटा सा बच्चा खेलता आता था उस वृक्ष के पास; उस वृक्ष का उससे प्रेम हो गया। लेकिन वृक्ष की शाखाएं ऊपर थीं, बच्चा छोटा था, तो वृक्ष अपनी शाखाएं उसके लिए नीचे झुकाता, ताकि वह फल तोड़ सके, फूल तोड़ सके।

प्रेम हमेशा झुकने को राजी है, अहंकार कभी भी झुकने को राजी नहीं है। अहंकार के पास जाएंगे तो अहंकार के हाथ और ऊपर उठ जाएंगे, ताकि आप उन्हें छू न सके। क्योंकि जिसे छू लिया जाए वह छोटा आदमी है; जिसे न छुआ जा सके, दूर सिंहासन पर दिल्ली में हो, वह आदमी बड़ा आदमी है।

वह वृक्ष की शाखाएं नीचे झुक आतीं जब वह बच्चा खेलता हुआ आता! और जब बच्चा उसके फूल तोड़ लेता, तो वह वृक्ष बहुत खुश होता। उसके प्राण आनंद से भर जाते।

प्रेम जब भी कुछ दे पाता है, तब खुश हो जाता है।

अहंकार जब भी कुछ ले पाता है, तभी खुश होता है।

फिर वह बच्चा बड़ा होने लगा। वह कभी उसकी छाया में सोता, कभी उसके फल खाता, कभी उसके फूलों का ताज बना कर पहनता और जंगल का सम्राट हो जाता।

प्रेम के फूल जिसके पास भी बरसते हैं, वही सम्राट हो जाता है। और जहां भी अहंकार घिरता है, वहीं सब अंधकार हो जाता है, आदमी दीन और दरिद्र हो जाता है।

वह लड़का फूलों का ताज पहनता और नाचता, और वृक्ष बहुत खुश होता, उसके प्राण आनंद से भर जाते। हवाएं सनसनातीं और वह गीत गाता।

फिर लड़का और बड़ा हुआ। वह वृक्ष के ऊपर भी चढ़ने लगा, उसकी शाखाओं से झूलने भी लगा। वह उसकी शाखाओं पर विश्राम भी करता, और वृक्ष बहुत आनंदित होता।

प्रेम आनंदित होता है, जब प्रेम किसी के लिए छाया बन जाता है।

अहंकार आनंदित होता है, जब किसी की छाया छीन लेता है।

लेकिन लड़का बड़ा होता चला गया, दिन बढ़ते चले गए। जब लड़का बड़ा हो गया तो उसे और दूसरे काम भी दुनिया में आ गए, महत्वाकांक्षाएं आ गईं। उसे परीक्षाएं पास करनी थीं, उसे मित्रों को जीतना था। वह फिर कभी-कभी आता, कभी नहीं भी आता, लेकिन वृक्ष उसकी प्रतीक्षा करता कि वह आए, वह आए। उसके सारे प्राण पुकारते कि आओ, आओ!

प्रेम निरंतर प्रतीक्षा करता है कि आओ, आओ! प्रेम एक प्रतीक्षा है, एक अवेटिंग है।

लेकिन वह कभी आता, कभी नहीं आता, तो वृक्ष उदास हो जाता।

प्रेम की एक ही उदासी है--जब वह बांट नहीं पाता, तो उदास हो जाता है। जब वह दे नहीं पाता, तो उदास हो जाता है। और प्रेम की एक ही धन्यता है कि जब वह बांट देता है, लुटा देता है, तो वह आनंदित हो जाता है।

फिर लड़का और बड़ा होता चला गया और वृक्ष के पास आने के दिन कम होते चले गए। जो आदमी जितना बड़ा होता चला जाता है महत्वाकांक्षा के जगत में, प्रेम के निकट आने की सुविधा उतनी ही कम होती चली जाती है। उस लड़के की एबीशन, महत्वाकांक्षा बढ़ रही थी। कहां वृक्ष! कहां जाना!

फिर एक दिन वहां से निकलता था तो वृक्ष ने उसे कहा, सुनो! हवाओं में उसकी आवाज गूंजी कि सुनो, तुम आते नहीं, मैं प्रतीक्षा करता हूं! मैं तुम्हारे लिए प्रतीक्षा करता हूं, राह देखता हूं, बाट जोहता हूं!

उस लड़के ने कहा, क्या है तुम्हारे पास जो मैं आऊं? मुझे रुपये चाहिए!

हमेशा अहंकार पूछता है कि क्या है तुम्हारे पास जो मैं आऊं? अहंकार मांगता है कि कुछ हो तो मैं आऊं। न कुछ हो तो आने की कोई जरूरत नहीं। अहंकार एक प्रयोजन है, एक परपज़ है। प्रयोजन पूरा होता हो तो मैं आऊं! अगर कोई प्रयोजन न हो तो आने की जरूरत क्या है!

और प्रेम निष्प्रयोजन है। प्रेम का कोई प्रयोजन नहीं। प्रेम अपने में ही अपना प्रयोजन है, वह बिलकुल परपज़लेस है।

वृक्ष तो चौंक गया। उसने कहा कि तुम तभी आओगे जब मैं कुछ तुम्हें दे सकूँ? मैं तुम्हें सब दे सकता हूं। क्योंकि प्रेम कुछ भी रोकना नहीं चाहता। जो रोक ले वह प्रेम नहीं है। अहंकार रोकता है। प्रेम तो बेशर्त दे देता है। लेकिन रुपये मेरे पास नहीं हैं। ये रुपये तो सिर्फ आदमी की ईजाद है, वृक्षों ने यह बीमारी नहीं पाली है।

उस वृक्ष ने कहा, इसीलिए तो हम इतने आनंदित होते हैं, इतने फूल खिलते हैं, इतने फल लगते हैं, इतनी बड़ी छाया होती है; हम इतना नाचते हैं आकाश में, हम इतने गीत गाते हैं; पक्षी हम पर आते हैं और संगीत का कलरव करते हैं; क्योंकि हमारे पास रुपये नहीं हैं। जिस दिन हमारे पास भी रुपये हो जाएंगे, हम भी आदमी जैसे दीन-

हीन मंदिरों में बैठ कर सुनेंगे कि शांति कैसे पाई जाए, प्रेम कैसे पाया जाए। नहीं-नहीं, हमारे पास रुपये नहीं हैं। तो उसने कहा, फिर मैं क्या आऊँ तुम्हारे पास! जहाँ रुपये हैं, मुझे वहाँ जाना पड़ेगा। मुझे रुपयों की जरूरत है। अहंकार रुपया मांगता है, क्योंकि रुपया शक्ति है। अहंकार शक्ति मांगता है।

उस वृक्ष ने बहुत सोचा, फिर उसे खयाल आया--तो तुम एक काम करो, मेरे सारे फलों को तोड़ कर ले जाओ और बेच दो तो शायद रुपये मिल जाएं।

और उस लड़के को भी खयाल आया। वह चढ़ा और उसने सारे फल तोड़ डाले। कच्चे भी गिरा डाले। शाखाएं भी टूटीं, पत्ते भी टूटे। लेकिन वृक्ष बहुत खुश हुआ, बहुत आनंदित हुआ।

टूट कर भी प्रेम आनंदित होता है।

अहंकार पाकर भी आनंदित नहीं होता, पाकर भी दुखी होता है।

और उस लड़के ने तो धन्यवाद भी नहीं दिया पीछे लौट कर।

लेकिन उस वृक्ष को पता भी नहीं चला। उसे तो धन्यवाद मिल गया इसी में कि उसने उसके प्रेम को स्वीकार किया और उसके फलों को ले गया और बाजार में बेचा।

लेकिन फिर वह बहुत दिनों तक नहीं आया। उसके पास रुपये थे और रुपयों से रुपये पैदा करने की वह कोशिश में लग गया था। वह भूल गया। वर्ष बीत गए। और वृक्ष उदास है और उसके प्राणों में रस बह रहा है कि वह आए उसका प्रेमी और उसके रस को ले जाए। जैसे किसी माँ के स्तन में दूध भरा हो और उसका बेटा खो गया हो, और उसके सारे प्राण तड़प रहे हों कि उसका बेटा कहाँ है जिसे वह खोजे, जो उसे हलका कर दे, निर्भर कर दे। ऐसे उस वृक्ष के प्राण पीड़ित होने लगे कि वह आए, आए, आए! उसकी सारी आवाज यही गूंजने लगी कि आओ!

बहुत दिनों के बाद वह आया। अब वह लड़का तो प्रौढ़ हो गया था। वृक्ष ने उससे कहा कि आओ मेरे पास! मेरे आलिंगन में आओ!

उसने कहा, छोड़ो यह बकवास। ये बचपन की बातें हैं।

अहंकार प्रेम को पागलपन समझता है, बचपन की बातें समझता है।

उस वृक्ष ने कहा, आओ, मेरी डालियों से झूलो! नाचो!

उसने कहा, छोड़ो ये फिजूल की बातें। मुझे एक मकान बनाना है। मकान दे सकते हो तुम?

वृक्ष ने कहा, मकान? हम तो बिना मकान के ही रहते हैं। मकान में तो सिर्फ आदमी रहता है। दुनिया में और कोई मकान में नहीं रहता, सिर्फ आदमी रहता है। सो देखते हो आदमी की हालत--मकान में रहने वाले आदमी की हालत? उसके मकान जितने बड़े होते जाते हैं, आदमी उतना छोटा होता चला जाता है। हम तो बिना मकान के रहते हैं। लेकिन एक बात हो सकती है कि तुम मेरी शाखाओं को काट कर ले जाओ तो शायद तुम मकान बना लो।

और वह प्रौढ़ कुल्हाड़ी लेकर आ गया और उसने उस वृक्ष की शाखाएं काट डालीं! वृक्ष एक ठूठ रह गया, नंगा। लेकिन वृक्ष बहुत आनंदित था।

प्रेम सदा आनंदित है, चाहे उसके अंग भी कट जाएं। लेकिन कोई ले जाए, कोई ले जाए, कोई बांट ले, कोई सम्मिलित हो जाए, साझीदार हो जाए।

और उस लड़के ने तो पीछे लौट कर भी नहीं देखा! उसने मकान बना लिया।

और वक्त गुजरता गया। वह ठूठ राह देखता, वह चिल्लाना चाहता, लेकिन अब उसके पास पत्ते भी नहीं थे, शाखाएं भी नहीं थीं। हवाएं आतीं और वह बोल भी न पाता, बुला भी न पाता। लेकिन उसके प्राणों में तो एक ही गूंज थी--कि आओ! आओ!

और बहुत दिन बीत गए। तब वह बूढ़ा आदमी हो गया था वह बच्चा। वह निकल रहा था पास से। वृक्ष के पास आकर खड़ा हो गया। तो वृक्ष ने पूछा--क्या कर सकता हूँ और मैं तुम्हारे लिए? तुम बहुत दिनों बाद आए!

उसने कहा, तुम क्या कर सकोगे? मुझे दूर देश जाना है धन कमाने के लिए। मुझे एक नाव की जरूरत है!

तो उसने कहा, तुम मुझे और काट लो तो मेरी इस पींड से नाव बन जाएगी। और मैं बहुत धन्य होऊंगा कि मैं तुम्हारी नाव बन सकूँ और तुम्हें दूर देश ले जा सकूँ। लेकिन तुम जल्दी लौट आना और सकुशल लौट आना। मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करूंगा।

और उसने आरे से उस वृक्ष को काट डाला। तब वह एक छोटा सा ठूठ रह गया। और वह दूर यात्रा पर निकल गया। और वह ठूठ भी प्रतीक्षा करता रहा कि वह आए, आए। लेकिन अब उसके पास कुछ भी नहीं है देने को। शायद वह नहीं आएगा, क्योंकि अहंकार वहीं आता है जहाँ कुछ पाने को है, अहंकार वहाँ नहीं जाता जहाँ कुछ पाने को नहीं है।

मैं उस ठूठ के पास एक रात मेहमान हुआ था, तो वह ठूठ मुझसे बोला कि वह मेरा मित्र अब तक नहीं आया!

और मुझे बड़ी पीड़ा होती है कि कहीं नाव डूब न गई हो, कहीं वह भटक न गया हो, कहीं किसी दूर किनारे पर विदेश में कहीं भूल न गया हो, कहीं वह डूब न गया हो, कहीं वह समाप्त न हो गया हो! एक खबर भर कोई मुझे ला दे--अब मैं मरने के करीब हूं--एक खबर भर आ जाए कि वह सकुशल है, फिर कोई बात नहीं! फिर सब ठीक है! अब तो मेरे पास देने को कुछ भी नहीं है, इसलिए बुलाऊं भी तो शायद वह नहीं आएगा, क्योंकि वह लेने की ही भाषा समझता है।

अहंकार लेने की भाषा समझता है।

प्रेम देने की भाषा है।

इससे ज्यादा और कुछ मैं नहीं कहूंगा।

जीवन एक ऐसा वृक्ष बन जाए और उस वृक्ष की शाखाएं अनंत तक फैल जाएं, सब उसकी छाया में हों और सब तक उसकी बांहें फैल जाएं, तो पता चल सकता है कि प्रेम क्या है।

प्रेम का कोई शास्त्र नहीं है, न कोई परिभाषा है, न प्रेम का कोई सिद्धांत है।

तो मैं बहुत हैरानी में था कि क्या कहूंगा आपसे कि प्रेम क्या है। वह तो बताना मुश्किल है। आकर बैठ सकता हूं--अगर मेरी आंखों में दिखाई पड़ जाए तो दिखाई पड़ सकता है, अगर मेरे हाथों में दिखाई पड़ जाए तो दिखाई पड़ सकता है। मैं कह सकता हूं--यह है प्रेम।

लेकिन प्रेम क्या है, अगर मेरी आंख में न दिखाई पड़े, मेरे हाथ में न दिखाई पड़े, तो शब्दों से बिलकुल भी दिखाई नहीं पड़ सकता है कि प्रेम क्या है!

मेरी बातों को इतने प्रेम और शांति से सुना, उससे बहुत-बहुत अनुगृहीत हूं। और अंत में सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

मेरे प्रिय आत्मन्!

एक सुबह, अभी सूरज भी निकला नहीं था और एक मांझी नदी के किनारे पहुंच गया था। उसका पैर किसी चीज से टकरा गया। झुक कर उसने देखा, पत्थरों से भरा हुआ एक झोला पड़ा था। उसने अपना जाल किनारे पर रख दिया, वह सुबह सूरज के उगने की प्रतीक्षा करने लगा। सूरज उग आए, वह अपना जाल फेंके और मछलियां पकड़े। वह जो झोला उसे पड़ा हुआ मिल गया था, जिसमें पत्थर थे, वह एक-एक पत्थर निकाल कर शांत नदी में फेंकने लगा। सुबह के सन्नाटे में उन पत्थरों के गिरने की छपाक की आवाज सुनता, फिर दूसरा पत्थर फेंकता।

धीरे-धीरे सुबह का सूरज निकला, रोशनी हुई। तब तक उसने झोले के सारे पत्थर फेंक दिए थे, सिर्फ एक पत्थर उसके हाथ में रह गया था। सूरज की रोशनी में देखते से ही जैसे उसके हृदय की धड़कन बंद हो गई, सांस रुक गई। उसने जिन्हें पत्थर समझ कर फेंक दिया था, वे हीरे-जवाहरात थे! लेकिन अब तो अंतिम हाथ में बचा था टुकड़ा और वह पूरे झोले को फेंक चुका था। वह रोने लगा, चिल्लाने लगा। इतनी संपदा उसे मिल गई थी कि अनंत जन्मों के लिए काफी थी, लेकिन अंधेरे में, अनजान, अपरिचित, उसने उस सारी संपदा को पत्थर समझ कर फेंक दिया था।

लेकिन फिर भी वह मछुआ सौभाग्यशाली था, क्योंकि अंतिम पत्थर फेंकने के पहले सूरज निकल आया था और उसे दिखाई पड़ गया था कि उसके हाथ में हीरा है। साधारणतः सभी लोग इतने सौभाग्यशाली नहीं होते हैं। जिंदगी बीत जाती है, सूरज नहीं निकलता, सुबह नहीं होती, रोशनी नहीं आती और सारे जीवन के हीरे हम पत्थर समझ कर फेंक चुके होते हैं।

जीवन एक बड़ी संपदा है, लेकिन आदमी सिवाय उसे फेंकने और गंवाने के कुछ भी नहीं करता है! जीवन क्या है, यह भी पता नहीं चल पाता और हम उसे फेंक देते हैं! जीवन में क्या छिपा था--कौन से राज, कौन सा रहस्य, कौन सा स्वर्ग, कौन सा आनंद, कौन सी मुक्ति--उस सबका कोई भी अनुभव नहीं हो पाता और जीवन हमारे हाथ से रिक्त हो जाता है!

इन आने वाले तीन दिनों में जीवन की संपदा पर ये थोड़ी सी बातें मुझे कहनी हैं। लेकिन जो लोग जीवन की संपदा को पत्थर मान कर बैठ गए हैं, वे कभी आंख खोल कर देख पाएंगे कि जिन्हें उन्होंने पत्थर समझा है वे हीरे-माणिक हैं, यह बहुत कठिन है। और जिन लोगों ने जीवन को पत्थर मान कर फेंकने में ही समय गंवा दिया है, अगर आज उनसे कोई कहने जाए कि जिन्हें तुम पत्थर समझ कर फेंक रहे थे वहां हीरे-मोती भी थे, तो वे नाराज होंगे, क्रोध से भर जाएंगे। इसलिए नहीं कि जो बात कही गई वह गलत है, बल्कि इसलिए कि यह बात इस बात का स्मरण दिलाती है कि उन्होंने बहुत सी संपदा फेंक दी है।

लेकिन चाहे हमने कितनी ही संपदा फेंक दी हो, अगर एक क्षण भी जीवन का शेष है तो फिर भी हम कुछ बचा सकते हैं और कुछ जान सकते हैं और कुछ पा सकते हैं। जीवन की खोज में कभी भी इतनी देर नहीं होती कि कोई आदमी निराश होने का कारण पाए।

लेकिन हमने यह मान ही लिया है--अंधेरे में, अज्ञान में--कि जीवन में कुछ भी नहीं है सिवाय पत्थरों के! जो लोग ऐसा मान कर बैठ गए हैं, उन्होंने खोज के पहले ही हार स्वीकार कर ली है।

मैं इस हार के संबंध में, इस निराशा के संबंध में, इस मान ली गई पराजय के संबंध में सबसे पहली चेतावनी यह देना चाहता हूं कि जीवन मिट्टी और पत्थर नहीं है। जीवन में बहुत कुछ है। जीवन के मिट्टी-पत्थर के बीच भी बहुत कुछ छिपा है। अगर खोजने वाली आंखें हों, तो जीवन से वह सीढ़ी भी निकलती है जो परमात्मा तक पहुंचती है।

इस शरीर में भी--जो देखने पर हड्डी, मांस और चमड़ी से ज्यादा नहीं है--वह छिपा है जिसका हड्डी, मांस और चमड़ी से कोई भी संबंध नहीं है। इस साधारण सी देह में भी--जो आज जन्मती है, कल मर जाती है और मिट्टी हो जाती है--उसका वास है जो अमृत है, जो कभी जन्मता नहीं और कभी समाप्त भी नहीं होता है। रूप के भीतर अरूप छिपा है; और दृश्य के भीतर अदृश्य का वास है; और मृत्यु के कुहासे में अमृत की ज्योति छिपी हुई है। मृत्यु के धुएं में अमृत की लौ भी छिपी हुई है, वह फ्लेम, वह ज्योति भी छिपी हुई है, जिसकी कोई मृत्यु नहीं है।

लेकिन हम धुएं को देख कर ही वापस लौट आते हैं और ज्योति को नहीं खोज पाते हैं। या जो लोग थोड़ी हिम्मत करते हैं, वे धुएं में ही खो जाते हैं और ज्योति तक नहीं पहुंच पाते हैं। यह यात्रा कैसे हो सकती है कि हम धुएं के भीतर छिपी हुई ज्योति को जान सकें, शरीर के भीतर छिपी हुई आत्मा को पहचान सकें, प्रकृति के भीतर छिपे हुए परमात्मा के दर्शन कर सकें? यह कैसे हो सकता है? उस संबंध में ही तीन चरणों में मुझे बात करनी है।

पहली बात, हमने जीवन के संबंध में ऐसे दृष्टिकोण बना लिए हैं, हमने जीवन के संबंध में ऐसी धारणाएं बना ली हैं, हमने जीवन के संबंध में ऐसा फलसफा खड़ा कर रखा है कि उस दृष्टिकोण और धारणा के कारण ही जीवन के सत्य को देखने से हम वंचित रह जाते हैं। हमने मान ही लिया है कि जीवन क्या है--बिना खोजे, बिना पहचाने, बिना जिज्ञासा किए। हमने जीवन के संबंध में कोई निश्चित बात ही समझ रखी है।

हजारों वर्षों से हमें एक ही बात मंत्र की तरह पढ़ाई जा रही है कि जीवन असार है, जीवन व्यर्थ है, जीवन दुख है। सम्मोहन की तरह हमारे प्राणों पर यह मंत्र दोहराया गया है कि जीवन व्यर्थ है, जीवन असार है, जीवन दुख है, जीवन छोड़ देने योग्य है। यह बात, सुन-सुन कर धीरे-धीरे हमारे प्राणों में पत्थर की तरह मजबूत होकर बैठ गई है। इस बात के कारण जीवन असार दिखाई पड़ने लगा है, जीवन दुख दिखाई पड़ने लगा है। इस बात के कारण जीवन ने सारा आनंद, सारा प्रेम, सारा सौंदर्य खो दिया है। मनुष्य एक कुरूपता बन गया है। मनुष्य एक दुख का अड्डा बन गया है।

और जब हमने यह मान ही लिया है कि जीवन व्यर्थ है, असार है, तो उसे सार्थक बनाने की सारी चेष्टा भी बंद हो गई हो तो आश्चर्य नहीं है। अगर हमने यह मान ही लिया है कि जीवन एक कुरूपता है, तो उसके भीतर सौंदर्य की खोज कैसे हो सकती है? और अगर हमने यह मान ही लिया है कि जीवन सिर्फ छोड़ देने योग्य है, तो जिसे छोड़ ही देना है, उसे सजाना, उसे खोजना, उसे निखारना, इसकी कोई भी जरूरत नहीं है।

हम जीवन के साथ वैसा व्यवहार कर रहे हैं, जैसा कोई आदमी स्टेशन पर विश्रामालय के साथ व्यवहार करता है, वेटिंग रूम के साथ व्यवहार करता है। वह जानता है कि क्षण भर हम इस वेटिंग रूम में ठहरे हुए हैं, क्षण भर बाद छोड़ देना है, इस वेटिंग रूम से प्रयोजन क्या है? अर्थ क्या है? वह वहां मूंगफली के छिलके भी डालता है, पान भी थूक देता है, गंदा भी करता है और फिर भी सोचता है, मुझे क्या प्रयोजन है? क्षण भर बाद मुझे चले जाना है।

जीवन के संबंध में भी हम इसी तरह का व्यवहार कर रहे हैं। जहां से हमें क्षण भर बाद चले जाना है, वहां सुंदर और सत्य की खोज और निर्माण करने की जरूरत क्या है?

लेकिन मैं आपसे कहना चाहता हूं, जिंदगी जरूर हमें छोड़ कर चले जाना है, लेकिन जो असली जिंदगी है, उसे हमें कभी भी छोड़ने का कोई उपाय नहीं है। हम यह घर छोड़ देंगे, यह स्थान छोड़ देंगे; लेकिन जो जिंदगी का सत्य है, वह सदा हमारे साथ होगा, वह हम स्वयं हैं। स्थान बदल जाएंगे, मकान बदल जाएंगे, लेकिन जिंदगी? जिंदगी हमारे साथ होगी। उसके बदलने का कोई उपाय नहीं।

और सवाल यह नहीं है कि जहां हम ठहरे थे उसे हमने सुंदर किया था, जहां हम रुके थे वहां हमने प्रीतिकर हवा पैदा की थी, जहां हम दो क्षण को ठहरे थे वहां हमने आनंद का गीत गाया था। सवाल यह नहीं है कि वहां आनंद का गीत हमने गाया था। सवाल यह है कि जिसने आनंद का गीत गाया था, उसने भीतर आनंद की और बड़ी संभावनाओं के द्वार खोल लिए; जिसने उस मकान को सुंदर बनाया था, उसने और बड़े सौंदर्य को पाने की क्षमता उपलब्ध कर ली है; जिसने दो क्षण उस वेटिंग रूम में भी प्रेम के बिताए थे, उसने और बड़े प्रेम को पाने की पात्रता अर्जित कर ली है।

हम जो करते हैं, उसी से हम निर्मित होते हैं। हमारा कृत्य अंततः हमें निर्मित करता है, हमें बनाता है। हम जो करते हैं, वही धीरे-धीरे हमारे प्राण और हमारी आत्मा का निर्माता हो जाता है। जीवन के साथ हम क्या कर रहे हैं, इस पर निर्भर करेगा कि हम कैसे निर्मित हो रहे हैं। जीवन के साथ हमारा क्या व्यवहार है, इस पर निर्भर होगा कि हमारी आत्मा किन दिशाओं में यात्रा करेगी, किन मार्गों पर जाएगी, किन नये जगत्‌ओं की खोज करेगी।

जीवन के साथ हमारा व्यवहार हमें निर्मित करता है--यह अगर स्मरण हो, तो शायद जीवन को असार, व्यर्थ मानने की दृष्टि हमें भ्रांत मालूम पड़े, तो शायद हमें जीवन को दुखपूर्ण मानने की बात गलत मालूम पड़े, तो शायद हमें जीवन से विरोधी रुख अधार्मिक मालूम पड़े।

लेकिन अब तक धर्म के नाम पर जीवन का विरोध ही सिखाया गया है। सच तो यह है कि अब तक का सारा धर्म मृत्युवादी है, जीवनवादी नहीं। उसकी दृष्टि में, मृत्यु के बाद जो है वही महत्वपूर्ण है, मृत्यु के पहले जो है वह महत्वपूर्ण नहीं है! अब तक के धर्म की दृष्टि में मृत्यु की पूजा है, जीवन का सम्मान नहीं! जीवन के फूलों का आदर नहीं, मृत्यु के कुम्हला गए, जा चुके, मिट गए फूलों की कब्रों की प्रशंसा और श्रद्धा है! अब तक का सारा धर्म चिंतन

करता है कि मृत्यु के बाद क्या है--स्वर्ग, मोक्ष! मृत्यु के पहले क्या है, उससे आज तक के धर्म को जैसे कोई संबंध नहीं रहा।

और मैं आपसे कहना चाहता हूं: मृत्यु के पहले जो है, अगर हम उसे ही सम्हालने में असमर्थ हैं, तो मृत्यु के बाद जो है उसे हम सम्हालने में कभी भी समर्थ नहीं हो सकते। मृत्यु के पहले जो है, अगर वही व्यर्थ छूट जाता है, तो मृत्यु के बाद कभी भी सार्थकता की कोई गुंजाइश, कोई पात्रता हम अपने में पैदा नहीं कर सकेंगे। मृत्यु की तैयारी भी, इस जीवन में जो आज पास है, मौजूद है, उसके द्वारा करनी है। मृत्यु के बाद भी अगर कोई लोक है, तो उस लोक में हमें उसी का दर्शन होगा, जो हमने जीवन में अनुभव किया है और निर्मित किया है। लेकिन जीवन को भुला देने की, जीवन को विस्मरण कर देने की बात ही अब तक कही गई है।

मैं आपसे कहना चाहता हूं: जीवन के अतिरिक्त न कोई परमात्मा है, न हो सकता है।

मैं आपसे यह भी कहना चाहता हूं: जीवन को साध लेना ही धर्म की साधना है और जीवन में ही परम सत्य को अनुभव कर लेना मोक्ष को उपलब्ध कर लेने की पहली सीढ़ी है। जो जीवन को ही चूक जाता है, वह और सब भी चूक जाएगा, यह निश्चित है।

लेकिन अब तक का रख उलटा रहा है। वह रख कहता है, जीवन को छोड़ो। वह रख कहता है, जीवन को त्यागो। वह यह नहीं कहता कि जीवन में खोजो। वह यह नहीं कहता कि जीवन को जीने की कला सीखो। वह यह भी नहीं कहता कि जीवन को जीने के ढंग पर निर्भर करता है कि जीवन कैसा मालूम पड़ेगा। अगर जीवन अंधकारपूर्ण मालूम पड़ता है, तो वह जीने का गलत ढंग है। यही जीवन आनंद की वर्षा भी बन सकता है, अगर जीने का सही ढंग उपलब्ध हो जाए।

धर्म को मैं जीने की कला कहता हूं। वह आर्ट ऑफ लिविंग है।

धर्म जीवन का त्याग नहीं, जीवन की गहराइयों में उतरने की सीढ़ियां हैं।

धर्म जीवन की तरफ पीठ कर लेना नहीं, जीवन की तरफ पूरी तरह आंख खोलना है।

धर्म जीवन से भागना नहीं, जीवन को पूरा आलिंगन में लेने का नाम है।

धर्म है जीवन का पूरा साक्षात्कार।

यही शायद कारण है कि आज तक के धर्म में सिर्फ बूढ़े लोग ही उत्सुक रहे हैं। मंदिरों में जाएं, चर्चों में, गिरजाघरों में, गुरुद्वारों में--और वहां वृद्ध लोग दिखाई पड़ेंगे। वहां युवा दिखाई नहीं पड़ते, वहां छोटे बच्चे दिखाई नहीं पड़ते। क्या कारण है? एक ही कारण है। अब तक का हमारा धर्म सिर्फ बूढ़े का धर्म है। उन लोगों का धर्म है, जिनकी मौत करीब आ गई, और अब जो मौत से भयभीत हो गए हैं और मौत के बाद के चिंतन के संबंध में आतुर हैं और जानना चाहते हैं कि मौत के बाद क्या है।

जो धर्म मौत पर आधारित है, वह धर्म पूरे जीवन को कैसे प्रभावित कर सकेगा? जो धर्म मौत का चिंतन करता है, वह पृथ्वी को धार्मिक कैसे बना सकेगा? वह नहीं बना सका। पांच हजार वर्षों की धार्मिक शिक्षा के बाद भी पृथ्वी रोज अधार्मिक से अधार्मिक होती चली गई है। मंदिर हैं, मस्जिद हैं, चर्च हैं, पुजारी हैं, पुरोहित हैं, संन्यासी हैं, लेकिन पृथ्वी धार्मिक नहीं हो सकी है और नहीं हो सकेगी, क्योंकि धर्म का आधार ही गलत है। धर्म का आधार जीवन नहीं है, धर्म का आधार मृत्यु है। धर्म का आधार खिलते हुए फूल नहीं हैं, कब्रें हैं। जिस धर्म का आधार मृत्यु है, वह धर्म अगर जीवन के प्राणों को स्पंदित न कर पाता हो तो आश्चर्य क्या है? जिम्मेवारी किसकी है?

मैं इन तीन दिनों में जीवन के धर्म के संबंध में ही बात करना चाहता हूं और इसलिए पहला सूत्र समझ लेना जरूरी है। और इस सूत्र के संबंध में आज तक छिपाने की, दबाने की, भूल जाने की सारी चेष्टा की गई है; लेकिन जानने और खोजने की नहीं! और उस भूलने और विस्मृत कर देने की चेष्टा के दुष्परिणाम सारे जगत में व्याप्त हो गए हैं।

मनुष्य के सामान्य जीवन में केंद्रीय तत्व क्या है--परमात्मा? आत्मा? सत्य?

नहीं! मनुष्य के प्राणों में, सामान्य मनुष्य के प्राणों में, जिसने कोई खोज नहीं की, जिसने कोई यात्रा नहीं की, जिसने कोई साधना नहीं की, उसके प्राणों की गहराई में क्या है--प्रार्थना? पूजा?

नहीं, बिलकुल नहीं! अगर हम सामान्य मनुष्य की जीवन-ऊर्जा में खोज करें, उसकी जीवन-शक्ति को हम खोजने जाएं, तो न तो वहां परमात्मा दिखाई पड़ेगा, न पूजा, न प्रार्थना, न ध्यान। वहां कुछ और ही दिखाई पड़ेगा। और जो दिखाई पड़ेगा, उसे भुलाने की चेष्टा की गई है, उसे जानने और समझने की नहीं!

वहां क्या दिखाई पड़ेगा अगर हम आदमी के प्राणों की चीरें और फाड़ें और वहां खोजें? आदमी को छोड़ दें, अगर आदमी से इतर जगत की भी हम खोज-बीन करें, तो वहां प्राणों की गहराइयों में क्या मिलेगा? अगर हम एक पौधे की जांच-बीन करें, तो क्या मिलेगा? एक पौधा क्या कर रहा है?

एक पौधा पूरी चेष्टा कर रहा है नये बीज उत्पन्न करने की। एक पौधे के सारे प्राण, सारा रस, नये बीज इकट्ठे करने, जन्मने की चेष्टा कर रहा है।

एक पक्षी क्या कर रहा है? एक पशु क्या कर रहा है?

अगर हम सारी प्रकृति में खोजने जाएं तो हम पाएंगे: सारी प्रकृति में एक ही, एक ही क्रिया जोर से प्राणों को घेर कर चल रही है और वह क्रिया है सतत सृजन की क्रिया। वह क्रिया है क्रिएशन की क्रिया। वह क्रिया है जीवन को पुनरुज्जीवित, नये-नये रूपों में जीवन देने की क्रिया। फूल बीज को सम्हाल रहे हैं, फल बीज को सम्हाल रहे हैं। बीज क्या करेगा? बीज फिर पौधा बनेगा, फिर फूल बनेगा, फिर फल बनेगा। अगर हम सारे जीवन को देखें, तो जीवन जन्मने की एक अनंत क्रिया का नाम है। जीवन एक ऊर्जा है, जो स्वयं को पैदा करने के लिए सतत संलग्न है और सतत चेष्टाशील है।

आदमी के भीतर भी वही है। आदमी के भीतर उस सतत सृजन की चेष्टा का नाम हमने सेक्स दे रखा है, काम दे रखा है। इस नाम के कारण उस ऊर्जा को एक गाली मिल गई, एक अपमान। इस नाम के कारण एक निंदा का भाव पैदा हो गया है। मनुष्य के भीतर भी जीवन को जन्म देने की सतत चेष्टा चल रही है। हम उसे सेक्स कहते हैं, हम उसे काम की शक्ति कहते हैं।

लेकिन काम की शक्ति क्या है?

समुद्र की लहरें आकर टकरा रही हैं समुद्र के तट से हजारों-लाखों वर्षों से। लहरें चली आती हैं, टकराती हैं, लौट जाती हैं। फिर आती हैं, टकराती हैं, लौट जाती हैं। जीवन भी हजारों वर्षों से अनंत-अनंत लहरों में टकरा रहा है। जरूर जीवन कहीं उठना चाहता है। ये समुद्र की लहरें, जीवन की ये लहरें कहीं ऊपर पहुंचना चाहती हैं; लेकिन किनारों से टकराती हैं और नष्ट हो जाती हैं। फिर नई लहरें आती हैं, टकराती हैं और नष्ट हो जाती हैं। यह जीवन का सागर इतने अरबों वर्षों से टकरा रहा है, संघर्ष ले रहा है, रोज उठता है, गिर जाता है। क्या होगा प्रयोजन इसके पीछे? जरूर इसके पीछे कोई वृहत्तर उंचाइयां छूने का आयोजन चल रहा है। जरूर इसके पीछे कुछ और गहराइयां जानने का प्रयोजन चल रहा है। जरूर जीवन की सतत प्रक्रिया के पीछे कुछ और महानतर जीवन पैदा करने का प्रयास चल रहा है।

मनुष्य को जमीन पर आए बहुत दिन नहीं हुए, कुछ लाख वर्ष हुए। उसके पहले मनुष्य नहीं था, लेकिन पशु थे। पशुओं को आए हुए भी बहुत ज्यादा समय नहीं हुआ। एक जमाना था कि पशु भी नहीं थे, लेकिन पौधे थे। पौधों को आए भी बहुत समय नहीं हुआ। एक समय था कि पौधे भी नहीं थे, पत्थर थे, पहाड़ थे, नदियां थीं, सागर था।

पत्थर, पहाड़, नदियों की वह जो दुनिया थी, वह किस बात के लिए पीड़ित थी?

वह पौधों को पैदा करना चाहती थी। पौधे धीरे-धीरे पैदा हुए। जीवन ने एक नया रूप लिया। पृथ्वी हरियाली से भर गई। फूल खिले।

लेकिन पौधे भी अपने में तृप्त नहीं थे। वे सतत जीवन को जन्म देते रहे। उनकी भी कोई चेष्टा चल रही थी। वे पशुओं को, पक्षियों को जन्म देना चाहते थे।

पशु-पक्षी पैदा हुए। हजारों-लाखों वर्षों तक पशु-पक्षियों से भरा हुआ था यह जगत्। लेकिन मनुष्य का कोई पता न था। पशुओं और पक्षियों के प्राणों के भीतर निरंतर मनुष्य भी निवास कर रहा था, पैदा होने की चेष्टा कर रहा था। फिर मनुष्य पैदा हुआ। अब मनुष्य किसलिए है?

मनुष्य निरंतर नये जीवन को पैदा करने के लिए आतुर है। हम उसे सेक्स कहते हैं, हम उसे काम की वासना कहते हैं, लेकिन उस वासना का मूल अर्थ क्या है? मूल अर्थ इतना है: मनुष्य अपने पर समाप्त नहीं होना चाहता, आगे भी जीवन को पैदा करना चाहता है। लेकिन क्यों? क्या मनुष्य के प्राणों में, मनुष्य से ऊपर किसी सुपरमैन को, किसी महामानव को पैदा करने की कोई चेष्टा चल रही है?

निश्चित ही चल रही है। निश्चित ही मनुष्य के प्राण इस चेष्टा में संलग्न हैं कि मनुष्य से श्रेष्ठतर जीवन जन्म पा सके, मनुष्य से श्रेष्ठतर प्राणी आविर्भूत हो सके। नीत्शे से लेकर अरविंद तक, पतंजलि से लेकर बर्ट्रेण्ड रसेल तक, सारे मनुष्यों के प्राणों में एक कल्पना एक सपने की तरह बैठी रही है कि मनुष्य से बड़ा प्राणी कैसे पैदा हो सके!

लेकिन मनुष्य से बड़ा प्राणी पैदा कैसे होगा? हमने तो हजारों वर्ष से इस पैदा होने की कामना को ही निंदित कर रखा है। हमने तो सेक्स को सिवाय गाली के आज तक दूसरा कोई सम्मान नहीं दिया। हम तो बात करने में भयभीत होते हैं। हमने तो सेक्स को इस भांति छिपा कर रख दिया है जैसे वह है ही नहीं, जैसे उसका जीवन में कोई स्थान नहीं है। जब कि सच्चाई यह है कि उससे ज्यादा महत्वपूर्ण मनुष्य के जीवन में और कुछ भी नहीं है। लेकिन उसको छिपाया है, उसको दबाया है। दबाने और छिपाने से मनुष्य सेक्स से मुक्त नहीं हो गया, बल्कि मनुष्य और भी बुरी तरह से सेक्स से ग्रसित हो गया। दमन उलटे परिणाम लाया है।

शायद आपमें से किसी ने एक फ्रेंच वैज्ञानिक कुए के एक नियम के संबंध में सुना होगा। वह नियम है: लॉ ऑफ रिवर्स इफेक्ट। कुए ने एक नियम ईजाद किया है, विपरीत परिणाम का नियम। हम जो करना चाहते हैं, हम इस ढंग से कर सकते हैं कि जो हम परिणाम चाहते थे, उससे उलटा परिणाम हो जाए।

एक आदमी साइकिल चलाना सीखता है। बड़ा रास्ता है, चौड़ा रास्ता है, एक छोटा सा पत्थर रास्ते के किनारे पड़ा हुआ है। वह साइकिल चलाने वाला घबराता है कि मैं कहीं उस पत्थर से न टकरा जाऊं। अब इतना चौड़ा रास्ता है कि अगर आंख बंद करके भी वह चलाए, तो पत्थर से टकराना आसान बात नहीं है। इसके सौ में एक ही मौके हैं कि वह पत्थर से टकराए। इतने चौड़े रास्ते पर कहीं से भी निकल सकता है। लेकिन वह देख कर घबराता है--कहीं मैं पत्थर से टकरा न जाऊं! और जैसे ही वह घबराता है--मैं पत्थर से न टकरा जाऊं--सारा रास्ता विलीन हो गया, सिर्फ पत्थर ही दिखाई पड़ने लगता है उसको। अब उसकी साइकिल का चाक पत्थर की तरफ मुड़ने लगता है। वह हाथ-पैर से घबराता है। उसकी सारी चेतना उस पत्थर को ही देखने लगती है। और एक सम्मोहित, हिप्रोटाइज्ड आदमी की तरह वह पत्थर की तरफ खिंचा जाता है और जाकर पत्थर से टकरा जाता है। नया साइकिल सीखने वाला उसी से टकरा जाता है जिससे बचना चाहता है! लैंप पोस्ट से टकरा जाता है, पत्थर से टकरा जाता है। इतना बड़ा रास्ता था कि अगर कोई निशानेबाज ही चलाने की कोशिश करता, तो उस पत्थर से टकरा सकता था। लेकिन यह सिक्खड़ आदमी कैसे उस पत्थर से टकरा गया?

कुए कहता है, हमारी चेतना का एक नियम है--लॉ ऑफ रिवर्स इफेक्ट। हम जिस चीज से बचना चाहते हैं, चेतना उसी पर केंद्रित हो जाती है और परिणाम में हम उसी से टकरा जाते हैं।

पांच हजार वर्षों से आदमी सेक्स से बचना चाह रहा है और परिणाम इतना हुआ है कि गली-कूचे, हर जगह, जहां भी आदमी जाता है, वहीं सेक्स से टकरा जाता है। वह लॉ ऑफ रिवर्स इफेक्ट मनुष्य की आत्मा को पकड़े हुए है।

क्या कभी आपने यह सोचा कि आप चित्त को जहां से बचना चाहते हैं, चित्त वहीं आकर्षित हो जाता है, वहीं निमंत्रित हो जाता है! जिन लोगों ने मनुष्य को सेक्स के विरोध में समझाया, उन लोगों ने ही मनुष्य को कामुक बनाने का जिम्मा भी अपने ऊपर ले लिया है। मनुष्य की अति कामुकता गलत शिक्षाओं का परिणाम है। और आज भी हम भयभीत होते हैं कि सेक्स की बात न की जाए! क्यों भयभीत होते हैं? भयभीत इसलिए होते हैं कि हमें डर है कि सेक्स के संबंध में बात करने से लोग और कामुक हो जाएंगे।

मैं आपको कहना चाहता हूं, यह बिलकुल ही गलत भ्रम है। यह शत प्रतिशत गलत है। पृथ्वी उसी दिन सेक्स से मुक्त होगी, जब हम सेक्स के संबंध में सामान्य, स्वस्थ बातचीत करने में समर्थ हो जाएंगे। जब हम सेक्स को पूरी तरह से समझ सकेंगे, तो ही हम सेक्स का अतिक्रमण कर सकेंगे।

जगत में ब्रह्मचर्य का जन्म हो सकता है, मनुष्य सेक्स के ऊपर उठ सकता है, लेकिन सेक्स को समझ कर, सेक्स को पूरी तरह पहचान कर। उस ऊर्जा के पूरे अर्थ, मार्ग, व्यवस्था को जान कर उससे मुक्त हो सकता है। आंखें बंद कर लेने से कोई कभी मुक्त नहीं हो सकता। आंखें बंद कर लेने वाले सोचते हैं कि आंख बंद कर लेने से शत्रु समाप्त हो गया है, तो वे पागल हैं। मरुस्थल में शूतुरमुर्ग भी ऐसा ही सोचता है। दुश्मन हमले करते हैं तो शूतुरमुर्ग रेत में सिर छिपा कर खड़ा हो जाता है और सोचता है कि जब दुश्मन मुझे दिखाई नहीं पड़ रहा तो दुश्मन नहीं है। लेकिन यह तर्क--शूतुरमुर्ग को हम क्षमा भी कर सकते हैं, आदमी को क्षमा नहीं किया जा सकता।

सेक्स के संबंध में आदमी ने शूतुरमुर्ग का व्यवहार किया है आज तक। वह सोचता है, आंख बंद कर लो सेक्स के प्रति तो सेक्स मिट गया।

अगर आंख बंद कर लेने से चीजें मिटती होतीं, तो बहुत आसान थी जिंदगी, बहुत आसान होती दुनिया। आंखें बंद करने से कुछ मिटता नहीं, बल्कि जिस चीज के संबंध में हम आंखें बंद करते हैं, हम प्रमाण देते हैं कि हम उससे भयभीत हो गए हैं, हम डर गए हैं। वह हमसे ज्यादा मजबूत है, उससे हम जीत नहीं सकते हैं, इसलिए हम आंख बंद करते हैं। आंख बंद करना कमजोरी का लक्षण है।

और सेक्स के बावत सारी मनुष्य-जाति आंख बंद करके बैठ गई है। न केवल आंख बंद करके बैठ गई है, बल्कि उसने सब तरह की लड़ाई भी सेक्स से ली है। और उसके परिणाम, उसके दुष्परिणाम सारे जगत में ज्ञात हैं।

अगर सौ आदमी पागल होते हैं, तो उसमें से अठानवे आदमी सेक्स को दबाने की वजह से पागल होते हैं। अगर हजारों स्त्रियां हिस्टीरिया से परेशान हैं, तो उसमें सौ में से निन्यानवे स्त्रियों के हिस्टीरिया के, मिरगी के, बेहोशी के पीछे सेक्स की मौजूदगी है, सेक्स का दमन मौजूद है। अगर आदमी इतना बेचैन, अशांत, इतना दुखी और पीड़ित है, तो इस पीड़ित होने के पीछे उसने जीवन की एक बड़ी शक्ति को बिना समझे उसकी तरफ पीठ खड़ी कर ली है, उसका कारण है। और परिणाम उलटे आते हैं।

अगर हम मनुष्य का साहित्य उठा कर देखें, अगर किसी देवलोक से कभी कोई देवता आए या चंद्रलोक से या मंगल ग्रह से कभी कोई यात्री आए और हमारी किताबें पढ़े, हमारा साहित्य देखे, हमारी कविताएं पढ़े, हमारे चित्र देखे, तो बहुत हैरान हो जाएगा। वह हैरान हो जाएगा यह जान कर कि आदमी का सारा साहित्य सेक्स ही सेक्स पर क्यों केंद्रित है? आदमी की सारी कविताएं सेक्सुअल क्यों हैं? आदमी की सारी कहानियां, सारे उपन्यास सेक्स पर क्यों खड़े हैं? आदमी की हर किताब के ऊपर नंगी औरत की तस्वीर क्यों है? आदमी की हर फिल्म नंगे आदमी की फिल्म क्यों है? वह आदमी बहुत हैरान होगा; अगर कोई मंगल से आकर हमें इस हालत में देखेगा तो बहुत हैरान होगा। वह सोचेगा, आदमी सेक्स के सिवाय क्या कुछ भी नहीं सोचता? और आदमी से अगर पूछेगा, बातचीत करेगा, तो बहुत हैरान हो जाएगा। आदमी बातचीत करेगा आत्मा की, परमात्मा की, स्वर्ग की, मोक्ष की। सेक्स की कभी कोई बात नहीं करेगा! और उसका सारा व्यक्तित्व चारों तरफ से सेक्स से भरा हुआ है! वह मंगल ग्रह का वासी तो बहुत हैरान होगा। वह कहेगा, बातचीत कभी नहीं की जाती जिस चीज की, उसको चारों तरफ से तृप्त करने की हजार-हजार पागल कोशिशें क्यों की जा रही हैं?

आदमी को हमने परवर्त किया है, विकृत किया है और अच्छे नामों के आधार पर विकृत किया है। ब्रह्मचर्य की बात हम करते हैं। लेकिन कभी इस बात की चेष्टा नहीं करते कि पहले मनुष्य की काम की ऊर्जा को समझा जाए, फिर उसे रूपांतरित करने के प्रयोग भी किए जा सकते हैं। बिना उस ऊर्जा को समझे दमन की, संयम की सारी शिक्षा, मनुष्य को पागल, विक्षिप्त और रुग्ण करेगी। इस संबंध में हमें कोई भी ध्यान नहीं है! यह मनुष्य इतना रुग्ण, इतना दीन-हीन कभी भी न था; इतना विषाक्त भी न था, इतना पायज़नस भी न था, इतना दुखी भी न था।

मैं एक अस्पताल के पास से निकलता था। मैंने एक तख्ते पर अस्पताल की एक सूचना लिखी हुई पढ़ी। लिखा था उस तख्ती पर--एक आदमी को बिच्छू ने काटा, उसका इलाज किया गया, वह एक दिन में ठीक होकर घर वापस चला गया है। एक दूसरे आदमी को सांप ने काटा था, उसका तीन दिन में इलाज किया गया, वह स्वस्थ होकर घर वापस लौट गया है। उस पर तीसरी सूचना थी कि एक और आदमी को पागल कुत्ते ने काट लिया था। उसका दस दिन से इलाज हो रहा है। वह काफी ठीक हो गया है और शीघ्र ही उसके पूरी तरह ठीक हो जाने की उम्मीद है। और उस पर एक चौथी सूचना भी थी कि एक आदमी को एक आदमी ने काट लिया था। उसे कई सप्ताह हो गए, वह बेहोश है, और उसके ठीक होने की भी कोई उम्मीद नहीं है! मैं बहुत हैरान हुआ। आदमी का काटा हुआ इतना जहरीला हो सकता है?

लेकिन अगर हम आदमी की तरफ देखेंगे तो दिखाई पड़ेगा--आदमी के भीतर बहुत जहर इकट्ठा हो गया है। और उस जहर के इकट्ठे हो जाने का पहला सूत्र यह है कि हमने आदमी के निसर्ग को, उसकी प्रकृति को स्वीकार नहीं किया। उसकी प्रकृति को दबाने और जबरदस्ती तोड़ने की चेष्टा की है। मनुष्य के भीतर जो शक्ति है, उस शक्ति को रूपांतरित करने की, ऊंचा ले जाने की, आकाशगामी बनाने का हमने कोई प्रयास नहीं किया। उस शक्ति के ऊपर हम जबरदस्ती कब्जा करके बैठ गए हैं। वह शक्ति नीचे से ज्वालामुखी की तरह उबल रही है और धक्के दे रही है। वह आदमी को किसी भी क्षण उलटा देने की चेष्टा कर रही है। और इसीलिए जरा सा मौका मिल जाता है, तो आपको पता है सबसे पहली बात क्या होती है?

अगर एक हवाई जहाज गिर पड़े तो आपको सबसे पहले, उस हवाई जहाज में अगर पायलट हो और आप उसके पास जाएं, उसकी लाश के पास, तो आपको पहला प्रश्न क्या उठेगा मन में? क्या आपको खयाल आएगा--यह हिंदू है या मुसलमान? नहीं। क्या आपको खयाल आएगा कि यह भारतीय है कि चीनी? नहीं। आपको पहला खयाल आएगा--यह आदमी है या औरत? पहला प्रश्न आपके मन में उठेगा--यह स्त्री है या पुरुष? क्या आपको खयाल है इस बात का कि यह प्रश्न क्यों सबसे पहले खयाल में आता है? भीतर दबा हुआ सेक्स है। उस सेक्स के दमन की वजह से बाहर स्त्रियां और पुरुष अतिशय उभर कर दिखाई पड़ते हैं।

क्या आपने कभी सोचा? आप किसी आदमी का नाम भूल सकते हैं, जाति भूल सकते हैं, चेहरा भूल सकते हैं। अगर मैं आप से मिलूं या मुझे आप मिलें तो मैं सब भूल सकता हूं--कि आपका नाम क्या था, आपका चेहरा क्या था, आपकी जाति क्या थी, उम्र क्या थी, आप किस पद पर थे--सब भूल सकता हूं, लेकिन कभी आपको खयाल आया कि आप यह भी भूल सके हैं कि जिससे आप मिले थे, वह आदमी था या औरत? कभी आप भूल सके इस बात को कि जिससे आप मिले थे, वह पुरुष है या स्त्री? कभी पीछे यह संदेह उठा मन में कि वह स्त्री है या पुरुष? नहीं, यह बात आप कभी भी नहीं भूल सके होंगे। क्यों लेकिन? जब सारी बातें भूल जाती हैं तो यह क्यों नहीं भूलता?

हमारे भीतर मन में कहीं सेक्स बहुत अतिशय होकर बैठा है। वह चौबीस घंटे उबल रहा है। इसलिए सब बात

भूल जाती है, लेकिन यह बात नहीं भूलती। हम सतत सचेष्ट हैं।

यह पृथ्वी तब तक स्वस्थ नहीं हो सकेगी, जब तक आदमी और स्त्रियों के बीच यह दीवार और यह फासला खड़ा हुआ है। यह पृथ्वी तब तक कभी भी शांत नहीं हो सकेगी, जब तक भीतर उबलती हुई आग है और उसके ऊपर हम जबरदस्ती बैठे हुए हैं। उस आग को रोज दबाना पड़ता है। उस आग को प्रतिक्षण दबाए रखना पड़ता है। वह आग हमको भी जला डालती है, सारा जीवन राख कर देती है। लेकिन फिर भी हम विचार करने को राजी नहीं होते--यह आग क्या थी?

और मैं आपसे कहता हूं, अगर हम इस आग को समझ लें तो यह आग दुश्मन नहीं है, दोस्त है। अगर हम इस आग को समझ लें तो यह हमें जलाएगी नहीं, हमारे घर को गरम भी कर सकती है सर्दियों में, और हमारी रोटियां भी पका सकती है, और हमारी जिंदगी के लिए सहयोगी और मित्र भी हो सकती है। लाखों साल तक आकाश में बिजली चमकती थी। कभी किसी के ऊपर गिरती थी और जान ले लेती थी। कभी किसी ने सोचा भी न था कि एक दिन घर में पंखा चलाएगी यह बिजली। कभी यह रोशनी करेगी अंधेरे में, यह किसी ने सोचा नहीं था। आज? आज वही बिजली हमारी साथी हो गई है। क्यों? बिजली की तरफ हम आंख मूंद कर खड़े हो जाते तो हम कभी बिजली के राज को न समझ पाते और न कभी उसका उपयोग कर पाते। वह हमारी दुश्मन ही बनी रहती। लेकिन नहीं, आदमी ने बिजली के प्रति दोस्ताना भाव बरता। उसने बिजली को समझने की कोशिश की, उसने प्रयास किए जानने के। और धीरे-धीरे बिजली उसकी साथी हो गई। आज बिना बिजली के क्षण भर जमीन पर रहना मुश्किल मालूम होगा।

मनुष्य के भीतर बिजली से भी बड़ी ताकत है सेक्स की।

मनुष्य के भीतर अणु की शक्ति से भी बड़ी शक्ति है सेक्स की।

कभी आपने सोचा लेकिन, यह शक्ति क्या है और कैसे हम इसे रूपांतरित करें? एक छोटे से अणु में इतनी शक्ति है कि हिरोशिमा का पूरा का पूरा एक लाख का नगर भस्म हो सकता है। लेकिन क्या आपने कभी सोचा कि मनुष्य के काम की ऊर्जा का एक अणु एक नये व्यक्ति को जन्म देता है? उस व्यक्ति में गांधी पैदा हो सकता है, उस व्यक्ति में महावीर पैदा हो सकता है, उस व्यक्ति में बुद्ध पैदा हो सकते हैं, क्राइस्ट पैदा हो सकता है। उससे आइंस्टीन पैदा हो सकता है और न्यूटन पैदा हो सकता है। एक छोटा सा अणु एक मनुष्य की काम-ऊर्जा का, एक गांधी को छिपाए हुए है। गांधी जैसा विराट व्यक्तित्व जन्म पा सकता है।

लेकिन हम सेक्स को समझने को राजी नहीं! लेकिन हम सेक्स की ऊर्जा के संबंध में बात करने की हिम्मत जुटाने को राजी नहीं! कौन सा भय हमें पकड़े हुए है कि जिससे सारे जीवन का जन्म होता है उस शक्ति को हम समझना नहीं चाहते? कौन सा डर है? कौन सी घबराहट है?

मैंने पिछली बंबई की सभा में इस संबंध में कुछ बात की थी, तो बड़ी घबराहट फैल गई। मुझे बहुत से पत्र पहुंचे कि आप इस तरह की बातें मत कहें! इस तरह की बात ही मत करें! मैं बहुत हैरान हुआ कि इस तरह की बात क्यों न की जाए? अगर शक्ति है हमारे भीतर तो उसे जाना क्यों न जाए? उसे क्यों न पहचाना जाए? और बिना जाने-पहचाने, बिना उसके नियम समझे, हम उस शक्ति को और ऊपर कैसे ले जा सकते हैं! पहचान से हम उसको जीत भी सकते हैं, बदल भी सकते हैं। लेकिन बिना पहचाने तो हम उसके हाथ में ही मरेंगे और सड़ेंगे, और कभी उससे मुक्त नहीं हो सकते।

जो लोग सेक्स के संबंध में बात करने की मनाही करते हैं, वे ही लोग पृथ्वी को सेक्स के गड्डे में डाले हुए हैं, यह मैं आपसे कहना चाहता हूं। जो लोग घबराते हैं और जो समझते हैं धर्म का सेक्स से कोई संबंध नहीं, वे खुद तो पागल हैं ही, वे सारी पृथ्वी को भी पागल बनाने में सहयोगी हो रहे हैं।

धर्म का संबंध मनुष्य की ऊर्जा के ट्रांसफार्मेशन से है। धर्म का संबंध मनुष्य की शक्ति को रूपांतरित करने से है। धर्म चाहता है कि मनुष्य के व्यक्तित्व में जो छिपा है, वह श्रेष्ठतम रूप से अभिव्यक्त हो जाए। धर्म चाहता है कि मनुष्य का जीवन निम्न से उच्च की एक यात्रा बने, पदार्थ से परमात्मा तक पहुंच जाए। लेकिन यह चाह तभी पूरी हो सकती है...हम जहां जाना चाहते हैं उस स्थान को समझना उतना उपयोगी नहीं, जितना उस स्थान को समझना उपयोगी है जहां हम खड़े हैं; क्योंकि वहीं से यात्रा शुरू करनी पड़ती है।

सेक्स है फैक्ट, सेक्स जो है वह तथ्य है मनुष्य के जीवन का। और परमात्मा? परमात्मा अभी दूर है। सेक्स हमारे जीवन का तथ्य है। इस तथ्य को समझ कर हम परमात्मा के सत्य तक यात्रा कर भी सकते हैं। लेकिन इसे बिना समझे एक इंच आगे नहीं जा सकते, कोल्हू के बैल की तरह इसी के आस-पास घूमते रहेंगे, इसी के आस-पास घूमते रहेंगे।

मैंने जो पिछली सभा में कुछ बातें कहीं तो मुझे ऐसा लगा कि जैसे हम जीवन की वास्तविकता को समझने की

भी तैयारी नहीं दिखाते! तो फिर हम और क्या कर सकते हैं? और आगे क्या हो सकता है? फिर ईश्वर, परमात्मा की सारी बातें सांत्वना की, कोरी सांत्वना की बातें हैं और झूठी हैं। क्योंकि जीवन के परम सत्य, चाहे कितने ही नग्न हों, उन्हें जानना ही पड़ेगा, समझना ही पड़ेगा।

तो पहली बात तो यह जान लेनी जरूरी है कि मनुष्य का जन्म सेक्स से होता है। मनुष्य का सारा व्यक्तित्व सेक्स के अणुओं से बना हुआ है। मनुष्य का सारा प्राण सेक्स की ऊर्जा से भरा हुआ है। जीवन की ऊर्जा अर्थात् काम की ऊर्जा। यह जो काम की ऊर्जा है, यह जो सेक्स इनर्जी है, यह क्या है? यह क्यों हमारे जीवन को इतने जोर से आंदोलित करती है? क्यों हमारे जीवन को इतना प्रभावित करती है? क्यों हम घूम-घूम कर सेक्स के आस-पास, इर्द-गिर्द ही चक्कर लगाते हैं और समाप्त हो जाते हैं? कौन सा आकर्षण है इसका?

हजारों साल से ऋषि-मुनि इनकार कर रहे हैं, लेकिन आदमी प्रभावित नहीं हुआ मालूम पड़ता है। हजारों साल से वे कह रहे हैं कि मुख मोड़ लो इससे! दूर हट जाओ इससे! सेक्स की कल्पना और कामना छोड़ दो! चित्त से निकाल डालो ये सारे सपने! लेकिन आदमी के चित्त से ये सपने निकले नहीं हैं। निकल भी नहीं सकते हैं इस भांति। बल्कि मैं तो इतना हैरान हुआ हूँ--इतना हैरान हुआ हूँ मैं--वेश्याओं से भी मिला हूँ, लेकिन वेश्याओं ने मुझसे सेक्स की बात नहीं की! उन्होंने आत्मा-परमात्मा के संबंध में पूछताछ की। और मैं साधु-संन्यासियों से भी मिलता हूँ। वे जब भी अकेले में मिलते हैं, तो सिवाय सेक्स के और किसी बात के संबंध में पूछताछ नहीं करते। मैं बहुत हैरान हुआ! मैं हैरान हुआ हूँ इस बात को जान कर कि साधु-संन्यासियों को, जो निरंतर इसके विरोध में बोल रहे हैं, वे खुद भी चित्त के तल पर वहीं ग्रसित हैं, वहीं परेशान हैं! तो जनता में आत्मा-परमात्मा की बात करते हैं, लेकिन भीतर उनके भी समस्या वही है। होगी भी। स्वाभाविक है, क्योंकि हमने उस समस्या को समझने की ही चेष्टा नहीं की है। हमने उस ऊर्जा के नियम भी नहीं जानने चाहे। और हमने कभी यह भी नहीं पूछा कि मनुष्य का इतना आकर्षण क्यों है? कौन सिखाता है सेक्स आपको?

सारी दुनिया तो सिखाने के विरोध में सारे उपाय करती है। मां-बाप चेष्टा करते हैं कि बच्चे को पता न चल जाए। शिक्षक चेष्टा करते हैं। धर्म-शास्त्र चेष्टा करते हैं। कहीं कोई स्कूल नहीं, कहीं कोई यूनिवर्सिटी नहीं। लेकिन आदमी अचानक एक दिन पाता है कि सारे प्राण काम की आतुरता से भर गए हैं! यह कैसे हो जाता है? बिना सिखाए यह कैसे हो जाता है? सत्य की शिक्षा दी जाती है, प्रेम की शिक्षा दी जाती है, उसका तो कोई पता नहीं चलता। इस सेक्स का इतना प्रबल आकर्षण, इतना नैसर्गिक केंद्र क्या है? जरूर इसमें कोई रहस्य है और इसे समझना जरूरी है। तो शायद हम इससे मुक्त भी हो सकते हैं।

पहली बात तो यह कि मनुष्य के प्राणों में सेक्स का जो आकर्षण है, वह वस्तुतः सेक्स का आकर्षण नहीं है। मनुष्य के प्राणों में जो कामवासना है, वह वस्तुतः काम की वासना नहीं है। इसलिए हर आदमी काम के कृत्य के बाद पछताता है, दुखी होता है, पीड़ित होता है। सोचता है कि इससे मुक्त हो जाऊं, यह क्या है? लेकिन शायद आकर्षण कोई दूसरा है। और वह आकर्षण बहुत रिलीजस, बहुत धार्मिक अर्थ रखता है। वह आकर्षण यह है कि मनुष्य के सामान्य जीवन में सिवाय सेक्स की अनुभूति के वह कभी भी अपने गहरे से गहरे प्राणों में नहीं उतर पाता है। और किसी क्षण में कभी गहरे नहीं उतरता है। दुकान करता है, धंधा करता है, यश कमाता है, पैसे कमाता है, लेकिन एक अनुभव काम का, संभोग का, उसे गहरे से गहरे ले जाता है। और उसकी गहराई में दो घटनाएं घटती हैं।

एक--संभोग के अनुभव में अहंकार विसर्जित हो जाता है, ईगोलेसनेस पैदा हो जाती है। एक क्षण के लिए अहंकार नहीं रह जाता, एक क्षण को यह याद भी नहीं रह जाता कि मैं हूँ। क्या आपको पता है, धर्म के श्रेष्ठतम अनुभव में मैं बिल्कुल मिट जाता है, अहंकार बिल्कुल शून्य हो जाता है! सेक्स के अनुभव में क्षण भर को अहंकार मिटता है। लगता है कि हूँ या नहीं। एक क्षण को विलीन हो जाता है मेरापन का भाव।

दूसरी घटना घटती है: एक क्षण के लिए समय मिट जाता है, टाइमलेसनेस पैदा हो जाती है।

जीसस ने कहा है समाधि के संबंध में: देयर शैल बी टाइम नो लांगर। समाधि का जो अनुभव है, वहां समय नहीं रह जाता। वह कालातीत है। समय बिल्कुल विलीन हो जाता है। न कोई अतीत है, न कोई भविष्य--शुद्ध वर्तमान रह जाता है।

सेक्स के अनुभव में यह दूसरी घटना घटती है--न कोई अतीत रह जाता है, न कोई भविष्य। समय मिट जाता है, एक क्षण के लिए समय विलीन हो जाता है।

ये धार्मिक अनुभूति के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व हैं--ईगोलेसनेस, टाइमलेसनेस। ये दो तत्व हैं, जिनकी वजह से आदमी सेक्स की तरफ आतुर होता है और पागल होता है। वह आतुरता स्त्री के शरीर के लिए नहीं है पुरुष की, न पुरुष के शरीर के लिए स्त्री की है। वह आतुरता शरीर के लिए बिल्कुल भी नहीं है। वह आतुरता

किसी और ही बात के लिए है। वह आतुरता है--अहंकार-शून्यता का अनुभव, समय-शून्यता का अनुभव। लेकिन समय-शून्य और अहंकार-शून्य होने के लिए आतुरता क्यों है? क्योंकि जैसे ही अहंकार मिटता है, आत्मा की झलक उपलब्ध होती है। जैसे ही समय मिटता है, परमात्मा की झलक उपलब्ध होती है।

एक क्षण को होती है यह घटना, लेकिन उस एक क्षण के लिए आदमी कितनी ही ऊर्जा, कितनी ही शक्ति खोने को तैयार है! शक्ति खोने के कारण पछताता है बाद में कि शक्ति क्षीण हुई, शक्ति का अपव्यय हुआ। और उसे पता है कि शक्ति जितनी क्षीण होती है, मौत उतनी करीब आती है।

कुछ पशुओं में तो एक ही संभोग के बाद नर की मृत्यु हो जाती है। कुछ कीड़े तो एक ही संभोग कर पाते हैं और संभोग करते ही करते समाप्त हो जाते हैं। अफ्रीका में एक मकड़ा होता है। वह एक ही संभोग कर पाता है और संभोग की हालत में ही मर जाता है। इतनी ऊर्जा क्षीण हो जाती है।

मनुष्य को यह अनुभव में आ गया बहुत पहले कि सेक्स का अनुभव शक्ति को क्षीण करता है, जीवन-ऊर्जा कम होती है और धीरे-धीरे मौत करीब आती है। पछताता है आदमी। लेकिन इतना पछताने के बाद फिर पाता है कि कुछ घड़ियों के बाद फिर वही आतुरता है। निश्चित ही इस आतुरता में कुछ और अर्थ है जो समझ लेना जरूरी है।

सेक्स की आतुरता में कोई रिलीजस अनुभव है, कोई आत्मिक अनुभव है। उस अनुभव को अगर हम देख पाएं तो हम सेक्स के ऊपर उठ सकते हैं। अगर उस अनुभव को हम न देख पाएं तो हम सेक्स में ही जीएंगे और मर जाएंगे। उस अनुभव को अगर हम देख पाएं...अंधेरी रात है और अंधेरी रात में बिजली चमकती है। बिजली की चमक अगर हमें दिखाई पड़ जाए और बिजली को अगर हम समझ लें, तो अंधेरी रात को हम मिटा भी सकते हैं। लेकिन अगर हम यह समझ लें कि अंधेरी रात के कारण बिजली चमकती है, तो फिर हम अंधेरी रात को और घना करने की कोशिश करेंगे, ताकि बिजली चमके।

सेक्स की घटना में बिजली चमकती है एक। वह सेक्स से अतीत है, ट्रांसेंड करती है, पार से आती है। उस पार के अनुभव को अगर हम पकड़ लें, तो हम सेक्स के ऊपर उठ सकते हैं, अन्यथा नहीं। लेकिन जो लोग सेक्स के विरोध में खड़े हो जाते हैं, वे अनुभव को समझ भी नहीं पाते कि वह अनुभव क्या है। वे कभी यह ठीक विश्लेषण भी नहीं कर पाते कि हमारी आतुरता किस चीज के लिए है।

मैं आपसे कहना चाहता हूं कि संभोग का इतना आकर्षण क्षणिक समाधि के लिए है। और संभोग से आप उस दिन मुक्त होंगे, जिस दिन आपको समाधि बिना संभोग के मिलना शुरू हो जाएगी। उसी दिन संभोग से आप मुक्त हो जाएंगे, सेक्स से मुक्त हो जाएंगे। क्योंकि एक आदमी हजार रुपये खोकर थोड़ा सा अनुभव पाता हो; और कल हम उसे बता दें कि रुपये खोने की कोई जरूरत नहीं, इस अनुभव की तो खदानें भरी पड़ी हैं, तुम चलो इस रास्ते से और उस अनुभव को पा लो। तो फिर वह हजार रुपये खोकर उस अनुभव को खरीदने बाजार में नहीं जाएगा।

सेक्स जिस अनुभूति को लाता है, अगर वह अनुभूति किन्हीं और मार्गों से उपलब्ध हो सके, तो आदमी का चित्त सेक्स की तरफ बढ़ना अपने आप बंद हो जाता है। उसका चित्त एक नई दिशा लेना शुरू कर देता है। इसलिए मैं कहता हूं, जगत में समाधि का पहला अनुभव मनुष्य को सेक्स के अनुभव से ही उपलब्ध हुआ है।

लेकिन वह बहुत महंगा अनुभव है, वह अति महंगा अनुभव है। और दूसरे कारण हैं कि वह अनुभव कभी एक क्षण से ज्यादा गहरा नहीं हो सकता। एक क्षण को झलक मिलेगी और हम वापस अपनी जगह पर लौट आते हैं। एक क्षण को किसी लोक में उठ जाते हैं, किसी गहराई पर, किसी पीक एक्सपीरिएंस पर, किसी शिखर पर पहुंचना होता है। और हम पहुंच भी नहीं पाते और वापस गिर जाते हैं। जैसे समुद्र की एक लहर आकाश में उठती है--उठ भी नहीं पाती पहुंच भी नहीं पाती, हवाओं में, सिर उठा भी नहीं पाती और गिरना शुरू हो जाता है। ठीक हमारा सेक्स का अनुभव: बार-बार शक्ति को इकट्ठा करके हम उठने की चेष्टा करते हैं--किसी गहरे जगत में, किसी ऊंचे जगत में--एक क्षण को हम उठ भी नहीं पाते और सब लहर बिखर जाती है, हम वापस अपनी जगह खड़े हो जाते हैं। और उतनी शक्ति और ऊर्जा को गंवा देते हैं।

लेकिन अगर सागर की लहर बर्फ का पत्थर बन जाए, जम जाए और बर्फ हो जाए, तो फिर उसे नीचे गिरने की कोई जरूरत नहीं है। आदमी का चित्त जब तक सेक्स की तरलता में बहता है, तब तक वापस उठता है, गिरता है; उठता है, गिरता है; सारा जीवन यही करता है। और जिस अनुभव के लिए इतना तीव्र आकर्षण है--ईगोलेसनेस के लिए, अहंकार शून्य हो जाए और मैं आत्मा को जान लूं; समय मिट जाए और मैं उसको जान लूं जो इटरनल है, जो टाइमलेस है; उसको जान लूं जो समय के बाहर है, अनंत और अनादि है--उसे जानने की चेष्टा में सारा जगत सेक्स के केंद्र पर घूमता रहता है।

लेकिन अगर हम इस घटना के विरोध में खड़े हो जाएं सिर्फ, तो क्या होगा? तो क्या हम उस अनुभव को पा लेंगे जो सेक्स से एक झलक की तरह दिखाई पड़ता था?

नहीं, अगर हम सेक्स के विरोध में खड़े हो जाते हैं तो सेक्स ही हमारी चेतना का केंद्र बन जाता है, हम सेक्स से मुक्त नहीं होते, उससे बंध जाते हैं। वह लॉ ऑफ रिवर्स इफेक्ट काम शुरू कर देता है। फिर हम उससे बंध गए। फिर हम भागने की कोशिश करते हैं। और जितनी हम कोशिश करते हैं, उतने ही बंधते चले जाते हैं।

एक आदमी बीमार था और बीमारी कुछ उसे ऐसी थी कि दिन-रात उसे भूख लगती थी। सच तो यह है, उसे बीमारी कुछ भी न थी। भोजन के संबंध में उसने कुछ विरोध की किताबें पढ़ ली थीं। उसने पढ़ लिया था कि भोजन पाप है, उपवास पुण्य है। कुछ भी खाना हिंसा करना है। जितना वह यह सोचने लगा कि भोजन करना पाप है, उतना ही भूख को दबाने लगा; जितना भूख को दबाने लगा, उतनी भूख असर्ट करने लगी, जोर से प्रकट होने लगी। तो वह दो-चार दिन उपवास करता था और एक दिन पागल की तरह कुछ भी खा जाता था। जब कुछ भी खा लेता था तो बहुत दुखी होता था, क्योंकि फिर खाने की तकलीफ झेलनी पड़ती थी। फिर पश्चात्ताप में दो-चार दिन उपवास करता था और फिर कुछ भी खा लेता था। आखिर उसने तय किया कि यह घर रहते हुए नहीं हो सकेगा ठीक, मुझे जंगल चले जाना चाहिए।

वह पहाड़ पर गया। एक हिल स्टेशन पर जाकर एक कमरे में रहा। घर के लोग भी परेशान हो गए थे। उसकी पत्नी ने यह सोच कर कि शायद वह पहाड़ पर अब जाकर भोजन की बीमारी से मुक्त हो जाएगा, उसने खुशी में बहुत से फूल उसे पहाड़ पर भिजवाए--कि मैं बहुत खुश हूं कि तुम शायद पहाड़ से अब स्वस्थ होकर वापस लौटोगे; मैं शुभकामना के रूप में ये फूल तुम्हें भेज रही हूं।

उस आदमी का वापस तार आया। उसने तार में लिखा--मेनी थैंक्स फॉर दि फ्लावर्स, दे आर सो डिलीशियस। उसने तार किया कि बहुत धन्यवाद फूलों के लिए, बड़े स्वादिष्ट हैं।

वह फूलों को खा गया, वहां पहाड़ पर जो फूल उसको भेजे गए थे! अब कोई आदमी फूलों को खाएगा, इसका हम खयाल नहीं कर सकते। लेकिन जो आदमी भोजन से लड़ाई शुरू कर देगा, वह फूलों को खा सकता है।

आदमी सेक्स से लड़ाई शुरू किया, और उसने क्या-क्या सेक्स के नाम पर खाया, इसका आपने कभी हिसाब लगाया? आदमी को छोड़ कर, सभ्य आदमी को छोड़ कर, होमोसेक्सुअलिटी कहीं है? जंगल में आदिवासी रहते हैं, उन्होंने कभी कल्पना भी नहीं की है कि होमोसेक्सुअलिटी जैसी चीज भी हो सकती है--कि पुरुष और पुरुष के साथ संभोग कर सकते हैं, यह भी हो सकता है! यह कल्पना के बाहर है। मैं आदिवासियों के पास रहा हूं और उनसे मैंने कहा कि सभ्य लोग इस तरह भी करते हैं। वे कहने लगे, हमारे विश्वास के बाहर है। यह कैसे हो सकता है?

लेकिन अमेरिका में उन्होंने आंकड़े निकाले हैं--पैंतीस प्रतिशत लोग होमोसेक्सुअल हैं! और बेल्जियम और स्वीडन और हालैंड में होमोसेक्सुअल के क्लब हैं, सोसाइटीज हैं, अखबार निकलते हैं। और वे सरकार से यह दावा करते हैं कि होमोसेक्सुअलिटी के ऊपर से कानून उठा दिया जाना चाहिए, क्योंकि चालीस प्रतिशत लोग जिसको म

ानते हैं, तो इतनी बड़ी माइनारिटी के ऊपर हमला है यह आपका। हम तो मानते हैं कि होमोसेक्सुअलिटी ठीक है, इसलिए हमको हक होना चाहिए।

कोई कल्पना नहीं कर सकता कि यह होमोसेक्सुअलिटी कैसे पैदा हो गई? सेक्स के बाबत लड़ाई का यह परिणाम है। जितना सभ्य समाज है, उतनी वेश्याएं हैं! कभी आपने यह सोचा कि ये वेश्याएं कैसे पैदा हो गईं? किसी आदिवासी गांव में जाकर वेश्या खोज सकते हैं आप? आज भी बस्तर के गांव में वेश्या खोजनी मुश्किल है। और कोई कल्पना में भी मानने को राजी नहीं होता कि ऐसी स्त्रियां हो सकती हैं जो कि अपनी इज्जत बेचती हों, अपना संभोग बेचती हों। लेकिन सभ्य आदमी जितना सभ्य होता चला गया, उतनी वेश्याएं बढ़ती चली गई। क्यों?

यह फूलों को खाने की कोशिश शुरू हुई है। और आदमी की जिंदगी में कितने विकृत रूप से सेक्स ने जगह बनाई है, इसका अगर हम हिसाब लगाने चलेंगे तो हम हैरान रह जाएंगे कि यह आदमी को क्या हुआ है? इसका जिम्मा किस पर है, किन लोगों पर है?

इसका जिम्मा उन लोगों पर है, जिन्होंने आदमी को सेक्स को समझना नहीं, लड़ना सिखाया है। जिन्होंने सप्रेषन सिखाया है, जिन्होंने दमन सिखाया है। दमन के कारण सेक्स की शक्ति जगह-जगह से फूट कर गलत रास्तों से बहनी शुरू हो गई है। सारा समाज पीड़ित और रुग्ण हो गया है।

इस रुग्ण समाज को अगर बदलना है, तो हमें यह स्वीकार कर लेना होगा कि काम की ऊर्जा है, काम का आकर्षण है। क्यों है काम का आकर्षण? काम के आकर्षण का जो बुनियादी आधार है, उस आधार को अगर हम पकड़ लें, तो मनुष्य को हम काम के जगत से ऊपर उठा सकते हैं। और मनुष्य निश्चित काम के जगत के ऊपर उठ जाए, तो ही राम का जगत शुरू होता है।

खजुराहो के मंदिर के सामने मैं खड़ा था और दस-पांच मित्रों को लेकर वहां गया था। खजुराहो के मंदिर के चारों तरफ की दीवाल पर तो मैथुन-चित्र हैं, कामवासनाओं की मूर्तियां हैं। मेरे मित्र कहने लगे कि मंदिर के चारों तरफ यह क्या है? मैंने उनसे कहा, जिन्होंने यह मंदिर बनाया था, वे बड़े समझदार लोग थे। उनकी मान्यता यह थी कि जीवन की बाहर की परिधि पर काम है। और जो लोग अभी काम से उलझे हैं, उनको मंदिर में भीतर प्रवेश का कोई हक नहीं है।

फिर मैं अपने मित्रों को कहा, भीतर चलें! फिर उन्हें भीतर लेकर गया। वहां तो कोई काम-प्रतिमा न थी, वहां भगवान की मूर्ति थी। वे कहने लगे, भीतर कोई प्रतिमा नहीं है! मैंने उनसे कहा कि जीवन की बाहर की परिधि पर कामवासना है। जीवन की बाहर की परिधि, दीवाल पर कामवासना है। जीवन के भीतर भगवान का मंदिर है। लेकिन जो अभी कामवासना से उलझे हैं, वे भगवान के मंदिर में प्रवेश के अधिकारी नहीं हो सकते, उन्हें अभी बाहर की दीवाल का ही चक्कर लगाना पड़ेगा। जिन लोगों ने यह मंदिर बनाया था, वे बड़े समझदार लोग थे। यह मंदिर एक मेडिटेशन सेंटर था। यह मंदिर एक ध्यान का केंद्र था। जो लोग आते थे, उनसे वे कहते थे, बाहर पहले मैथुन के ऊपर ध्यान करो, पहले सेक्स को समझो! और जब सेक्स को पूरी तरह समझ जाओ और तुम पाओ कि मन उससे मुक्त हो गया है, तब तुम भीतर आ जाना। फिर भीतर भगवान से मिलना हो सकता है।

लेकिन धर्म के नाम पर हमने सेक्स को समझने की स्थिति पैदा नहीं की, सेक्स की शत्रुता पैदा कर दी! सेक्स को समझो मत, आंख बंद कर लो, और घुस जाओ भगवान के मंदिर में आंख बंद करके।

आंख बंद करके कभी कोई भगवान के मंदिर में जा सका है? और आंख बंद करके अगर आप भगवान के मंदिर में पहुंच भी गए, तो बंद आंख में आपको भगवान दिखाई नहीं पड़ेंगे, जिससे आप भाग कर आए हैं वही दिखाई पड़ता रहेगा, आप उसी से बंधे रह जाएंगे।

शायद कुछ लोग मेरी बातें सुन कर समझते हैं कि मैं सेक्स का पक्षपाती हूं। मेरी बातें सुन कर शायद लोग समझते हैं कि मैं सेक्स का प्रचार करना चाहता हूं। अगर कोई ऐसा समझता हो तो उसने मुझे कभी सुना ही नहीं है, ऐसा उससे कह देना। इस समय पृथ्वी पर मुझसे ज्यादा सेक्स का दुश्मन आदमी खोजना मुश्किल है। और उसका कारण यह है कि मैं जो बात कह रहा हूं, अगर वह समझी जा सकी, तो मनुष्य-जाति को सेक्स के ऊपर उठाया जा सकता है, अन्यथा नहीं। और जिन थोथे लोगों को हमने समझा है कि वे सेक्स के दुश्मन थे, वे सेक्स के दुश्मन नहीं थे। उन्होंने सेक्स में आकर्षण पैदा कर दिया, सेक्स से मुक्ति पैदा नहीं की। सेक्स में आकर्षण पैदा हो गया विरोध के कारण।

मुझसे एक आदमी ने कहा है कि जिस चीज का विरोध न हो, उसको करने में कोई रस ही नहीं रह जाता। चोरी के फल खाने जितने मधुर और मीठे होते हैं, उतने बाजार से खरीदे गए फल कभी नहीं होते। इसीलिए अपनी पत्नी उतनी मधुर कभी नहीं मालूम पड़ती, जितनी पड़ोसी की पत्नी मालूम पड़ती है। वे चोरी के फल हैं, वे वर्जित फल हैं। और सेक्स को हमने एक ऐसी स्थिति दे दी, एक ऐसा चोरी का जामा पहना दिया, एक ऐसे झूठ के लिबास में छिपा दिया, ऐसी दीवाल में खड़ा कर दिया, कि उसने हमें तीव्र रूप से आकर्षित कर लिया है।

बर्ट्रेड रसेल ने लिखा है कि जब मैं छोटा बच्चा था, विक्टोरियन जमाना था, स्त्रियों के पैर भी दिखाई नहीं पड़ते थे। वे कपड़े पहनती थीं, जो जमीन पर घिसटता था और पैर नहीं दिखाई पड़ता था। अगर कभी किसी स्त्री का अंगूठा दिख जाता था, तो आदमी आतुर होकर अंगूठा देखने लगता था और कामवासना जग जाती थी! और रसेल कहता है कि अब स्त्रियां करीब-करीब आधी नंगी घूम रही हैं और उनका पैर पूरा दिखाई पड़ता है, लेकिन कोई असर नहीं होता!

तो रसेल ने लिखा है कि इससे यह सिद्ध होता है कि हम जिन चीजों को जितना ज्यादा छिपाते हैं, उन चीजों में उतना ही कुत्सित आकर्षण पैदा होता है।

अगर दुनिया को सेक्स से मुक्त करना है, तो बच्चों को ज्यादा देर तक घर में नग्न रहने की सुविधा होनी चाहिए। जब तक बच्चे घर में नग्न खेल सकें--लड़के और लड़कियां--उन्हें नग्न खेलने देना चाहिए। ताकि वे एक-दूसरे के शरीर से भलीभांति परिचित हो जाएं और कल रास्तों पर उनको किसी स्त्री को धक्का देने की कोई जरूरत न रह जाए। ताकि वे एक-दूसरे के शरीर से इतने परिचित हो जाएं कि किसी किताब पर नंगी औरत की तस्वीर छापने की कोई जरूरत न रह जाए। वे शरीर से इतने परिचित हों कि शरीर का कुत्सित आकर्षण विलीन हो सके।

लेकिन बड़ी उलटी दुनिया है। जिन लोगों ने शरीर को ढांक कर, छिपा कर खड़ा किया है, उन्हीं लोगों ने शरीर को इतना आकर्षित बना दिया है, यह हमारे खयाल में नहीं आता! जिन लोगों ने शरीर को जितना ढांक कर छिपा दिया है, शरीर को उतना ही हमारे मन में चिंतन का विषय बना दिया है, यह हमारे खयाल में नहीं आता।

बच्चे नग्न होने चाहिए, देर तक नग्न खेलने चाहिए, लड़के और लड़कियां एक-दूसरे को नग्नता में देखना चाहिए,

ताकि उनके पीछे कोई भी पागलपन न रह जाए और उनके इस पागलपन का जीवन भर रोग उनके भीतर न चलता रहे। लेकिन वह रोग चल रहा है। और उस रोग को हम बढ़ाते चले जाते हैं। और उस रोग के फिर हम नये-नये रास्ते खोजते हैं।

गंदी किताबें छपती हैं, जो लोग गीता के कवर में भीतर रख कर पढ़ते हैं। बाइबिल में दबा लेते हैं, और पढ़ते हैं। ये गंदी किताबें...तो हम कहते हैं, ये गंदी किताबें बंद होनी चाहिए! लेकिन हम यह कभी नहीं पूछते कि गंदी किताबें पढ़ने वाला आदमी पैदा क्यों हो गया है? हम कहते हैं, नंगी तस्वीरें दीवारों पर नहीं लगनी चाहिए! लेकिन हम कभी नहीं पूछते कि नंगी तस्वीरें कौन आदमी देखने को आता है?

वही आदमी आता है जो स्त्रियों के शरीर को देखने से वंचित रह गया है। एक कुतूहल जाग गया है--क्या है स्त्री का शरीर? और मैं आपसे कहता हूं, वस्त्रों ने स्त्री के शरीर को जितना सुंदर बना दिया है, उतना सुंदर स्त्री का शरीर है नहीं। वस्त्रों में ढांक कर शरीर छिपा नहीं है और उघड़ कर प्रकट हुआ है। यह सारी की सारी चिंतना हमारी विपरीत फल ले आई है।

इसलिए आज एक बात आपसे कहना चाहता हूं पहले दिन की चर्चा में, वह यह--सेक्स क्या है? उसका आकर्षण क्या है? उसकी विकृति क्यों पैदा हुई है? अगर हम ये तीन बातें ठीक से समझ लें, तो मनुष्य का मन इनके ऊपर उठ सकता है। उठना चाहिए। उठने की जरूरत है।

लेकिन उठने की चेष्टा गलत परिणाम लाई है; क्योंकि हमने लड़ाई खड़ी की है, हमने मैत्री खड़ी नहीं की। दुश्मनी खड़ी की है, सप्रेशन खड़ा किया है, दमन किया है; समझ पैदा नहीं की।

अंडरस्टैंडिंग चाहिए, सप्रेशन नहीं। समझ चाहिए। जितनी गहरी समझ होगी, मनुष्य उतना ही ऊपर उठता है। जितनी कम समझ होगी, उतना ही मनुष्य दबाने की कोशिश करता है। और दबाने के कभी भी कोई सफल परिणाम, सुफल परिणाम, स्वस्थ परिणाम उपलब्ध नहीं होते।

मनुष्य के जीवन की सबसे बड़ी ऊर्जा है काम। लेकिन काम पर रुक नहीं जाना है; काम को राम तक ले जाना है। सेक्स को समझना है, ताकि ब्रह्मचर्य फलित हो सके। सेक्स को जानना है, ताकि हम सेक्स से मुक्त हो सकें और ऊपर उठ सकें।

लेकिन शायद ही, आदमी जीवन भर अनुभव से गुजरता है, शायद ही उसने समझने की कोशिश की हो कि संभोग के भीतर समाधि का क्षण भर का अनुभव है। वही अनुभव खींच रहा है। वही अनुभव आकर्षित कर रहा है। वही अनुभव पुकार दे रहा है कि आओ। ध्यानपूर्वक उस अनुभव को जान लेना है कि कौन सा अनुभव मुझे आकर्षित कर रहा है? कौन मुझे खींच रहा है?

और मैं आपसे कहता हूं, उस अनुभव को पाने के सुगम रास्ते हैं। ध्यान, योग, सामायिक, प्रार्थना, सब उस अनुभव को पाने के मार्ग हैं। लेकिन वही अनुभव हमें आकर्षित कर रहा है, यह सोच लेना, जान लेना जरूरी है।

एक मित्र ने मुझे लिखा कि आपने ऐसी बातें कहीं, कि मां के साथ बेटी बैठी थी, वह सुन रही है! बाप के साथ बेटी बैठी है, वह सुन रही है! ऐसी बातें सबके सामने नहीं करनी चाहिए।

मैंने उनसे कहा, आप बिलकुल पागल हैं। अगर मां समझदार होगी, तो इसके पहले कि बेटी सेक्स की दुनिया में उतर जाए, उसे सेक्स के संबंध में अपने सारे अनुभव समझा देगी। ताकि वह अनजान, अधकच्ची, अपरिपक्व सेक्स के गलत रास्तों पर न चली जाए। अगर बाप योग्य है और समझदार है, तो अपने बेटे को और अपनी बेटी को अपने सारे अनुभव बता देगा। ताकि बेटे और बेटियां गलत रास्तों पर न चले जाएं, जीवन उनके विकृत न हो जाएं।

लेकिन मजा यह है कि न बाप का कोई गहरा अनुभव है, न मां का कोई गहरा अनुभव है। वे खुद भी सेक्स के तल से ऊपर नहीं उठ सके। इसलिए घबराते हैं कि कहीं सेक्स की बात सुन कर बच्चे भी इसी तल में न उलझ जाएं। लेकिन मैं उनसे पूछता हूं, आप किसकी बात सुन कर उलझे थे? आप अपने आप उलझ गए थे, बच्चे भी अपने आप उलझ जाएंगे। यह हो भी सकता है कि अगर उन्हें समझ दी जाए, विचार दिया जाए, बोध दिया जाए, तो शायद वे अपनी ऊर्जा को व्यर्थ करने से बच सकें, ऊर्जा को बचा सकें, रूपांतरित कर सकें।

रास्ते के किनारे पर कोयले का ढेर लगा होता है। वैज्ञानिक कहते हैं कि कोयला ही हजारों साल में हीरा बन जाता है। कोयले और हीरे में कोई रासायनिक फर्क नहीं है, कोई केमिकल भेद नहीं है। कोयले के भी परमाणु वही हैं जो हीरे के हैं; कोयले का भी रासायनिक-भौतिक संगठन वही है जो हीरे का है। हीरा कोयले का ही रूपांतरित, बदला हुआ रूप है। हीरा कोयला ही है।

मैं आपसे कहना चाहता हूं कि सेक्स कोयले की तरह है, ब्रह्मचर्य हीरे की तरह है। लेकिन वह कोयले का ही बदला हुआ रूप है। वह कोयले का दुश्मन नहीं है हीरा। वह कोयले की ही बदलाहट है। वह कोयले का ही

रूपांतरण है। वह कोयले को ही समझ कर नई दिशाओं में ले गई यात्रा है।

सेक्स का विरोध नहीं है ब्रह्मचर्य, सेक्स का ही रूपांतरण है, ट्रांसफार्मेशन है। और जो सेक्स का दुश्मन है, वह कभी ब्रह्मचर्य को उपलब्ध नहीं हो सकता है।

ब्रह्मचर्य की दिशा में जाना हो--और जाना जरूरी है, क्योंकि ब्रह्मचर्य का मतलब क्या है? ब्रह्मचर्य का इतना मतलब है: वह अनुभव उपलब्ध हो जाए, जो ब्रह्म की चर्या जैसा है। जैसा भगवान का जीवन हो, वैसा जीवन उपलब्ध हो जाए। ब्रह्मचर्य यानी ब्रह्म की चर्या, ब्रह्म जैसा जीवन। परमात्मा जैसा अनुभव उपलब्ध हो जाए।

वह हो सकता है अपनी शक्तियों को समझ कर रूपांतरित करने से।

आने वाले दो दिनों में, कैसे रूपांतरित किया जा सकता है सेक्स, कैसे रूपांतरित हो जाने के बाद काम राम के अनुभव में बदल जाता है, वह मैं आपसे बात करूंगा। और तीन दिन तक चाहूंगा कि बहुत गौर से सुन लेंगे, ताकि मेरे संबंध में कोई गलतफहमी पीछे आपको पैदा न हो जाए। और जो भी प्रश्न हों--ईमानदारी से और सच्चे--उन्हें लिख कर दे देंगे, ताकि आने वाले पिछले दो दिनों में मैं उनकी आप से सीधी-सीधी बात कर सकूँ। किसी प्रश्न को छिपाने की जरूरत नहीं है। जो जिंदगी में सत्य है, उसे छिपाने का कोई कारण नहीं है। किसी सत्य से मुकरने की जरूरत नहीं है। जो सत्य है, वह सत्य है--चाहे हम आंख बंद करें, चाहे आंख खुली रखें।

और एक बात मैं जानता हूँ, धार्मिक आदमी मैं उसको कहता हूँ जो जीवन के सारे सत्यों को सीधा साक्षात्कार करने की हिम्मत रखता है। जो इतने कमजोर, काहिल और नपुंसक हैं कि जीवन के तथ्यों का सामना भी नहीं कर सकते, उनके धार्मिक होने की कोई उम्मीद कभी नहीं हो सकती है।

ये आने वाले चार दिनों के लिए निमंत्रण देता हूँ। क्योंकि ऐसे विषय पर यह बात है कि शायद ऋषि-मुनियों से आशा नहीं रही है कि ऐसे विषयों पर वे बात करेंगे। शायद आपको सुनने की आदत भी नहीं होगी। शायद आपका मन डरेगा। लेकिन फिर भी मैं चाहूंगा कि इन पांच दिनों में आप ठीक से सुनने की कोशिश करेंगे। यह हो सकता है कि काम की समझ आपको काम के मंदिर के भीतर प्रवेश दिला दे। आकांक्षा मेरी यही है। परमात्मा करे वह आकांक्षा पूरी हो।

मेरी बातों को इतने प्रेम और शांति से सुना, उसके लिए अनुगृहीत हूँ। और अंत में सबके भीतर बैठे हुए परमात्मा को प्रणाम करता हूँ। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

मेरे प्रिय आत्मन्!

एक छोटी सी कहानी से मैं अपनी बात शुरू करना चाहूंगा। बहुत वर्ष बीते, बहुत सदियां, किसी देश में एक बड़ा चित्रकार था। वह जब अपनी युवा अवस्था में था, उसने सोचा कि मैं एक ऐसा चित्र बनाऊं, जिसमें भगवान का आनंद झलकता हो। मैं ऐसी दो आंखें चित्रित करूं, जिनमें अनंत शांति झलकती हो। मैं ऐसे एक व्यक्ति को खोजूं, एक ऐसे मनुष्य को, जिसका चित्र, जीवन के जो पार है, जगत से जो दूर है, उसकी खबर लाता हो।

और वह अपने देश के गांव-गांव घूमा, जंगल-जंगल उसने छाना, उस आदमी को, जिसकी प्रतिछवि वह बना सके। और आखिर एक पहाड़ पर गाय चराने वाले एक चरवाहे को उसने खोज लिया। उसकी आंखों में कोई झलक थी। उसके चेहरे की रूप-रेखा में कोई दूर की खबर थी। उसे देख कर ही लगता था कि मनुष्य के भीतर परमात्मा भी है। उसने उसके चित्र को बनाया। उस चित्र की लाखों प्रतियां गांव-गांव, दूर-दूर के देशों में बिकीं। लोगों ने उस चित्र को घर में टांग कर अपने को धन्य समझा।

फिर बीस वर्ष बाद, वह चित्रकार बूढ़ा हो गया था। और उस चित्रकार को एक खयाल और आया। जीवन भर के अनुभव से उसे पता चला था कि आदमी में भगवान ही अगर अकेला होता तो ठीक था, आदमी में शैतान भी दिखाई पड़ता है। उसने सोचा कि मैं एक चित्र और बनाऊं, जिसमें आदमी के भीतर शैतान की छवि हो, तब मेरे दोनों चित्र पूरे मनुष्य के चित्र बन सकेंगे।

वह फिर गया बुढ़ापे में--जुआघरों में, शराबखानों में, पागलघरों में--उसने खोजबीन की उस आदमी की, जो आदमी न हो, शैतान हो; जिसकी आंखों में नरक की लपटें जलती हों; जिसके चेहरे की आकृति उस सबका स्मरण दिलाती हो, जो अशुभ है, कुरूप है, असुंदर है। वह पाप की प्रतिमा की खोज में निकला। एक प्रतिमा उसने परमात्मा की बनाई थी, वह एक प्रतिमा पाप की भी बनाना चाहता था।

और बहुत खोजने के बाद एक कारागृह में उसे एक कैदी मिल गया, जिसने सात हत्याएं की थीं और जो थोड़े ही दिनों बाद मृत्यु की प्रतीक्षा कर रहा था, फांसी पर लटकाया जाने को था। उस आदमी की आंखों में नरक के दर्शन होते थे, घृणा जैसे साक्षात् थी। उस आदमी की चेहरे की रूप-रेखा ऐसी थी कि वैसा कुरूप मनुष्य खोजना मुश्किल था।

उसने उसके चित्र को बनाया। जिस दिन उसका चित्र बन कर पूरा हुआ, वह अपने पहले चित्र को भी लेकर कारागृह में आया और दोनों चित्रों को पास-पास रख कर देखने लगा कि कौन सी कलाकृति श्रेष्ठ बनी है? तय करना मुश्किल था। चित्रकार खुद भी मुग्ध हो गया था। दोनों ही चित्र अदभुत थे। कौन सा श्रेष्ठ था, कला की दृष्टि से, यह तय करना मुश्किल था।

और तभी उस चित्रकार को पीछे किसी के रोने की आवाज सुनाई पड़ी। लौट कर देखा, तो वह कैदी जंजीरों में बंधा रो रहा है जिसकी उसने तस्वीर बनाई थी! वह चित्रकार हैरान हुआ। उसने कहा कि मेरे दोस्त, तुम क्यों रोते हो? चित्रों को देख कर तुम्हें क्या तकलीफ हुई?

उस आदमी ने कहा, मैंने इतने दिन तक छिपाने की कोशिश की, लेकिन आज मैं हार गया हूं। शायद तुम्हें पता नहीं कि पहली तस्वीर भी तुमने मेरी ही बनाई थी। ये दोनों तस्वीरें मेरी हैं। बीस साल पहले पहाड़ पर जो आदमी तुम्हें मिला था, वह मैं ही हूं। और इसलिए रोता हूं कि मैंने बीस साल में कौन सी यात्रा कर ली--स्वर्ग से नरक की! परमात्मा से पाप की!

पता नहीं यह कहानी कहाँ तक सच है। सच हो या न हो, लेकिन हर आदमी के जीवन में दो तस्वीरें हैं। हर आदमी के भीतर शैतान है और हर आदमी के भीतर परमात्मा भी। और हर आदमी के भीतर नरक की भी संभावना है और स्वर्ग की भी। हर आदमी के भीतर सौंदर्य के फूल भी खिल सकते हैं और कुरूपता के गंदे डबरे भी बन सकते हैं। प्रत्येक आदमी इन दो यात्राओं के बीच निरंतर डोल रहा है। ये दो छोर हैं, जिनमें से आदमी किसी को भी छू सकता है। और अधिक लोग नरक के छोर को छू लेते हैं और बहुत कम सौभाग्यशाली हैं जो अपने भीतर परमात्मा को उठाड़ पाते हों।

क्या हम अपने भीतर परमात्मा को उठाड़ पाने में सफल हो सकते हैं? क्या हम वह प्रतिमा बनेंगे जहां

परमात्मा की झलक मिले? यह कैसे हो सकता है--इस प्रश्न के साथ ही आज की दूसरी चर्चा मैं शुरू करना चाहता हूं। यह कैसे हो सकता है कि आदमी परमात्मा की प्रतिमा बने? यह कैसे हो सकता है कि आदमी का जीवन एक स्वर्ग बने--एक सुवास, एक सुगंध, एक सौंदर्य? यह कैसे हो सकता है कि मनुष्य उसे जान ले जिसकी कोई मृत्यु नहीं? यह कैसे हो सकता है कि मनुष्य परमात्मा के मंदिर में प्रविष्ट हो जाए?

होता तो उलटा है। बचपन में हम कहीं स्वर्ग में होते हैं और बूढ़े होते-होते नरक तक पहुंच जाते हैं! होता उलटा है। होता यह है कि बचपन के बाद जैसे रोज हमारा पतन होता है। बचपन में तो किसी इनोसेंस, किसी निर्दोष संसार का हम अनुभव करते हैं; और फिर धीरे-धीरे एक कपट से भरा हुआ, पाखंड से भरा हुआ मार्ग हम तय करते हैं। और बूढ़े होते-होते न केवल हम शरीर से बूढ़े हो जाते हैं, बल्कि हम आत्मा से भी बूढ़े हो जाते हैं। न केवल शरीर दीन-हीन, जीर्ण-जर्जर हो जाता है, बल्कि आत्मा भी पतित, जीर्ण-जर्जर हो जाती है। और इसे ही हम जीवन मान लेते हैं और समाप्त हो जाते हैं!

धर्म इस संबंध में संदेह उठाना चाहता है। धर्म एक बड़ा संदेह है इस संबंध में--कि यह आदमी की जीवन की यात्रा गलत है कि स्वर्ग से हम नरक तक पहुंच जाएं। होना तो उलटा चाहिए। जीवन की यात्रा उपलब्धि की यात्रा होनी चाहिए--कि हम दुख से आनंद तक पहुंचें, हम अंधकार से प्रकाश तक पहुंचें, हम मृत्यु से अमृत तक पहुंच जाएं। प्राणों के प्राण की अभिलाषा और प्यास भी वही है। प्राणों में एक ही आकांक्षा है कि मृत्यु से अमृत तक कैसे पहुंचें? प्राणों में एक ही प्यास है कि हम अंधकार से आलोक को कैसे उपलब्ध हों? प्राणों की एक ही मांग है कि हम असत्य से सत्य तक कैसे जा सकते हैं?

निश्चित ही सत्य की यात्रा के लिए, निश्चित ही स्वयं के भीतर परमात्मा की खोज के लिए, व्यक्ति को ऊर्जा का एक संग्रह चाहिए, कंजरवेशन चाहिए, व्यक्ति को शक्ति का एक संवर्धन चाहिए, उसके भीतर शक्ति इकट्ठी हो कि वह शक्ति का एक स्रोत बन जाए, तभी व्यक्तित्व को स्वर्ग तक ले जाया जा सकता है। स्वर्ग निर्बलों के लिए नहीं है। जीवन के सत्य उनके लिए नहीं हैं जो दीन-हीन हो जाते हैं शक्ति को खोकर। जो जीवन की सारी शक्ति को खो देते हैं और भीतर दुर्बल और दीन हो जाते हैं, वे यात्रा नहीं कर सकते। उस यात्रा पर चढ़ने के लिए, उन पहाड़ों पर चढ़ने के लिए शक्ति चाहिए। और शक्ति का संवर्धन धर्म का सूत्र है--शक्ति का संवर्धन, कंजरवेशन ऑफ एनर्जी। कैसे शक्ति इकट्ठी हो कि हम शक्ति के उबलते हुए भंडार हो जाएं?

लेकिन हम तो दीन-हीन जन हैं। सारी शक्ति खोकर हम धीरे-धीरे निर्बल होते चले जाते हैं। सब खो जाता है भीतर, रिक्तता रह जाती है एक खाली। भीतर एक खालीपन के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं छूटता। हम शक्ति को कैसे खो देते हैं?

मनुष्य का शक्ति को खोने का सबसे बड़ा द्वार सेक्स है। काम मनुष्य की शक्ति के खोने का सबसे बड़ा द्वार है, जहां से वह शक्ति को खोता है। और जैसा मैंने कल आपसे कहा, कोई कारण है जिसकी वजह से वह शक्ति को खोता है। शक्ति को कोई भी खोना नहीं चाहता है। कौन शक्ति को खोना चाहता है? लेकिन कुछ झलक है उपलब्धि की, उस झलक के लिए आदमी शक्ति को खोने को राजी हो जाता है। काम के क्षणों में कुछ अनुभव है, उस अनुभव के लिए आदमी सब कुछ खोने को तैयार हो जाता है। अगर वह अनुभव किसी और मार्ग से उपलब्ध हो सके तो मनुष्य सेक्स के माध्यम से शक्ति को खोने को कभी भी तैयार नहीं हो सकता।

क्या और कोई द्वार है उस अनुभव को पाने का? क्या और कोई मार्ग है उस अनुभूति को उपलब्ध करने का--जहां हम अपने प्राणों की गहरी से गहरी गहराई में उतर जाते हैं, जहां हम जीवन का ऊंचा से ऊंचा शिखर छूते हैं, जहां हम जीवन की शांति और आनंद की एक झलक पाते हैं? क्या कोई और मार्ग है? क्या कोई और मार्ग है अपने भीतर पहुंच जाने का? क्या स्वयं की शांति और आनंद के स्रोत तक पहुंच जाने की और कोई सीढ़ी है?

अगर वह सीढ़ी हमें दिखाई पड़ जाए तो जीवन में एक क्रांति घटित हो जाती है, आदमी काम के प्रति विमुख और राम के प्रति सन्मुख हो जाता है। एक क्रांति घटित हो जाती है, एक नया द्वार खुल जाता है।

मनुष्य की जाति को अगर हम नया द्वार न दे सकें तो मनुष्य एक रिपिटिटिव सर्किल में, एक पुनरुक्ति वाले चक्कर में घूमता है और नष्ट होता है। लेकिन आज तक सेक्स के संबंध में जो भी धारणाएं रही हैं, वे मनुष्य को सेक्स के अतिरिक्त नया द्वार खोलने में समर्थ नहीं बना पाईं। बल्कि एक उलटा उपद्रव हुआ। प्रकृति एक ही द्वार देती है मनुष्य को, वह सेक्स का द्वार है। अब तक की शिक्षाओं ने वह द्वार भी बंद कर दिया और नया द्वार खोला नहीं! शक्ति भीतर घूमने लगी और चक्कर काटने लगी। और अगर नया द्वार शक्ति के लिए न मिले, तो घूमती हुई शक्ति मनुष्य को विक्षिप्त कर देती है, पागल कर देती है। और विक्षिप्त मनुष्य फिर न केवल उस द्वार से, जो सेक्स का सहज द्वार था, निकलने की चेष्टा करता है, वह दीवालों और खिड़कियों को तोड़ कर भी उसकी शक्ति बाहर बहने लगती है। वह अप्राकृतिक मार्गों से भी सेक्स की शक्ति बाहर बहने लगती है।

यह दुर्घटना घटी है। यह मनुष्य-जाति के बड़े से बड़े दुर्भाग्यों में से एक है। नया द्वार नहीं खोला गया और पुराना द्वार बंद कर दिया गया। इसलिए मैं सेक्स के विरोध में, दुश्मनी के लिए, दमन के लिए अब तक जो भी शिक्षाएं दी गई हैं, उन सबके स्पष्ट विरोध में खड़ा हुआ हूं। उन सारी शिक्षाओं से मनुष्य की सेक्सुअलिटी बड़ी है, कम नहीं हुई, बल्कि विकृत हुई है।

क्या करें लेकिन? कोई और द्वार खोला जा सकता है?

मैंने आपसे कल कहा, संभोग के क्षण की जो प्रतीति है, वह प्रतीति दो बातों की है: टाइमलेसनेस और ईगोलेसनेस की। समय शून्य हो जाता है और अहंकार विलीन हो जाता है। समय शून्य होने से और अहंकार विलीन होने से हमें उसकी एक झलक मिलती है जो हमारा वास्तविक जीवन है। लेकिन क्षण भर की झलक और हम वापस अपनी जगह खड़े हो जाते हैं। और एक बड़ी ऊर्जा, एक बड़ी वैद्युतिक शक्ति का प्रवाह, इसमें हम खो देते हैं। फिर उस झलक की याद, स्मृति मन को पीड़ा देती रहती है। हम वापस उस अनुभव को पाना चाहते हैं, वापस उस अनुभव को पाना चाहते हैं। और वह झलक इतनी छोटी है, एक क्षण में खो जाती है! ठीक से उसकी स्मृति भी नहीं रह जाती कि क्या थी झलक, हमने क्या जाना था? बस एक धुन, एक अर्ज, एक पागल प्रतीक्षा रह जाती है फिर उस अनुभव को पाने की। और जीवन भर आदमी इसी चेष्टा में संलग्न रहता है, लेकिन उस झलक को एक क्षण से ज्यादा नहीं पा सकता है।

वही झलक ध्यान के माध्यम से भी उपलब्ध होती है। मनुष्य की चेतना तक पहुंचने के दो मार्ग हैं--काम और ध्यान, सेक्स और मेडिटेशन। सेक्स प्राकृतिक मार्ग है, जो प्रकृति ने दिया हुआ है। जानवरों को भी दिया हुआ है, पक्षियों को भी दिया हुआ है, पौधों को भी दिया हुआ है, मनुष्यों को भी दिया हुआ है। और जब तक मनुष्य केवल प्रकृति के दिए हुए द्वार का उपयोग करता है, तब तक वह पशुओं से ऊपर नहीं है। नहीं हो सकता। वह सारा द्वार तो पशुओं के लिए भी उपलब्ध है।

मनुष्यता का प्रारंभ उस दिन से होता है, जिस दिन से मनुष्य सेक्स के अतिरिक्त एक नया द्वार खोलने में समर्थ हो जाता है। उसके पहले हम मनुष्य नहीं हैं, नाम मात्र को मनुष्य हैं। उसके पहले हमारे जीवन का केंद्र पशु का केंद्र है, प्रकृति का केंद्र है। तब तक हम उसके ऊपर नहीं उठ पाए, उसे ट्रांसेंड नहीं कर पाए, उसका अतिक्रमण नहीं कर पाए; तब तक हम पशुओं की भांति ही जीते हैं। हमने कपड़े मनुष्यों के पहन रखे हैं, हम भाषा मनुष्यों की बोलते हैं, हमने सारा रूप मनुष्यों का पैदा कर रखा है; लेकिन भीतर गहरे से गहरे मन के तल पर हम पशुओं से ज्यादा नहीं होते। नहीं हो सकते हैं। और इसीलिए जरा सा मौका मिल जाए और हमारी मनुष्यता को जरा सी छूट मिल जाए, तो हम तत्काल पशु हो जाते हैं।

हिंदुस्तान-पाकिस्तान का बंटवारा हुआ। और हमें दिखाई पड़ गया कि आदमी के कपड़ों के भीतर जानवर बैठा हुआ है। हमें दिखाई पड़ गया कि वे लोग जो कल मस्जिद में प्रार्थना करते थे और मंदिर में गीता पढ़ते थे, वे क्या कर रहे हैं? वे हत्याएं कर रहे हैं, वे बलात्कार कर रहे हैं, वे सब कुछ कर रहे हैं! वे ही लोग जो मंदिरों और मस्जिदों में दिखाई पड़ते थे, वे ही लोग बलात्कार करते हुए दिखाई पड़ने लगे! क्या हो गया इनको?

अभी दंगा-फसाद हो जाए, अभी यहां दंगा हो जाए, और यहीं आदमी को दंगे में मौका मिल जाएगा अपनी आदमियत से छुट्टी ले लेने का और फौरन वह जो भीतर छिपा हुआ पशु है, प्रकट हो जाएगा! वह हमेशा तैयार है, वह प्रतीक्षा कर रहा है कि मुझे मौका मिल जाए। भीड़-भाड़ में उसे मौका मिल जाता है, तो वह जल्दी से छोड़ देता है अपना खयाल--वह जो बांध-बूंध कर उसने रखा हुआ है। भीड़ में मौका मिल जाता है उसे भूल जाने का कि मैं भूल जाऊं अपने को!

इसलिए आज तक अकेले आदमियों ने उतने पाप नहीं किए हैं, जितने भीड़ में आदमियों ने पाप किए हैं। अकेला आदमी थोड़ा डरता है कि कोई देख लेगा! अकेला आदमी थोड़ा सोचता है कि मैं यह क्या कर रहा हूं! अकेले आदमी को अपने कपड़ों की थोड़ी फिक्र होती है कि लोग क्या कहेंगे--जानवर हो! लेकिन जब बड़ी भीड़ होती है तो अकेला आदमी कहता है--अब कौन देखता है! अब कौन पहचानता है! वह भीड़ के साथ एक हो जाता है। उसकी आइडेंटिटी मिट जाती है। अब वह फलां नाम का आदमी नहीं है, अब एक बड़ी भीड़ है। और बड़ी भीड़ जो करती है वह भी करता है--हत्या करता है, आग लगाता है, बलात्कार करता है। भीड़ में उसे मौका मिल जाता है कि वह अपने पशु को फिर से छुट्टी दे दे, जो उसके भीतर छिपा है।

और इसीलिए आदमी दस-पांच वर्षों में युद्ध की प्रतीक्षा करने लगता है, दंगों की प्रतीक्षा करने लगता है। अगर हिंदू-मुस्लिम का बहाना मिल जाए तो हिंदू-मुस्लिम सही, अगर हिंदू-मुस्लिम का न मिले तो गुजराती-मराठी भी काम कर सकता है। अगर गुजराती-मराठी न हो, तो हिंदी बोलने वाला और गैर-हिंदी बोलने वाला भी काम कर सकता है। कोई भी बहाना चाहिए आदमी को, उसके भीतर के पशु को छुट्टी चाहिए। वह घबरा जाता है पशु

भीतर बंद रहते-रहते। वह कहता है, मुझे प्रकट होने दो।

और आदमी के भीतर का पशु तब तक नहीं मिटता है, जब तक पशुता का जो सहज मार्ग है, उसके ऊपर मनुष्य की चेतना न उठे। पशुता का सहज मार्ग--हमारी ऊर्जा, हमारी शक्ति का एक ही द्वार है बहने का--वह है सेक्स। और वह द्वार बंद कर दें तो कठिनाई खड़ी हो जाती है। उस द्वार को बंद करने के पहले नये द्वार का उदघाटन होना जरूरी है, जीवन-चेतना नई दिशा में प्रवाहित हो सके।

लेकिन यह हो सकता है; यह आज तक किया नहीं गया। नहीं किया गया, क्योंकि दमन सरल मालूम पड़ा, रूपांतरण कठिन। दबा देना किसी बात को आसान है। बदलना, बदलने की विधि और साधना की जरूरत है। इसलिए हमने सरल मार्ग का उपयोग किया कि दबा दो अपने भीतर।

लेकिन हम यह भूल गए कि दबाने से कोई चीज नष्ट नहीं होती है, दबाने से और बलशाली हो जाती है। और हम यह भी भूल गए कि दबाने से हमारा आकर्षण और गहरा होता है। जिसे हम दबाते हैं, वह हमारी चेतना की और गहरी पर्तों में प्रविष्ट हो जाता है। हम उसे दिन में दबा लेते हैं, वह सपनों में हमारी आंखों में झूलने लगता है। हम उसे रोजमर्रा दबा लेते हैं, वह हमारे भीतर प्रतीक्षा करता है कि कब मौका मिल जाए, कब मैं फूट पड़ूं, निकल पड़ूं। जिसे हम दबाते हैं उससे हम मुक्त नहीं होते, हम और गहरे अर्थों में, और गहराइयों में, और अचेतन में, और अनकांशस तक उसकी जड़ें पहुंच जाती हैं और वह हमें जकड़ लेता है।

आदमी सेक्स को दबाने के कारण ही बंध गया और जकड़ गया। और यही वजह है, पशुओं की तो सेक्स की कोई अवधि होती है, कोई पीरियड होता है वर्ष में; आदमी की कोई अवधि न रही, कोई पीरियड न रहा। आदमी चौबीस घंटे, बारह महीने सेक्सुअल है! सारे जानवरों में कोई जानवर ऐसा नहीं है कि जो बारह महीने और चौबीस घंटे कामुकता से भरा हुआ हो। उसका वक्त है, उसकी ऋतु है; वह आती है और चली जाती है। और फिर उसका स्मरण भी खो जाता है। आदमी को क्या हो गया? आदमी ने दबाया जिस चीज को वह फैल कर उसके चौबीस घंटे और बारह महीने के जीवन पर फैल गई है।

कभी आपने इस पर विचार किया कि कोई पशु हर स्थिति में, हर समय कामुक नहीं होता। लेकिन आदमी हर स्थिति में, हर समय कामुक है। जैसे कामुकता उबल रही है, जैसे कामुकता ही सब कुछ है। यह कैसे हो गया? यह दुर्घटना कैसे संभव हुई है? पृथ्वी पर सिर्फ मनुष्य के साथ हुई है और किसी जानवर के साथ नहीं--क्यों?

एक ही कारण है, सिर्फ मनुष्य ने दबाने की कोशिश की है। और जिसे दबाया, वह जहर की तरह सब तरफ फैल गया। और दबाने के लिए हमें क्या करना पड़ा? दबाने के लिए हमें निंदा करनी पड़ी, दबाने के लिए हमें गाली देनी पड़ी, दबाने के लिए हमें अपमानजनक भावनाएं पैदा करनी पड़ीं। हमें कहना पड़ा कि सेक्स पाप है। हमें कहना पड़ा कि सेक्स नरक है। हमें कहना पड़ा कि जो सेक्स में है, वह गर्हित है, निंदित है। हमें ये सारी गालियां खोजनी पड़ीं, तभी हम दबाने में सफल हो सके। और हमें खयाल भी नहीं कि इन निंदाओं और गालियों के कारण हमारा सारा जीवन जहर से भर गया।

नीत्शे ने एक वचन कहा है, जो बहुत अर्थपूर्ण है। उसने कहा है कि धर्मों ने जहर खिला कर सेक्स को मार डालने की कोशिश की थी। सेक्स मरा तो नहीं, सिर्फ जहरीला होकर ज़िंदा है। मर भी जाता तो ठीक था। वह मरा नहीं। लेकिन और गड़बड़ हो गई बात। वह जहरीला भी हो गया और ज़िंदा है।

यह जो सेक्सुअलिटी है, यह जहरीला सेक्स है। सेक्स तो पशुओं में भी है, काम तो पशुओं में भी है, क्योंकि काम जीवन की ऊर्जा है; लेकिन सेक्सुअलिटी, कामुकता सिर्फ मनुष्य में है। कामुकता पशुओं में नहीं है। पशुओं की आंखों में देखें, वहां कामुकता दिखाई नहीं पड़ेगी। आदमी की आंखों में झांके, वहां एक कामुकता का रस झलकता हुआ दिखाई पड़ेगा। इसलिए पशु आज भी एक तरह से सुंदर है। लेकिन दमन करने वाले पागलों की कोई सीमा नहीं है कि वे कहां तक बढ़ जाएंगे।

मैंने कल आपको कहा था कि अगर हमें दुनिया को सेक्स से मुक्त करना है, तो बच्चे और बच्चियों को एक-दूसरे के निकट लाना होगा। इसके पहले कि उनमें सेक्स जागे--चौदह साल के पहले--वे एक-दूसरे के शरीर से इतने स्पष्ट रूप से परिचित हो लें कि वह आकांक्षा विलीन हो जाए।

लेकिन अमेरिका में अभी-अभी एक नया आंदोलन चला है। और वह नया आंदोलन वहां के बहुत धार्मिक लोग चला रहे हैं। शायद आपको पता भी न हो, वह नया आंदोलन बड़ा अद्भुत है। वह आंदोलन यह है कि सड़कों पर गाय, भैंस, घोड़े, कुत्ते, बिल्ली को भी बिना कपड़ों के नहीं निकाला जाए, उनको कपड़े पहना कर निकाला जाए! उनको भी कपड़े पहनाने चाहिए; क्योंकि नंगे पशुओं को देख कर बच्चे बिगड़ सकते हैं! बड़े मजे की बात है। नंगे पशुओं को देख कर बच्चे बिगड़ सकते हैं। अमेरिका के कुछ नीतिशास्त्री इसके बाबत आंदोलन और संगठन और संस्थाएं बना रहे हैं कि पशुओं को भी सड़कों पर नग्न नहीं लाया जा सके! आदमी को बचाने की इतनी कोशिशें

चल रही हैं। और कोशिश बचाने की जो करने वाले लोग हैं, वे ही आदमी को नष्ट कर रहे हैं।

कभी आपने खयाल किया कि पशु अपनी नग्नता में भी अदभुत है और सुंदर है। उसकी नग्नता में भी वह निर्दोष है, सरल और सीधा है। कभी आपको, पशु नग्न है, यह भी खयाल शायद ही आया हो। जब तक कि आपके भीतर बहुत नंगापन न छिपा हो, तब तक आपको पशु नंगा नहीं दिखाई पड़ सकता है। लेकिन वे जो भयभीत लोग हैं, वे जो डरे हुए लोग हैं, वे भय और डर के कारण सब कुछ कर रहे हैं आज तक। और उनके सब करने से आदमी रोज नीचे से नीचे उतरता जा रहा है।

जरूरत तो यह है कि आदमी भी किसी दिन इतना सरल हो कि नग्न खड़ा हो सके--निर्दोष और आनंद से भरा हुआ। जरूरत तो यह है! जैसे महावीर जैसा व्यक्ति नग्न खड़ा हो गया। लोग कहते हैं कि उन्होंने कपड़े छोड़े, कपड़ों का त्याग किया। मैं कहता हूं, न कपड़े छोड़े, न कपड़ों का त्याग किया; चित्त इतना निर्दोष हो गया होगा, इतना इनोसेंट, जैसे छोटे बच्चों का, तो वे नग्न खड़े हो गए होंगे। क्योंकि ढांकने को जब कुछ भी नहीं रह जाता तो आदमी नग्न हो सकता है। जब तक ढांकने को कुछ है हमारे भीतर, तब तक आदमी अपने को छिपाएगा। जब ढांकने को कुछ भी नहीं है, तो नग्न हो सकता है। चाहिए तो एक ऐसी पृथ्वी कि आदमी भी इतना सरल होगा कि नग्न होने में भी उसे कोई पश्चात्ताप, कोई पीड़ा न होगी। नग्न होने में भी उसे कोई अपराध न होगा।

आज तो हम कपड़े पहन कर भी अपराधी मालूम होते हैं! हम कपड़े पहन कर भी नंगे हैं! और ऐसे लोग भी रहे हैं, जो नग्न होकर भी नग्न नहीं थे।

नंगापन मन की एक वृत्ति है।

सरलता, निर्दोष चित्त--फिर नग्नता भी सार्थक हो जाती है, अर्थपूर्ण हो जाती है; वह भी एक सौंदर्य ले लेती है।

लेकिन अब तक आदमी को जहर पिलाया गया है। और जहर का परिणाम यह हुआ कि हमारा सारा जीवन एक कोने से लेकर दूसरे कोने तक विषाक्त हो गया है।

स्त्रियों को हम कहते हैं, पति को परमात्मा समझना! और उन स्त्रियों को बचपन से सिखाया गया है कि सेक्स पाप है, नरक है। वे कल विवाहित होंगी। वे उस पति को कैसे परमात्मा मान सकेंगी जो उन्हें सेक्स में और नरक में ले जा रहा है? एक तरफ हम सिखाते हैं पति परमात्मा है और पत्नी का अनुभव कहता है कि यही पहला पापी है जो मुझे नरक में घसीट रहा है।

एक बहन ने मुझे आकर कहा--पिछली मीटिंग में जब मैं यहां बोला, भारतीय विद्याभवन में, तो एक बहन मेरे पास उसी दिन आई और उसने कहा--कि मैं बहुत गुस्से में हूं, मैं बहुत क्रोध में हूं। सेक्स तो बड़ी घृणित चीज है। सेक्स तो पाप है। और आपने सेक्स की इतनी बात क्यों की? मैं तो घृणा करती हूं सेक्स को।

अब यह पत्नी है, इसका पति है, इसके बच्चे हैं, बच्चियां हैं; और यह पत्नी सेक्स को घृणा करती है! यह पति को कैसे प्रेम कर सकती है जो इसे सेक्स में ले जा रहा है? यह उन बच्चों को कैसे प्रेम कर सकती है जो सेक्स से पैदा हो रहे हैं? इसका प्रेम जहरीला रहेगा। इसके प्रेम में जहर छिपा रहेगा। पति और इसके बीच एक बुनियादी दीवाल खड़ी रहेगी। बच्चों और इसके बीच एक बुनियादी दीवाल खड़ी रहेगी। क्योंकि वह सेक्स की दीवाल और सेक्स की कंडेमेनशन की वृत्ति बीच में खड़ी है। ये बच्चे पाप से आए हैं। यह पति और मेरे बीच पाप का संबंध है। और जिनके साथ पाप का संबंध है, उनके प्रति हम मैत्रीपूर्ण हो सकते हैं? पाप के प्रति हम मैत्रीपूर्ण हो सकते हैं?

सारी दुनिया का गृहस्थ जीवन नष्ट किया है सेक्स को गाली देने वाले, निंदा करने वाले लोगों ने। और वे इसे नष्ट करके जो दुष्परिणाम लाए हैं, वह यह नहीं है कि सेक्स से लोग मुक्त हो गए हों। जो पति अपनी पत्नी और अपने बीच एक दीवाल पाता है पाप की, वह पत्नी से कभी भी तृप्ति अनुभव नहीं कर पाता। तो आस-पास की स्त्रियों को खोजता है, वेश्याओं को खोजता है। खोजेगा। अगर पत्नी से उसे तृप्ति मिल गई होती तो शायद इस जगत की सारी स्त्रियां उसके लिए मां और बहन हो जातीं। लेकिन पत्नी से भी तृप्ति न मिलने के कारण सारी स्त्रियां उसे पोर्टेशियल औरतों की तरह, पोर्टेशियल पत्नियों की तरह मालूम पड़ती हैं, जिनको पत्नी में बदला जा सकता है।

यह स्वाभाविक है, यह होने वाला था। यह होने वाला था, क्योंकि जहां तृप्ति मिल सकती थी, वहां जहर है, वहां पाप है, और तृप्ति नहीं मिलती है। और वह चारों तरफ भटकता है और खोजता है। और क्या-क्या ईजादें करता है खोज कर आदमी! अगर उन सारी ईजादों को हम सोचने बैठें तो घबरा जाएंगे कि आदमी ने क्या-क्या ईजादें की हैं! लेकिन एक बुनियादी बात पर खयाल नहीं किया कि वह जो प्रेम का कुआं था, वह जो काम का कुआं था, वह जहरीला बना दिया गया है।

और जब पति और पत्नी के बीच जहर का भाव हो, घबराहट का भाव हो, पाप का भाव हो, तो फिर यह पाप की भावना रूपांतरण नहीं करने देगी। अन्यथा मेरी समझ यह है कि एक पति और पत्नी अगर एक-दूसरे के प्रति

समझपूर्वक प्रेम से भरे हुए, आनंद से भरे हुए और सेक्स के प्रति बिना निंदा के सेक्स को समझने की चेष्टा करेंगे, तो आज नहीं कल उनके बीच का संबंध रूपांतरित हो जाने वाला है। यह हो सकता है कि कल वही पत्नी मां जैसी दिखाई पड़ने लगे।

गांधीजी उन्नीस सौ तीस के करीब श्रीलंका गए थे। उनके साथ कस्तूरबा साथ थीं। संयोजकों ने समझा कि शायद गांधीजी की मां साथ आई हुई हैं, क्योंकि गांधीजी कस्तूरबा को खुद भी बा ही कहते थे। लोगों ने समझा कि शायद उनकी मां होंगी। संयोजकों ने परिचय देते हुए कहा कि गांधीजी आए हैं और बड़े सौभाग्य की बात है कि उनकी मां भी साथ आई हुई हैं। वह उनके बगल में बैठी हुई हैं।

गांधीजी के सेक्रेटरी तो घबरा गए कि यह तो भूल हमारी है, हमें बताना था कि साथ में कौन है। लेकिन अब तो बड़ी देर हो चुकी थी। गांधी तो मंच पर जाकर बैठ भी गए थे और बोलना शुरू कर दिया था। सेक्रेटरी घबड़ाए हुए हैं कि गांधी पीछे क्या कहेंगे! उन्हें कल्पना भी नहीं हो सकती थी कि गांधी नाराज नहीं होंगे, क्योंकि ऐसे पुरुष बहुत कम हैं जो पत्नी को मां बनाने में समर्थ हो जाते हैं। लेकिन गांधीजी ने कहा कि सौभाग्य की बात है कि जिन मित्र ने मेरा परिचय दिया है, उन्होंने भूल से एक सच्ची बात कह दी है। कस्तूरबा कुछ वर्षों से मेरी मां हो गई है। कभी वह मेरी पत्नी थी। लेकिन अब वह मेरी मां है।

इस बात की संभावना है कि अगर पति और पत्नी काम को, संभोग को समझने की चेष्टा करें, तो एक-दूसरे के मित्र बन सकते हैं और एक-दूसरे के काम के रूपांतरण में सहयोगी और साथी हो सकते हैं। और जिस दिन कोई पति और पत्नी अपने आपस के संभोग के संबंध को रूपांतरित करने में सफल हो जाते हैं, उस दिन उनके जीवन में पहली दफे एक-दूसरे के प्रति अनुग्रह और ग्रेटिट्यूड का भाव पैदा होता है, उसके पहले नहीं। उसके पहले वे एक-दूसरे के प्रति क्रोध से भरे रहते हैं, उसके पहले वे एक-दूसरे के बुनियादी शत्रु बने रहते हैं, उसके पहले उनके बीच एक संघर्ष है, मैत्री नहीं।

मैत्री उस दिन शुरू होती है जिस दिन वे एक-दूसरे के साथी बनते हैं और उनके काम की ऊर्जा को रूपांतरण करने में माध्यम बन जाते हैं। उस दिन एक अनुग्रह, एक ग्रेटिट्यूड, एक कृतज्ञता का भाव ज्ञापन होता है। उस दिन पुरुष आदर से भरता है स्त्री के प्रति, क्योंकि स्त्री ने उसे कामवासना से मुक्त होने में सहायता पहुंचाई। उस दिन स्त्री अनुगृहीत होती है पुरुष के प्रति कि उसने उसे साथ दिया और उसकी वासना से मुक्ति दिलवाई। उस दिन वे सच्ची मैत्री में बंधते हैं, जो काम की नहीं, प्रेम की मैत्री है। उस दिन उनका जीवन ठीक उस दिशा में जाता है, जहां पत्नी के लिए पति परमात्मा हो जाता है और पति के लिए पत्नी परमात्मा हो जाती है--उस दिन!

लेकिन वह कुआं तो विषाक्त कर दिया गया है। इसलिए मैंने कल कहा कि मुझसे बड़ा शत्रु सेक्स का खोजना कठिन है। लेकिन मेरी शत्रुता का यह मतलब नहीं है कि मैं सेक्स को गाली दूं और निंदा करूं। मेरी शत्रुता का मतलब यह है कि मैं सेक्स को रूपांतरित करने के संबंध में दिशा-सूचन करूं। मैं आपको कहूं कि वह कैसे रूपांतरित हो सकता है। मैं कोयले का दुश्मन हूं, क्योंकि मैं कोयले को हीरा बनाना चाहता हूं। मैं सेक्स को रूपांतरित करना चाहता हूं। वह कैसे रूपांतरित होगा? उसकी क्या विधि होगी?

मैंने आपसे कहा, एक द्वार खोलना जरूरी है--नया द्वार।

बच्चे जैसे ही पैदा होते हैं, वैसे ही उनके जीवन में सेक्स का आगमन नहीं हो जाता है। अभी देर है। अभी शरीर शक्ति इकट्ठी करेगा। अभी शरीर के अणु मजबूत होंगे। अभी उस दिन की प्रतीक्षा है जब शरीर पूरा तैयार हो जाएगा, ऊर्जा इकट्ठी होगी। और द्वार जो बंद रहा है चौदह वर्षों तक, वह खुल जाएगा ऊर्जा के धक्के से, और सेक्स की दुनिया शुरू होगी। एक बार द्वार खुल जाने के बाद नया द्वार खोलना कठिन हो जाता है। क्योंकि समस्त ऊर्जाओं का नियम यह है, समस्त शक्तियों का, वे एक दफा अपना मार्ग खोज लें बहने के लिए तो वे उसी मार्ग से बहना पसंद करती हैं।

गंगा बह रही है सागर की तरफ, उसने एक बार रास्ता खोज लिया। अब वह उसी रास्ते से बही चली जाती है, बही चली जाती है। रोज-रोज नया पानी आता है, उसी रास्ते से बहता हुआ चला जाता है। गंगा रोज नये रास्ते नहीं खोजती है।

जीवन की ऊर्जा भी एक रास्ता खोज लेती है, फिर वह उसी से बहती चली जाती है। अगर जमीन को कामुकता से मुक्त करना है, तो सेक्स का रास्ता खुलने के पहले नया रास्ता--ध्यान का रास्ता--तोड़ देना जरूरी है। एक-एक छोटे बच्चे को ध्यान की अनिवार्य शिक्षा और दीक्षा मिलनी चाहिए।

पर हम तो उसे सेक्स के विरोध की दीक्षा देते हैं, जो कि अत्यंत मूर्खतापूर्ण है। सेक्स के विरोध की दीक्षा नहीं देनी है। शिक्षा देनी है ध्यान की, पाजिटिव, कि वह ध्यान को कैसे उपलब्ध हो। और बच्चे ध्यान को जल्दी उपलब्ध हो सकते हैं। क्योंकि अभी उनकी ऊर्जा का कोई भी द्वार खुला नहीं है। अभी द्वार बंद है, अभी ऊर्जा संरक्षित है,

अभी कहीं भी नये द्वार पर धक्के दिए जा सकते हैं और नया द्वार खोला जा सकता है। फिर यही बूढ़े हो जाएंगे और इन्हें ध्यान में पहुंचना अत्यंत कठिन हो जाएगा।

ऐसे ही, जैसे एक नया पौधा पैदा होता है, उसकी शाखाएं कहीं भी झुक जाती हैं, कहीं भी झुकाई जा सकती हैं। फिर वही बूढ़ा वृक्ष हो जाता है। फिर हम उसकी शाखाओं को झुकाने की कोशिश करते हैं। फिर शाखाएं टूट जाती हैं, झुकती नहीं।

बूढ़े लोग ध्यान की चेष्टा करते हैं दुनिया में, जो बिल्कुल ही गलत है। ध्यान की सारी चेष्टा छोटे बच्चों पर की जानी चाहिए। लेकिन मरने के करीब पहुंच कर आदमी ध्यान में उत्सुक होता है! वह पूछता है--ध्यान क्या? योग क्या? हम कैसे शांत हो जाएं? जब जीवन की सारी ऊर्जा खो गई, जब जीवन के सब रास्ते सख्त और मजबूत हो गए, जब झुकना और बदलना मुश्किल हो गया, तब वह पूछता है, अब मैं कैसे बदल जाऊं? एक पैर आदमी कब्र में डाल लेता है और दूसरा पैर बाहर रख कर पूछता है, ध्यान का कोई रास्ता है?

अजीब सी बात है। बिल्कुल पागलपन की बात है। यह पृथ्वी कभी भी शांत और ध्यानस्थ नहीं हो सकेगी, जब तक ध्यान का संबंध पहले दिन के पैदा हुए बच्चे से हम न जोड़ेंगे। अंतिम दिन के वृद्ध से नहीं जोड़ा जा सकता। व्यर्थ ही हमें बहुत श्रम उठाना पड़ता है बाद के दिनों में शांत होने के लिए, जो कि पहले एकदम हो सकता था।

छोटे बच्चों को ध्यान की दीक्षा, काम के रूपांतरण का पहला चरण है--शांत होने की दीक्षा, निर्विचार होने की दीक्षा, मौन होने की दीक्षा। बच्चे ऐसे भी मौन हैं, बच्चे ऐसे भी शांत हैं। अगर उन्हें थोड़ी सी दिशा दी जाए और उन्हें मौन और शांत होने के लिए घड़ी भर की शिक्षा दी जाए, तो जब वे चौदह वर्ष के होने के करीब आएंगे, जब काम जगेगा, तब तक उनका एक द्वार खुल चुका होगा। शक्ति इकट्ठी होगी और जो द्वार खुला है उसी द्वार से बहनी शुरू हो जाएगी। उन्हें शांति का, आनंद का, कालहीनता का, निरहंकार भाव का अनुभव सेक्स के बहुत अनुभव के पहले उपलब्ध हो जाएगा। वही अनुभव उनकी ऊर्जा को गलत मार्गों से रोकेगा और ठीक मार्गों पर ले आएगा।

लेकिन हम छोटे-छोटे बच्चों को ध्यान तो नहीं सिखाते, काम का विरोध सिखाते हैं! पाप है, गंदगी है, कुरूपता है, बुराई है, नरक है--यह सब हम बताते हैं! और इस सबके बताने से कुछ भी फर्क नहीं पड़ता, कुछ भी फर्क नहीं पड़ता। बल्कि हमारे बताने से वे और भी आकर्षित होते हैं और तलाश करते हैं कि क्या है यह गंदगी, क्या है यह नरक, जिसके लिए बड़े इतने भयभीत और बेचैन हैं?

और फिर थोड़े ही दिनों में उन्हें यह भी पता चल जाता है कि बड़े जिस बात से हमें रोकने की कोशिश कर रहे हैं, खुद दिन-रात उसी में लीन हैं। और जिस दिन उन्हें यह पता चल जाता है, मां-बाप के प्रति सारी श्रद्धा समाप्त हो जाती है।

मां-बाप के प्रति श्रद्धा समाप्त करने में शिक्षा का हाथ नहीं है। मां-बाप के प्रति श्रद्धा समाप्त करने में मां-बाप का अपना हाथ है। आप जिन बातों के लिए बच्चों को गंदा कहते हैं, बच्चे बहुत जल्दी पता लगा लेते हैं कि उन सारी गंदगियों में आप भलीभांति लवलीन हैं। आपकी दिन की जिंदगी दूसरी है और रात की दूसरी। आप कहते कुछ हैं, करते कुछ हैं। छोटे बच्चे बहुत एक्यूट आब्जर्वर होते हैं। वे बहुत गौर से निरीक्षण करते रहते हैं कि क्या हो रहा है घर में! वे देखते हैं कि मां जिस बात को गंदा कहती है, बाप जिस बात को गंदा कहता है, वही गंदी बात दिन-रात घर में चल रही है। इसका उन्हें बहुत जल्दी बोध हो जाता है। उनका सारा श्रद्धा का भाव विलीन हो जाता है--कि धोखेबाज हैं ये मां-बाप! पाखंडी हैं! हिपोक्रेट हैं! ये बातें कुछ और कहते हैं, करते कुछ और हैं।

और जिन बच्चों का मां-बाप पर से विश्वास उठ गया, वे बच्चे परमात्मा पर कभी विश्वास नहीं कर सकेंगे, इसको याद रखना। क्योंकि बच्चों के लिए परमात्मा का पहला दर्शन मां-बाप में होता है। अगर वही खंडित हो गया, तो ये बच्चे भविष्य में नास्तिक हो जाने वाले हैं। बच्चों को पहले परमात्मा की प्रतीति अपने मां-बाप की पवित्रता से होती है। पहली दफा बच्चे मां-बाप को ही जानते हैं निकटतम और उनसे ही उन्हें पहली दफा श्रद्धा और रिक्वेरेंस का भाव पैदा होता है। अगर वही खंडित हो गया, तो इन बच्चों को मरते दम तक वापस परमात्मा के रास्ते पर लाना मुश्किल हो जाएगा। क्योंकि पहला परमात्मा ही धोखा दे गया। जो मां थी, जो बाप था, वही धोखेबाज सिद्ध हुआ।

आज सारी दुनिया में जो लड़के यह कह रहे हैं कि कोई परमात्मा नहीं है, कोई आत्मा नहीं है, कोई मोक्ष नहीं है, धर्म सब बकवास है--उसका कारण यह नहीं है कि लड़कों ने पता लगा लिया है कि आत्मा नहीं है, परमात्मा नहीं है। उसका कारण यह है कि लड़कों ने मां-बाप का पता लगा लिया है कि वे धोखेबाज हैं। और यह सारा धोखा सेक्स के आस-पास केंद्रित है। यह सारा धोखा सेक्स के केंद्र पर खड़ा हुआ है।

बच्चों को यह सिखाने की जरूरत नहीं कि सेक्स पाप है, बल्कि ईमानदारी से यह सिखाने की जरूरत है कि

सेक्स जिंदगी का एक हिस्सा है और तुम सेक्स से ही पैदा हुए हो और हमारी जिंदगी में वह है। ताकि बच्चे सरलता से मां-बाप को समझ सकें और जब जीवन को वे जानें तो वे आदर से भर सकें कि मां-बाप सच्चे और ईमानदार थे। उनको जीवन में आस्तिक बनाने में इससे बड़ा सबल और कुछ भी नहीं होगा कि वे अपने मां-बाप को सच्चा और ईमानदार अनुभव कर सकें।

लेकिन आज सब बच्चे जानते हैं कि मां-बाप बेईमान और धोखेबाज हैं। यह बच्चे और मां-बाप के बीच एक कलह का कारण बनता है। सेक्स का दमन पति और पत्नी को तोड़ दिया है। मां-बाप और बच्चों को तोड़ दिया है।

नहीं, सेक्स का विरोध नहीं, निंदा नहीं, बल्कि सेक्स की शिक्षा दी जानी चाहिए। जैसे ही बच्चे पूछने को तैयार हो जाएं, जो भी जरूरी मालूम पड़े, जो उनके समझ के योग्य मालूम पड़े, वह सब उन्हें बता दिया जाना चाहिए। ताकि वे सेक्स के संबंध में अति उत्सुक न हों; ताकि उनका आकर्षण न पैदा हो; ताकि वे दीवाने होकर गलत रास्तों से जानकारी पाने की कोशिश न करें।

आज बच्चे सब जानकारी पा लेते हैं यहां-वहां से। गलत मार्गों से, गलत लोगों से उन्हें जानकारी मिलती है, जो जीवन भर उन्हें पीड़ा देती है। और मां-बाप और उनके बीच एक मौन की दीवार होती है, जैसे मां-बाप को कुछ भी पता नहीं और बच्चों को भी कुछ पता नहीं! उन्हें सेक्स की सम्यक शिक्षा मिलनी चाहिए--राइट एजुकेशन।

और दूसरी बात, उन्हें ध्यान की दीक्षा मिलनी चाहिए--कैसे मौन हों, कैसे शांत हों, कैसे निर्विचार हों। और बच्चे तत्क्षण निर्विचार हो सकते हैं, मौन हो सकते हैं, शांत हो सकते हैं। चौबीस घंटे में एक घंटे अगर बच्चों को घर में मौन में ले जाने की व्यवस्था हो--निश्चित ही, वे मौन में तभी जा सकेंगे, जब आप भी उनके साथ मौन बैठ सकें। हर घर में एक घंटा मौन का अनिवार्य होना चाहिए। एक दिन खाना न मिले घर में तो चल सकता है, लेकिन एक घंटा मौन के बिना घर नहीं चल सकता है। वह घर झूठा है, उस घर को परिवार कहना गलत है, जिस परिवार में एक घंटे के मौन की दीक्षा नहीं है।

वह एक घंटे का मौन चौदह वर्षों में उस दरवाजे को तोड़ देगा--रोज धक्के मारेगा--उस दरवाजे को तोड़ देगा, जिसका नाम ध्यान है। जिस ध्यान से मनुष्य को समयहीन, टाइमलेसनेस, ईगोलेसनेस, अहंकार-शून्य अनुभव होता है, जहां से आत्मा की झलक मिलती है। वह झलक सेक्स के अनुभव के पहले मिल जानी जरूरी है। अगर वह झलक मिल जाए तो सेक्स के प्रति अतिशय दौड़ समाप्त हो जाएगी। ऊर्जा इस नये मार्ग से बहने लगेगी।

यह मैं पहला चरण कहता हूं। ब्रह्मचर्य की साधना में, सेक्स के ऊपर उठने की साधना में, सेक्स की ऊर्जा के ट्रांसफार्मेशन के लिए पहला चरण है ध्यान। और दूसरा चरण है प्रेम। बच्चे को बचपन से ही प्रेम की दीक्षा दी जानी चाहिए।

हम अब तक यही सोचते रहे हैं कि प्रेम की शिक्षा मनुष्य को सेक्स में ले जाएगी। यह बात अत्यंत भ्रांत है। सेक्स की शिक्षा तो मनुष्य को प्रेम में ले जा सकती है, लेकिन प्रेम की शिक्षा कभी किसी मनुष्य को सेक्स में नहीं ले जाती। बल्कि सच्चाई उलटी है। जितना प्रेम विकसित होता है, उतनी ही सेक्स की ऊर्जा प्रेम में रूपांतरित होकर बंटनी शुरू हो जाती है।

जो लोग जितने कम प्रेम से भरे होते हैं, उतने ही ज्यादा कामुक होंगे, उतने ही सेक्सुअल होंगे।

जिनके जीवन में जितना कम प्रेम है, उनके जीवन में उतनी ही ज्यादा घृणा होगी।

जिनके जीवन में जितना कम प्रेम है, उनके जीवन में उतना ही विद्वेष होगा।

जिनके जीवन में जितना कम प्रेम है, उनके जीवन में उतनी ही ईर्ष्या होगी।

जिनके जीवन में जितना कम प्रेम है, उतनी ही उनके जीवन में प्रतिस्पर्धा होगी।

जिनके जीवन में जितना कम प्रेम है, उनके जीवन में उतनी ही चिंता और दुख होगा।

दुख, चिंता, ईर्ष्या, घृणा, द्वेष, इन सबसे जो आदमी जितना ज्यादा घिरा है, उसकी शक्तियां सारी की सारी भीतर इकट्ठी हो जाती हैं। उनके निकास का कोई मार्ग नहीं रह जाता। उनके निकास का एक ही मार्ग रह जाता है--वह सेक्स है।

प्रेम शक्तियों का निकास बनता है। प्रेम बहाव है। क्रिएशन, सृजनात्मक है प्रेम, इसलिए वह बहता है और एक तृप्ति लाता है। वह तृप्ति सेक्स की तृप्ति से बहुत ज्यादा कीमती और गहरी है। जिसे वह तृप्ति मिल गई--वह फिर कंकड़-पत्थर नहीं बीनता, जिसे हीरे-जवाहरात मिलने शुरू हो जाते हैं।

लेकिन घृणा से भरे आदमी को वह तृप्ति कभी नहीं मिलती है। घृणा में वह तोड़ देता है चीजों को। लेकिन तोड़ने से कभी किसी आदमी को कोई तृप्ति नहीं मिलती। तृप्ति मिलती है निर्माण करने से। द्वेष से भरा आदमी संघर्ष करता है। लेकिन संघर्ष से कोई तृप्ति नहीं मिलती। तृप्ति मिलती है दान से, देने से; छीन लेने से नहीं। संघर्ष करने

वाला छीन लेता है। छीनने से वह तृप्ति कभी नहीं मिलती, जो किसी को दे देने से और दान से उपलब्ध होती है।

महत्वाकांक्षी आदमी एक पद से दूसरे पद की यात्रा करता रहता है, लेकिन कभी भी शांत नहीं हो पाता। शांत वे होते हैं, जो पदों की यात्रा नहीं, बल्कि प्रेम की यात्रा करते हैं। जो प्रेम के एक तीर्थ से दूसरे तीर्थ की यात्रा करते हैं।

जितना आदमी प्रेमपूर्ण होता है, उतनी तृप्ति, एक कंटेंटमेंट, एक गहरा संतोष, एक आनंद का भाव, एक उपलब्धि का भाव उसके प्राणों के रग-रग में बहने लगता है। उसके सारे शरीर से एक रस झलकने लगता है, जो तृप्ति का रस है, जो आनंद का रस है। वैसा तृप्त आदमी सेक्स की दिशाओं में नहीं जाता। जाने के लिए, रोकने के लिए चेष्टा नहीं करनी पड़ती; वह जाता ही नहीं। क्योंकि यही तृप्ति क्षण भर को सेक्स से मिलती थी, प्रेम से यह तृप्ति चौबीस घंटे को मिल जाती है।

तो दूसरी दिशा है--कि व्यक्तित्व का अधिकतम विकास प्रेम के मार्गों पर होना चाहिए। हम प्रेम करें, हम प्रेम दें, हम प्रेम में जीएं। और जरूरी नहीं है कि हम प्रेम मनुष्य को ही देंगे तभी प्रेम की दीक्षा होगी। प्रेम की दीक्षा तो पूरे व्यक्तित्व के प्रेमपूर्ण होने की दीक्षा है, वह तो टु बी लविंग होने की दीक्षा है। एक पत्थर को भी हम उठाएं तो ऐसे उठा सकते हैं जैसे मित्र को उठा रहे हैं, और एक आदमी का हाथ भी हम ऐसे पकड़ सकते हैं जैसे शत्रु का हाथ पकड़े हुए हैं। एक आदमी वस्तुओं के साथ भी प्रेमपूर्ण व्यवहार कर सकता है, एक आदमी आदमियों के साथ भी ऐसा व्यवहार करता है जैसा वस्तुओं के साथ भी नहीं करना चाहिए। घृणा से भरा हुआ आदमी वस्तुएं समझता है मनुष्यों को। प्रेम से भरा हुआ आदमी वस्तुओं को भी व्यक्तित्व देता है।

एक फकीर से मिलने एक जर्मन यात्री गया हुआ था। वह किसी क्रोध में होगा। उसने दरवाजे पर जोर से जूते खोल दिए, जूतों को पटका, धक्का दिया दरवाजे को जोर से।

क्रोध में आदमी जूते भी खोलता है तो ऐसे जैसे जूते दुश्मन हों। दरवाजा भी खोलता है तो ऐसे जैसे दरवाजे से कोई झगड़ा हो!

दरवाजे को धक्का देकर वह भीतर गया। उस फकीर से जाकर नमस्कार किया। उस फकीर ने कहा कि नहीं, अभी मैं नमस्कार का उत्तर न दे सकूंगा। पहले तुम दरवाजे से और जूतों से क्षमा मांग आओ।

उस आदमी ने कहा, आप पागल हो गए हैं? दरवाजों और जूतों से क्षमा! क्या उनका भी कोई व्यक्तित्व है?

उस फकीर ने कहा, तुमने क्रोध करते समय कभी भी न सोचा कि इनका कोई व्यक्तित्व है। तुमने जूते ऐसे पटके जैसे उनमें जान हो, जैसे उनका कोई कसूर हो; तुमने दरवाजा ऐसे खोला जैसे कि तुम दुश्मन हो। नहीं, जब तुमने क्रोध करते वक्त उनका व्यक्तित्व मान लिया, तो पहले जाओ क्षमा मांग कर आ जाओ, तब मैं तुमसे आगे बात करूंगा, अन्यथा मैं बात करने को नहीं हूं।

अब वह आदमी दूर जर्मनी से उस फकीर को मिलने गया था, इतनी सी बात पर मुलाकात न हो सकेगी। मजबूरी थी। उसे जाकर दरवाजे पर हाथ जोड़ कर क्षमा मांगनी पड़ी कि मित्र, क्षमा कर दो! जूतों को कहना पड़ा, माफ करिए, भूल हो गई हमने जो आपको इस भांति गुस्से में खोला!

उस जर्मन यात्री ने लिखा है कि लेकिन जब मैं क्षमा मांग रहा था तो पहले तो मुझे हंसी आई कि मैं क्या पागलपन कर रहा हूं! लेकिन जब मैं क्षमा मांग चुका तो मैं हैरान हुआ, मुझे एक इतनी शांति मालूम हुई जिसकी मुझे कल्पना नहीं हो सकती थी कि दरवाजे और जूतों से क्षमा मांग कर शांति मिल सकती है! मैं जाकर उस फकीर के पास बैठा, वह हंसने लगा। और उसने कहा, अब ठीक, अब कुछ बात हो सकती है। तुमने थोड़ा प्रेम जाहिर किया, अब तुम संबंधित हो सकते हो, समझ भी सकते हो; क्योंकि अब तुम प्रफुल्लित हो, अब तुम आनंद से भर गए हो।

सवाल मनुष्यों के साथ ही प्रेमपूर्ण होने का नहीं, प्रेमपूर्ण होने का है। यह सवाल नहीं है कि मां को प्रेम दो! ये गलत बातें हैं। जब कोई मां अपने बच्चे को कहती है कि मैं तेरी मां हूं इसलिए प्रेम कर, तब वह गलत शिक्षा दे रही है। क्योंकि जिस प्रेम में 'इसलिए' लगा हुआ है, 'देयरफोर', वह प्रेम झूठा है। जो कहता है, इसलिए प्रेम करो कि मैं बाप हूं, वह गलत शिक्षा दे रहा है। वह कारण बता रहा है प्रेम का। प्रेम अकारण होता है, प्रेम कारण सहित नहीं होता। मां कहती है, मैं तेरी मां हूं, मैंने तुझे इतने दिन पाला-पोसा, बड़ा किया, इसलिए प्रेम कर! वह वजह बता रही है, प्रेम खत्म हो गया। अगर वह प्रेम भी होगा तो बच्चा झूठा प्रेम दिखाने की कोशिश करेगा--क्योंकि यह मां है, इसलिए प्रेम दिखाना पड़ रहा है।

नहीं, प्रेम की शिक्षा का मतलब है: प्रेम का कारण नहीं, प्रेमपूर्ण होने की सुविधा और व्यवस्था कि बच्चा प्रेमपूर्ण हो सके।

जो मां कहती है, मुझसे प्रेम कर, क्योंकि मैं मां हूं, वह प्रेम नहीं सिखा रही। उसे यह कहना चाहिए कि यह तेरा

व्यक्तित्व, यह तेरे भविष्य, यह तेरे आनंद की बात है कि जो भी तेरे मार्ग पर पड़ जाए, तू उससे प्रेमपूर्ण हो--पत्थर पड़ जाए, फूल पड़ जाए, आदमी पड़ जाए, जानवर पड़ जाए। यह सवाल जानवर को प्रेम देने का नहीं, फूल को प्रेम देने का नहीं, मां को प्रेम देने का नहीं, तेरे प्रेमपूर्ण होने का है! क्योंकि तेरा भविष्य इस पर निर्भर करेगा कि तू कितना प्रेमपूर्ण है, तेरा व्यक्तित्व कितना प्रेम से भरा हुआ है, उतना तेरे जीवन में आनंद की संभावना बढ़ेगी।

प्रेमपूर्ण होने की शिक्षा चाहिए मनुष्य को, तो वह कामुकता से मुक्त हो सकता है।

लेकिन हम तो प्रेम की कोई शिक्षा नहीं देते। हम तो प्रेम का कोई भाव पैदा नहीं करते। हम तो प्रेम के नाम पर भी जो बातें करते हैं, वह झूठ ही सिखाते हैं उनको।

क्या आपको पता है कि एक आदमी एक के प्रति प्रेमपूर्ण है और दूसरे के प्रति घृणापूर्ण हो सकता है? यह असंभव है। प्रेमपूर्ण आदमी प्रेमपूर्ण होता है, आदमियों से कोई संबंध नहीं है उस बात का। अकेले में बैठता है तो भी प्रेमपूर्ण होता है। कोई नहीं होता तो भी प्रेमपूर्ण होता है। प्रेमपूर्ण होना उसके स्वभाव की बात है। वह आपसे संबंधित होने का सवाल नहीं।

क्रोधी आदमी अकेले में भी क्रोधपूर्ण होता है। घृणा से भरा आदमी अकेले में भी घृणा से भरा होता है। वह अकेले भी बैठा है तो आप उसको देख कर कह सकते हैं कि यह आदमी क्रोधी है। हालांकि वह किसी पर क्रोध नहीं कर रहा है। लेकिन उसका सारा व्यक्तित्व क्रोधी है। प्रेमपूर्ण आदमी अगर अकेले में भी बैठा है तो आप कहेंगे, यह आदमी कितने प्रेम से भरा हुआ बैठा है।

फूल एकांत में खिलते हैं जंगल के तो वहां भी सुगंध बिखेरते रहते हैं, चाहे कोई सूंघने वाला हो या न हो। रास्ते से कोई निकले या न निकले, फूल सुगंधित होता रहता है। फूल का सुगंधित होना स्वभाव है। इस भूल में आप मत पड़ना कि आपके लिए सुगंधित हो रहा है।

प्रेमपूर्ण होना व्यक्तित्व बनाना चाहिए। वह हमारा व्यक्तित्व हो, इससे कोई संबंध नहीं कि वह किसके प्रति।

लेकिन जितने प्रेम करने वाले लोग हैं, वे सोचते हैं कि मेरे प्रति प्रेमपूर्ण हो जाए, और किसी के प्रति नहीं। और उनको पता नहीं कि जो सबके प्रति प्रेमपूर्ण नहीं, वह किसी के प्रति प्रेमपूर्ण नहीं हो सकता! पत्नी कहती है पति से, मुझे प्रेम करना बस! फिर आ गया स्टाप, फिर इधर-उधर कहीं देखना मत, फिर और कहीं तुम्हारे प्रेम की जरा सी धारा न बहे, बस प्रेम यानी इस तरफ। और उस पत्नी को पता नहीं कि यह प्रेम झूठा वह अपने हाथ से किए ले रही है। जो पति प्रेमपूर्ण नहीं है हर स्थिति में, हरेक के प्रति, वह पत्नी के प्रति भी प्रेमपूर्ण कैसे हो सकता है? प्रेमपूर्ण चौबीस घंटे के जीवन का स्वभाव

है। वह ऐसी कोई बात नहीं कि हम किसी के प्रति प्रेमपूर्ण हो जाएं और किसी के प्रति प्रेमहीन हो जाएं।

लेकिन आज तक मनुष्यता इसको समझने में समर्थ नहीं हो पाई! बाप कहता है कि मेरे प्रति प्रेमपूर्ण! लेकिन घर में जो चपरासी है उसके प्रति? वह तो नौकर है! लेकिन उसे पता नहीं कि जो बेटा एक बूढ़े नौकर के प्रति प्रेमपूर्ण नहीं हो पाया है--वह बूढ़ा नौकर भी किसी का बाप है--वह आज नहीं कल जब उसका बाप भी बूढ़ा हो जाएगा, उसके प्रति भी प्रेमपूर्ण नहीं रह जाएगा। तब यह बाप पछताएगा कि मेरा लड़का मेरे प्रति प्रेमपूर्ण नहीं है। लेकिन इस बाप को पता ही नहीं कि लड़का प्रेमपूर्ण हो सकता था उसके प्रति भी, अगर जो भी आस-पास थे, सबके प्रति प्रेमपूर्ण होने की शिक्षा दी गई होती तो वह इसके प्रति भी प्रेमपूर्ण होता।

प्रेम स्वभाव की बात है, संबंध की बात नहीं है।

प्रेम रिलेशनशिप नहीं है, प्रेम है स्टेट ऑफ माइंड। वह मनुष्य के व्यक्तित्व का भीतरी अंग है।

तो हमें प्रेमपूर्ण होने की दूसरी दीक्षा दी जानी चाहिए--एक-एक चीज के प्रति। अगर बच्चा एक किताब को भी गलत ढंग से रखे तो गलती बात है, उसे उसी क्षण टोकना चाहिए कि यह तुम्हारे व्यक्तित्व के लिए शोभादायक नहीं कि तुम इस भांति किताब को रखो। कोई देखेगा, कोई सुनेगा, कोई पाएगा कि तुम किताब के साथ दुर्व्यवहार किए हो! तुम एक कुत्ते के साथ गलत ढंग से पेश आए हो! यह तुम्हारे व्यक्तित्व की गलती है।

एक फकीर के बाबत मुझे खयाल आता है। एक छोटा सा फकीर का झोपड़ा था। रात थी, जोर से वर्षा होती थी। रात के बारह बजे होंगे, फकीर और उसकी पत्नी दोनों सोते थे, किसी आदमी ने दरवाजे पर दस्तक दी। छोटा था झोपड़ा, कोई शायद शरण चाहता है। उसकी पत्नी से उसने कहा कि द्वार खोल दे, कोई द्वार पर खड़ा है, कोई यात्री, कोई अपरिचित मित्र।

सुनते हैं उसकी बात? उसने कहा, कोई अपरिचित मित्र! हमारे तो जो परिचित हैं, वे भी मित्र नहीं होते। उसने कहा, कोई अपरिचित मित्र! यह प्रेम का भाव है।

कोई अपरिचित मित्र द्वार पर खड़ा है, द्वार खोल!

उसकी पत्नी ने कहा, लेकिन जगह तो बहुत कम है, हम दो के लायक ही मुश्किल से है। कोई तीसरा आदमी

भीतर आएगा तो हम क्या करेंगे?

उस फकीर ने कहा, पागल, यह किसी अमीर का महल नहीं है कि छोटा पड़ जाए, यह गरीब की झोपड़ी है। अमीर का महल छोटा पड़ जाता है हमेशा, एक मेहमान आ जाए तो महल छोटा पड़ जाता है। यह गरीब की झोपड़ी है।

उसकी पत्नी ने कहा, इसमें झोपड़ी...अमीर और गरीब क्या सवाल? जगह छोटी है।

उस फकीर ने कहा, जहां दिल में जगह बड़ी हो वहां झोपड़ा महल की तरह मालूम होता है और जहां दिल में छोटी जगह हो वहां झोपड़ा तो क्या महल भी छोटा और झोपड़ा हो जाता है। द्वार खोल दे! द्वार पर खड़े हुए आदमी को वापस कैसे लौटाया जा सकता है? अभी हम दोनों लेटे थे, अब तीन लेट नहीं सकेंगे, तीनों बैठेंगे, बैठने के लिए काफी जगह है।

मजबूरी थी, पत्नी को दरवाजा खोल देना पड़ा। एक मित्र आ गया, पानी से भीगा हुआ। उसके कपड़े बदले। फिर वे तीनों बैठ कर गपशप करने लगे। दरवाजा फिर बंद है।

फिर किन्हीं दो आदमियों ने दरवाजे पर दस्तक दी। अब उस फकीर ने उस मित्र को कहा--वह दरवाजे के पास था--कि दरवाजा खोल दो, मालूम होता है कोई आया।

उस आदमी ने कहा, कैसे खोल दूँ दरवाजा, जगह कहां है यहां?

वह आदमी अभी दो घड़ी पहले आया था खुद और भूल गया यह बात कि जिस प्रेम ने मुझे जगह दी थी, वह मुझे जगह नहीं दी थी, प्रेम था उसके भीतर इसलिए जगह दी थी। अब फिर कोई दूसरा आ गया, फिर जगह बनानी पड़ेगी। लेकिन उस आदमी ने कहा, नहीं, दरवाजा खोलने की जरूरत नहीं; मुश्किल से हम तीन बैठे हुए हैं!

वह फकीर हंसने लगा। उसने कहा, बड़े पागल हो! मैंने तुम्हारे लिए जगह नहीं की थी, प्रेम था इसलिए जगह की थी। प्रेम अब भी है, वह तुम पर चुक नहीं गया और समाप्त नहीं हो गया। दरवाजा खोलो! अभी हम दूर-दूर बैठे हैं, फिर हम पास-पास बैठ जाएंगे। पास-पास बैठने के लिए काफी जगह है। और रात ठंडी है, पास-पास बैठने में आनंद ही और होगा।

दरवाजा खोलना पड़ा। दो आदमी भीतर आ गए। फिर वे पास-पास बैठ कर गपशप करने लगे। और थोड़ी ही देर बीती है और रात आगे बढ़ गई है और वर्षा हो रही है, और एक गधे ने आकर सिर लगाया दरवाजे से। पानी में भीग गया है। वह रात शरण चाहता है। उस फकीर ने कहा कि मित्रो--वे दो मित्र दरवाजे पर बैठे हुए थे जो पीछे आए थे--दरवाजा खोल दो! कोई अपरिचित मित्र फिर आ गया।

उन लोगों ने कहा, यह मित्र वगैरह नहीं है, यह गधा है। इसके लिए द्वार खोलने की कोई जरूरत नहीं।

उस फकीर ने कहा, तुम्हें शायद पता नहीं, अमीर के दरवाजे पर आदमी के साथ भी गधे जैसा व्यवहार किया जाता है। यह गरीब की झोपड़ी है, हम गधे के साथ भी आदमी जैसा व्यवहार करने की आदत से भरे हैं। दरवाजा खोल दो!

पर वे दोनों कहने लगे, जगह?

उस फकीर ने कहा, जगह बहुत है; अभी हम बैठे हैं, अब हम खड़े हो जाएंगे। खड़े होने के लिए काफी जगह है। और फिर तुम घबराओ मत, अगर जरूरत पड़ेगी तो मैं हमेशा बाहर होने के लिए तैयार हूं। प्रेम इतना कर सकता है।

एक लविंग एटिट्यूड, एक प्रेमपूर्ण हृदय बनाने की जरूरत है। जब प्रेमपूर्ण हृदय बनता है, तो व्यक्तित्व में एक तृप्ति का भाव, एक रसपूर्ण तृप्ति...क्या आपको कभी खयाल है, जब भी आप किसी के प्रति जरा से प्रेमपूर्ण हुए हैं, पीछे एक तृप्ति की लहर छूट गई है? क्या आपको कभी भी खयाल है कि जीवन में तृप्ति के क्षण वे ही रहे हैं, जो बेशर्त प्रेम के क्षण रहे होंगे, जब कोई शर्त न रही होगी प्रेम की। और जब आपने रास्ते चलते एक अजनबी आदमी को देख कर मुस्कुरा दिया होगा--उसके पीछे छूट गई तृप्ति का कोई अनुभव है? उसके पीछे साथ आ गया एक शांति का भाव! एक प्राणों में एक आनंद की लहर का कोई पता है--जब राह चलते किसी आदमी को उठा लिया हो, किसी गिरते को सम्हाल लिया हो, किसी बीमार को एक फूल दे दिया हो? इसलिए नहीं कि वह आपकी मां है, इसलिए नहीं कि वह आपका पिता है। नहीं, वह आपका कोई भी नहीं है। लेकिन एक फूल किसी बीमार को दे देना आनंदपूर्ण है।

व्यक्तित्व में प्रेम की संभावना बढ़ती जानी चाहिए। वह इतनी बढ़ जानी चाहिए--पौधों के प्रति, पक्षियों के प्रति, पशुओं के प्रति, आदमियों के प्रति, अपरिचितों के प्रति, अनजान लोगों के प्रति, विदेशियों के प्रति, जो बहुत दूर हैं उनके प्रति, चांद-तारों के प्रति--प्रेम हमारा बढ़ता चला जाए।

जितना प्रेम हमारा बढ़ता है, उतनी ही सेक्स की जीवन में संभावना कम होती चली जाती है।

प्रेम और ध्यान, दोनों मिल कर उस दरवाजे को खोल देते हैं जो परमात्मा का दरवाजा है।

प्रेम + ध्यान = परमात्मा। प्रेम और ध्यान का जोड़ हो जाए और परमात्मा उपलब्ध हो जाता है।

और उस उपलब्धि से जीवन में ब्रह्मचर्य फलित होता है। फिर सारी ऊर्जा एक नये ही मार्ग पर ऊपर चढ़ने लगती है। फिर बह-बह कर निकल नहीं जाती। फिर जीवन से बाहर निकल-निकल कर व्यर्थ नहीं हो जाती। फिर जीवन के भीतरी मार्गों पर गति करने लगती है। उसका एक ऊर्ध्वगमन, एक ऊपर की तरफ यात्रा शुरू होती है।

अभी हमारी यात्रा नीचे की तरफ है। सेक्स, ऊर्जा का अधोगमन है, नीचे की तरफ बह जाना है। ब्रह्मचर्य, ऊर्जा का ऊर्ध्वगमन है, ऊपर की तरफ उठ जाना है।

प्रेम और ध्यान, ब्रह्मचर्य के सूत्र हैं।

तीसरी बात कल आपसे करने को हूं कि ब्रह्मचर्य उपलब्ध होगा तो क्या फल होगा? क्या होगी उपलब्धि? क्या मिल जाएगा?

ये दो बातें मैंने आज आपसे कहीं--प्रेम और ध्यान। मैंने यह कहा कि छोटे बच्चों से इनकी शिक्षा शुरू हो जानी चाहिए। इससे आप यह मत सोच लेना कि अब तो हम बच्चे नहीं रहे, इसलिए करने को कुछ बाकी नहीं है। यह आप मत सोच कर चले जाना, अन्यथा मेरी मेहनत फिजूल गई। आप किसी भी उम्र के हों, यह काम शुरू किया जा सकता है। यह काम कभी भी शुरू किया जा सकता है। हालांकि जितनी उम्र बढ़ती चली जाती है, उतना मुश्किल होता चला जाता है। बच्चों के साथ हो सके, सौभाग्य! लेकिन कभी भी हो सके, सौभाग्य! इतनी देर कभी भी नहीं हुई है कि हम कुछ भी न कर सकें। हम आज शुरू कर सकते हैं।

और जो लोग सीखने के लिए तैयार हैं, वे बुढ़ापे में भी बच्चों जैसे ही होते हैं, वे बुढ़ापे में भी शुरू कर सकते हैं। अगर उनकी सीखने की क्षमता है, अगर लर्निंग का एटिट्यूड है, अगर वे इस ज्ञान से नहीं भर गए हैं कि हमने सब जान लिया और सब पा लिया, तो वे सीख सकते हैं और वे छोटे बच्चों की भांति नई यात्रा शुरू कर सकते हैं।

बुद्ध के पास एक भिक्षु कुछ वर्षों से दीक्षित था। एक दिन बुद्ध ने उससे पूछा कि भिक्षु, तुम्हारी उम्र क्या है? उस भिक्षु ने कहा, मेरी उम्र? पांच वर्ष! बुद्ध कहने लगे, पांच वर्ष? तुम तो कोई सत्तर वर्ष के मालूम पड़ते हो! कैसा झूठ बोलते हो!

उस भिक्षु ने कहा, लेकिन पांच वर्ष पहले ही मेरे जीवन में ध्यान की किरण फूटी। पांच वर्ष पहले ही मेरे जीवन में प्रेम की वर्षा हुई। उसके पहले मैं जीता था, वह सपने में जीना था, वह नींद में जीना था। उसकी गिनती अब मैं नहीं करता हूं। कैसे करूं? जिंदगी तो इधर पांच वर्षों से शुरू हुई, इसलिए मैं कहता हूं, मेरी उम्र पांच वर्ष है।

बुद्ध ने अपने भिक्षुओं से कहा, भिक्षुओ, इस बात को खयाल में रख लेना। अपनी उम्र आज से तुम भी इसी तरह जोड़ना। यही उम्र को नापने का ढंग समझना।

अगर प्रेम और ध्यान का जन्म नहीं हुआ है तो उम्र फिजूल चली गई। अभी आपका ठीक जन्म भी नहीं हुआ है। और कभी भी इतनी देर नहीं हुई, जब कि हम प्रयास करें, श्रम करें और हम अपने नये जन्म को उपलब्ध न हो जाएं।

इसलिए मेरी बात से यह नतीजा मत निकाल लेना आप कि आप तो अब बचपन के पार हो चुके, इसलिए यह बात आने वाले बच्चों के लिए है। कोई आदमी किसी भी क्षण इतनी दूर नहीं निकल गया है कि वापस न लौट आए। कोई आदमी कितने ही गलत रास्तों पर चला हो, ऐसी जगह नहीं पहुंच गया है कि ठीक रास्ता उसे दिखाई न पड़ सके। कोई आदमी कितने ही हजारों वर्षों से अंधकार में रह रहा हो, इसका मतलब यह नहीं है कि वह दीया जलाएगा तो अंधकार कहेगा कि मैं हजार वर्ष पुराना हूं, इसलिए नहीं टूटता! दीया जलाने से एक दिन का अंधकार भी टूटता है, हजार साल का अंधकार भी उसी तरह टूट जाता है। दीया जलाने की चेष्टा बचपन में आसानी से हो सकती है, बाद में थोड़ी कठिनाई है।

लेकिन कठिनाई का अर्थ असंभावना नहीं है। कठिनाई का अर्थ है: थोड़ा ज्यादा श्रम। कठिनाई का अर्थ है: थोड़ा ज्यादा संकल्प। कठिनाई का अर्थ है: थोड़ा ज्यादा लगनपूर्वक, ज्यादा सातत्य से तोड़ना पड़ेगा, व्यक्तित्व की जो बंधी धाराएं हैं उनको, और नये मार्ग खोलने पड़ेंगे।

लेकिन जब नये मार्ग की जरा सी भी किरण फूटनी शुरू होती है, तो सारा श्रम ऐसा लगता है कि हमने कुछ भी नहीं किया और बहुत कुछ पा लिया है। जब एक किरण भी आती है उस आनंद की, उस सत्य की, उस प्रकाश की, तो लगता है कि हमने तो बिना कुछ किए पा लिया है। क्योंकि हमने जो किया था, उसका तो कोई भी मूल्य नहीं था। जो हाथ में आ गया है, वह तो अमूल्य है।

इसलिए यह भाव मन में आप न लेंगे। ऐसी मेरी प्रार्थना है।

मेरी बातों को इतनी शांति और प्रेम से सुना, उसके लिए बहुत-बहुत अनुगृहीत हूं। और अंत में सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

मेरे प्रिय आत्मन्!

एक छोटा सा गांव था। उस गांव के स्कूल में शिक्षक राम की कथा पढ़ाता था। करीब-करीब सारे बच्चे सोए हुए थे।

राम की कथा सुनते समय बच्चे सो जाएं, यह आश्चर्य नहीं। क्योंकि राम की कथा सुनते समय बूढ़े भी सोते हैं। इतनी बार सुनी जा चुकी है जो बात, उसे जाग कर सुनने का कोई अर्थ भी नहीं रह जाता।

बच्चे सोए थे। और शिक्षक भी पढ़ा रहा था, लेकिन कोई भी उसे देखता तो कह सकता था वह भी सोया हुआ पढ़ाता है। उसे राम की कथा कंठस्थ थी। किताब सामने खुली थी, लेकिन किताब पढ़ने की उसे जरूरत न थी। उसे सब याद था, वह यंत्र की भांति कहे जाता था। शायद ही उसे पता हो कि वह क्या कह रहा है।

तोतों को पता नहीं होता कि वे क्या कह रहे हैं। जिन्होंने शब्दों को कंठस्थ कर लिया है, उन्हें भी पता नहीं होता कि वे क्या कह रहे हैं।

और तभी अचानक एक सनसनी दौड़ गई कक्षा में। अचानक ही स्कूल का निरीक्षक आ गया था। वह कमरे के भीतर गया। बच्चे सजग होकर बैठ गए। शिक्षक भी सजग होकर पढ़ाने लगा। उस निरीक्षक ने कहा कि मैं कुछ प्रश्न पूछना चाहूंगा। और चूंकि राम की कथा पढ़ाई जाती है, इसलिए राम से संबंधित ही कोई प्रश्न पूछूं। उसने बच्चों से एक सीधी सी बात पूछी। उसने पूछा कि शिव का धनुष किसने तोड़ा था?

उसने सोचा कि बच्चों को तोड़-फोड़ की बात बहुत याद रह जाती है, उन्हें जरूर याद होगा कि किसने शिव का धनुष तोड़ा था।

लेकिन इसके पहले कि कोई बोले, एक बच्चे ने हाथ हिलाया और खड़े होकर कहा कि क्षमा करिए, मुझे पता नहीं कि किसने तोड़ा था। एक बात निश्चित है कि मैं पंद्रह दिन से छुट्टी पर था, मैंने नहीं तोड़ा है। और इसके पहले कि मेरे पर कोई इलजाम लग जाए, मैं पहले ही साफ कर देना चाहता हूं कि धनुष का मुझे कोई पता ही नहीं है। क्योंकि जब भी इस स्कूल में कोई चीज टूटती है तो सबसे पहले मेरे ऊपर दोषारोपण आता है, इसलिए मैं निवेदन किए देता हूं।

निरीक्षक तो हैरान रह गया। उसने सोचा भी न था कि कोई यह उत्तर देगा। उसने शिक्षक की तरफ देखा। शिक्षक अपना बेंत निकाल रहा था और उसने कहा कि जरूर इसी बदमाश ने तोड़ा होगा। इसकी हमेशा की आदत है। और अगर तूने नहीं तोड़ा था तो तूने खड़े होकर क्यों कहा कि मैंने नहीं तोड़ा है? और उसने इंस्पेक्टर से कहा, आप इसकी बातों में मत आए, यह लड़का शरारती है। और स्कूल में सौ चीजें टूटें तो निन्यानबे यही तोड़ता है।

तब तो वह निरीक्षक और हैरान हो गया। फिर उसने कुछ भी वहां कहना उचित न समझा। वह सीधा प्रधान अध्यापक के पास गया। जाकर उसने कहा कि यह-यह घटना घटी है। राम की कथा पढ़ाई जाती थी जिस कक्षा में, उसमें मैंने पूछा कि शिव का धनुष किसने तोड़ा था? तो एक बच्चे ने कहा कि मैंने नहीं तोड़ा, मैं पंद्रह दिन से छुट्टी पर था। यहां तक भी गनीमत थी। लेकिन शिक्षक ने यह कहा कि जरूर इसी ने तोड़ा होगा, जब भी कोई चीज टूटती है तो यही जिम्मेवार होता है। इसके संबंध में क्या किया जाए?

उस प्रधान अध्यापक ने कहा, इस संबंध में एक ही बात की जा सकती है कि अब बात को आगे न बढ़ाया जाए। क्योंकि लड़कों से कुछ भी कहना खतरा मोल लेना है, किसी भी क्षण हड़ताल हो सकती है, अनशन हो सकता है। अब जिसने भी तोड़ा हो, तोड़ा होगा। आप कृपा करें और बात बंद करें। कोई दो महीने से शांति चल रही है स्कूल में, उसको भंग करने की कोशिश मत करें। न मालूम कितना फर्नीचर तोड़ डाला है लड़कों ने, हम चुपचाप देखते रहते हैं। स्कूल की दीवारें टूट रही हैं, हम चुपचाप देखते रहते हैं। क्योंकि कुछ भी बोलना खतरनाक है, हड़ताल हो सकती है, अनशन हो सकता है। इसलिए चुपचाप देखने के सिवाय कोई मार्ग नहीं।

वह इंस्पेक्टर तो अवाक! वह तो आंखें फाड़े रह गया! अब कुछ कहने का उपाय न था। वह वहां से सीधा, स्कूल की जो शिक्षा समिति थी, उसके अध्यक्ष के पास गया। और उसने जाकर कहा कि यह हालत है स्कूल की! राम की कथा पढ़ाई जाती है, वहां बच्चा कहता है कि मैंने शिव का धनुष नहीं तोड़ा, शिक्षक कहता है इसी ने तोड़ा होगा,

प्रधान अध्यापक कहता है कि जिसने भी तोड़ा हो, बात को रफा-दफा कर दें, शांत कर दें। इसे आगे बढ़ाना ठीक नहीं, हड़ताल हो सकती है। आप क्या कहते हैं?

उस अध्यक्ष ने कहा कि ठीक ही कहता है प्रधान अध्यापक। किसी ने भी तोड़ा हो, हम ठीक करवा देंगे समिति की तरफ से। आप फर्नीचर वाले के यहां भिजवा दें और ठीक करवा लें। इसकी चिंता करने की जरूरत नहीं कि किसने तोड़ा। सुधरवाने का उपाय होगा, आपको सुधरवाने की जरूरत है और क्या करना है!

वह स्कूल का इंस्पेक्टर मुझसे यह सारी बात कहता था। वह मुझसे पूछने लगा कि क्या स्थिति है यह?

मैंने उससे कहा, इसमें कुछ बड़ी स्थिति नहीं है। मनुष्य की एक सामान्य कमजोरी है, वही इस कहानी में प्रकट होती है। और वह कमजोरी क्या है? वह कमजोरी यह है कि जिस संबंध में हम कुछ भी नहीं जानते हैं, उस संबंध में भी हम ऐसी घोषणा करना चाहते हैं कि हम जानते हैं। वे कोई भी कुछ नहीं जानते थे कि शिव का धनुष क्या है? क्या उचित न होता कि वे कह देते कि हमें पता नहीं है कि शिव का धनुष क्या है। लेकिन अपना अज्ञान कोई भी स्वीकार नहीं करना चाहता है।

और मनुष्य-जाति के इतिहास में इससे बड़ी कोई दुर्घटना नहीं घटी है कि हम अपना अज्ञान स्वीकार करने को राजी नहीं होते। जीवन के किसी भी प्रश्न के संबंध में कोई भी आदमी इतनी हिम्मत और साहस नहीं दिखा पाता कि मुझे पता नहीं है। यह कमजोरी बहुत घातक सिद्ध होती है। सारा जीवन व्यर्थ हो जाता है। और चूंकि हम यह मान कर बैठ जाते हैं कि हम जानते हैं, इसलिए जो उत्तर हम देते हैं वे इतने ही मूढ़तापूर्ण होते हैं, जितने उस स्कूल में दिए गए थे--बच्चे से लेकर अध्यक्ष तक। जिसका हमें पता नहीं है, उसका उत्तर देने की कोशिश सिवाय मूढ़ता के और कहीं भी नहीं ले जाएगी।

फिर यह तो हो भी सकता है कि शिव का धनुष किसने तोड़ा या नहीं तोड़ा, इससे जीवन का कोई गहरा संबंध नहीं है। लेकिन जिन प्रश्नों के जीवन से बहुत गहरे संबंध हैं, जिनके आधार पर सारा जीवन सुंदर बनेगा या कुरूप हो जाएगा, स्वस्थ बनेगा या विक्षिप्त हो जाएगा; जिनके आधार पर जीवन की सारी गति और दिशा निर्भर है, उन प्रश्नों के संबंध में भी हम यह भाव दिखलाने की कोशिश करते हैं कि हम जानते हैं। और फिर जो हम जीवन में उत्तर देते हैं वे बता देते हैं कि हम कितना जानते हैं। एक-एक आदमी की जिंदगी बता रही है कि हम जिंदगी के संबंध में कुछ भी नहीं जानते हैं। अन्यथा इतनी असफलता, इतनी निराशा, इतना दुख, इतनी चिंता!

यही बात मैं सेक्स के संबंध में भी आपसे कहना चाहता हूं हम कुछ भी नहीं जानते हैं।

आप बहुत हैरान होंगे। आप कहेंगे, हम यह मान सकते हैं कि ईश्वर के संबंध में कुछ नहीं जानते, आत्मा के संबंध में कुछ नहीं जानते; लेकिन हम यह कैसे मान सकते हैं कि हम काम के, यौन के और सेक्स के संबंध में कुछ नहीं जानते? सबूत है--हमारे बच्चे पैदा हुए हैं, पत्नी है--हम सेक्स के संबंध में नहीं जानते हैं!

लेकिन मैं आपसे निवेदन करना चाहता हूं--यह बहुत कठिन पड़ेगा, लेकिन इसे समझ लेना जरूरी है--आप सेक्स के अनुभव से गुजरे होंगे, लेकिन सेक्स के संबंध में आप उतना ही जानते हैं जितना छोटा सा बच्चा जानता है, उससे ज्यादा कुछ भी नहीं जानते। अनुभव से गुजर जाना जान लेने के लिए पर्याप्त नहीं है।

एक आदमी कार चलाता है, वह कार चलाना जानता है और हो सकता है हजारों मील कार चला कर वह आ गया हो। लेकिन इससे यह कोई मतलब नहीं होता कि वह कार के भीतर के यंत्र और मशीन और उसकी व्यवस्था, उसके काम करने के ढंग के संबंध में कुछ भी जानता हो। वह कह सकता है कि मैं हजार मील चल कर आया हूं कार से--मैं नहीं जानता हूं कार के संबंध में? लेकिन कार चलाना एक ऊपरी बात है और कार की पूरी आंतरिक व्यवस्था को जानना बिलकुल दूसरी बात है।

एक आदमी बटन दबाता है और बिजली जल जाती है। वह आदमी यह कह सकता है कि मैं बिजली के संबंध में सब जानता हूं। क्योंकि मैं बटन दबाता हूं और बिजली जल जाती है, बटन दबाता हूं बिजली बुझ जाती है। मैंने हजार दफा बिजली जलाई और बुझाई, इसलिए मैं बिजली के संबंध में सब जानता हूं। हम कहेंगे वह पागल है। बटन दबाना और बिजली जला लेना और बुझा लेना बच्चे भी कर सकते हैं, इसके लिए बिजली के ज्ञान की कोई भी जरूरत नहीं है।

बच्चे कोई भी पैदा कर सकता है। सेक्स को जानने से इसका कोई संबंध नहीं। शादी कोई भी कर सकता है। पशु भी बच्चे पैदा कर रहे हैं। लेकिन वे सेक्स के संबंध में कुछ जानते हैं, इस भ्रम में पड़ने का कोई कारण नहीं। सच तो यह है कि सेक्स का कोई विज्ञान ही विकसित नहीं हो सका, सेक्स का कोई शास्त्र ठीक से विकसित नहीं हो सका, क्योंकि हर आदमी यह मानता है कि हम जानते हैं! शास्त्र की जरूरत क्या है? विज्ञान की जरूरत क्या है?

और मैं आपसे कहता हूं कि इससे बड़े दुर्भाग्य की और कोई बात नहीं है। क्योंकि जिस दिन सेक्स का पूरा शास्त्र और पूरा विचार और पूरा विज्ञान विकसित होगा, उस दिन हम बिलकुल नये तरह के आदमी को पैदा करने में

समर्थ हो सकते हैं। फिर यह कुरूप और यह अपंग मनुष्यता पैदा करने की जरूरत नहीं है। ये रुग्ण और रोते हुए और उदास आदमी पैदा करने की जरूरत नहीं है। ये पाप और अपराध से भरी हुई संतति को जन्म देने की जरूरत नहीं है।

लेकिन हमें कुछ भी पता नहीं है! हम सिर्फ बटन दबाना और बुझाना जानते हैं और उसी से हमने समझ लिया है कि हम बिजली के जानकार हो गए हैं। सेक्स के संबंध में पूरी जिंदगी बीत जाने के बाद भी आदमी इतना ही जानता है--बटन दबाना और बुझाना। इससे ज्यादा कुछ भी नहीं! लेकिन चूंकि यह भ्रम है कि हम सब जानते हैं, इसलिए इस संबंध में कोई शोध, कोई खोज, कोई विचार, कोई चिंतन का कोई उपाय नहीं है। और इसी भ्रम के कारण कि हम सब जानते हैं, हम किसी से न कभी कोई बात करते हैं, न विचार करते हैं, न सोचते हैं! क्योंकि जब सभी को सब पता है तो जरूरत क्या है?

और मैं आपसे कहना चाहता हूं कि जीवन में और जगत में सेक्स से बड़ा न कोई रहस्य है और न कोई गुप्त और गहरी बात है। अभी हमने अणु को खोज निकाला है। जिस दिन हम सेक्स के अणु को भी पूरी तरह जान सकेंगे, उस दिन मनुष्य-जाति ज्ञान के एक बिलकुल नये जगत में प्रविष्ट हो जाएगी। अभी हमने पदार्थ की थोड़ी-बहुत खोज-बीन की है और दुनिया कहां से कहां पहुंच गई। जिस दिन हम चेतना के जन्म की प्रक्रिया और कीमिया को समझ लेंगे, उस दिन हम मनुष्य को कहां से कहां पहुंचा देंगे, इसको आज कहना कठिन है। लेकिन एक बात निश्चित कही जा सकती है कि काम की शक्ति और काम की प्रक्रिया जीवन और जगत में सर्वाधिक रहस्यपूर्ण, सर्वाधिक गहरी, सबसे ज्यादा मूल्यवान बात है। और उसके संबंध में हम बिलकुल चुप हैं। जो सर्वाधिक मूल्यवान है, उसके संबंध में कोई बात भी नहीं की जाती है। आदमी जीवन भर संभोग से गुजरता है और अंत तक भी नहीं जान पाता कि क्या था संभोग।

तो जब मैंने पहले दिन आपसे कहा कि शून्य का, अहंकार-शून्यता का, विचार-शून्यता का अनुभव होगा, तो अनेक मित्रों को यह बात अनहोनी, आश्चर्यजनक लगी है। एक मित्र ने लौटते हुए मुझे कहा, यह तो हमें खयाल में भी न था, लेकिन ऐसा हुआ है।

एक बहन ने आज मुझे आकर कहा, लेकिन मुझे तो इसका कोई अनुभव नहीं है। आप कहते हैं तो इतना मुझे खयाल आता है कि मन थोड़ा शांत और मौन होता है, लेकिन मुझे अहंकार-शून्यता का या किसी और गहरे अनुभव का कोई भी पता नहीं।

हो सकता है अनेकों को इस संबंध में विचार मन में उठा हो। उस संबंध में थोड़ी सी बातें और गहराई में स्पष्ट कर लेनी जरूरी हैं।

पहली बात, मनुष्य जन्म के साथ ही संभोग के पूरे विज्ञान को जानता हुआ पैदा नहीं होता है। शायद पृथ्वी पर बहुत थोड़े से लोग, अनेक जीवन के अनुभव के बाद, संभोग की पूरी की पूरी कला और पूरी की पूरी विधि और पूरा शास्त्र जानने में समर्थ हो पाते हैं। और ये ही वे लोग हैं जो ब्रह्मचर्य को उपलब्ध हो जाते हैं। क्योंकि जो व्यक्ति संभोग की पूरी बात को जानने में समर्थ हो जाता है, उसके लिए संभोग व्यर्थ हो जाता है, वह उसके पार निकल जाता है, अतिक्रमण कर जाता है। लेकिन इस संबंध में कुछ बहुत स्पष्ट बातें नहीं कही गई हैं।

एक बात, पहली बात स्पष्ट कर लेनी जरूरी है वह यह कि यह भ्रम छोड़ देना चाहिए कि हम पैदा हो गए हैं इसलिए हमें पता है--क्या है काम, क्या है संभोग। नहीं, पता नहीं है। और नहीं पता होने के कारण जीवन पूरे समय काम और सेक्स में उलझा रहता है और व्यतीत होता है।

मैंने आपसे कहा, पशुओं का बंधा हुआ समय है, उनकी ऋतु है, उनका मौसम है। आदमी का कोई बंधा हुआ समय नहीं है। क्यों? पशु शायद मनुष्य से ज्यादा संभोग की गहराई में उतरने में समर्थ है और मनुष्य उतना भी समर्थ नहीं रह गया है! जिन लोगों ने जीवन के इन तलों पर बहुत खोज की है और गहराइयों में गए हैं और जिन लोगों ने जीवन के बहुत से अनुभव संगृहीत किए हैं, उनको यह जानना, यह सूत्र उपलब्ध हुआ है कि अगर संभोग एक मिनट तक रुकेगा तो आदमी दूसरे दिन फिर संभोग के लिए लालायित हो जाएगा। अगर तीन मिनट तक रुक सके तो एक सप्ताह तक उसे सेक्स की वह याद भी नहीं आएगी। और अगर सात मिनट तक रुक सके तो तीन महीने तक के लिए सेक्स से इस तरह मुक्त हो जाएगा कि उसकी कल्पना में भी विचार प्रविष्ट नहीं होगा। और अगर तीन घंटे तक रुक सके तो जीवन भर के लिए मुक्त हो जाएगा, जीवन में उसको कल्पना भी नहीं उठेगी।

लेकिन सामान्यतः क्षण भर का अनुभव है मनुष्य का। तीन घंटे की कल्पना करनी भी मुश्किल है। लेकिन मैं आपसे कहता हूं कि तीन घंटे अगर संभोग की स्थिति में, उस समाधि की दशा में व्यक्ति रुक जाए तो एक संभोग पूरे जीवन के लिए सेक्स से मुक्त करने के लिए पर्याप्त है। इतनी तृप्ति पीछे छोड़ जाता है, इतना अनुभव, इतना बोध छोड़ जाता है कि जीवन भर के लिए पर्याप्त हो जाता है। एक संभोग के बाद व्यक्ति ब्रह्मचर्य को उपलब्ध हो

सकता है।

लेकिन हम तो जीवन भर संभोग के बाद भी उपलब्ध नहीं होते। क्या है? बूढ़ा हो जाता है आदमी, मरने के करीब पहुंच जाता है और संभोग की कामना से मुक्त नहीं हो पाता! संभोग की कला और संभोग के शास्त्र को उसने समझा नहीं है। और न कभी किसी ने समझाया है, न विचार किया है, न सोचा है, न बात की है, कोई संवाद भी नहीं हुआ जीवन में--कि अनुभवी लोग उस पर संवाद करते और विचार करते। हम बिलकुल पशुओं से भी बदतर हालत पर उस स्थिति में हैं।

आप कहेंगे कि एक क्षण से तीन घंटे तक संभोग की दशा ठहर सकती है, लेकिन कैसे?

कुछ थोड़े से सूत्र आपको कहता हूं, उन्हें थोड़ा खयाल में रखेंगे तो ब्रह्मचर्य की तरफ जाने में बड़ी यात्रा सरल हो जाएगी।

संभोग करते क्षणों में श्वास जितनी तेज होगी, संभोग का काल उतना ही छोटा होगा। श्वास जितनी शांत और शिथिल होगी, संभोग का काल उतना ही लंबा हो जाएगा। अगर श्वास को बिलकुल शिथिल रहने का थोड़ा सा अभ्यास किया जाए, तो संभोग के क्षणों को कितना ही लंबा किया जा सकता है। और संभोग के क्षण जितने लंबे होंगे, उतने ही संभोग के भीतर से समाधि का जो सूत्र मैंने आपसे कहा है--निरहंकार भाव, ईगोलेसनेस और टाइमलेसनेस का अनुभव शुरू हो जाएगा। श्वास अत्यंत शिथिल होनी चाहिए। श्वास के शिथिल होते ही संभोग की गहराई, अर्थ और नये उदघाटन शुरू हो जाएंगे।

और दूसरी बात, संभोग के क्षण में ध्यान दोनों आंखों के बीच, जहां योग आज्ञाचक्र को बताता है, वहां अगर ध्यान हो तो संभोग की सीमा और समय तीन घंटों तक बढ़ाया जा सकता है। और एक संभोग व्यक्ति को सदा के लिए ब्रह्मचर्य में प्रतिष्ठित कर देगा--न केवल इस जन्म के लिए, बल्कि अगले जन्म के लिए भी।

किन्हीं एक बहन ने पत्र लिखा है और मुझे पूछा है कि विनोबा तो बाल-ब्रह्मचारी हैं, क्या उनको समाधि का अनुभव नहीं हुआ होगा? मेरे बाबत पूछा है कि मैंने तो विवाह नहीं किया, मैं तो बाल-ब्रह्मचारी हूं, मुझे समाधि का अनुभव नहीं हुआ होगा?

उन बहन को, अगर वे यहां मौजूद हों तो मैं कहना चाहता हूं, विनोबा को या मुझे या किसी को भी बिना अनुभव के ब्रह्मचर्य उपलब्ध नहीं होता--वह अनुभव चाहे इस जन्म का हो, चाहे पिछले जन्म का हो। जो इस जन्म में ब्रह्मचर्य को उपलब्ध होता है, वह पिछले जन्मों के गहरे संभोग के अनुभव के आधार पर, और किसी आधार पर नहीं। कोई और रास्ता नहीं है।

लेकिन अगर पिछले जन्म में किसी को गहरे संभोग की अनुभूति हुई हो तो इस जन्म के साथ ही वह सेक्स से मुक्त पैदा होगा। उसकी कल्पना के मार्ग पर सेक्स कभी भी खड़ा नहीं होगा। और उसे हैरानी होगी दूसरे लोगों को देख कर कि यह क्या बात है! लोग क्यों पागल हैं? क्यों दीवाने हैं? उसे कठिनाई होगी यह जांच करने में भी कि कौन स्त्री है, कौन पुरुष है? इसका भी हिसाब रखने में और फासला करने में कठिनाई होगी।

लेकिन कोई अगर सोचता हो कि बिना गहरे अनुभव के कोई बाल-ब्रह्मचारी हो सकता है, तो बाल-ब्रह्मचारी नहीं होगा, सिर्फ पागल हो जाएगा। जो लोग जबरदस्ती ब्रह्मचर्य थोपने की कोशिश करते हैं, वे सिर्फ विक्षिप्त होते हैं, और कहीं भी नहीं पहुंचते। ब्रह्मचर्य थोपा नहीं जाता। वह अनुभव की निष्पत्ति है। वह किसी गहरे अनुभव का फल है। और वह अनुभव संभोग का ही अनुभव है। अगर वह अनुभव एक बार भी हो जाए तो अनंत जीवन की यात्रा के लिए सेक्स से मुक्ति हो जाती है।

तो दो बातें मैंने कहीं उस गहराई के लिए--श्वास शिथिल हो, इतनी शिथिल हो कि जैसे चलती ही नहीं; और ध्यान, सारा अटेंशन आज्ञाचक्र के पास हो, दोनों आंखों के बीच के बिंदु पर हो। जितना ध्यान मस्तिष्क के पास होगा, उतने ही संभोग की गहराई अपने आप बढ़ जाएगी। और जितनी श्वास शिथिल होगी, उतनी लंबाई बढ़ जाएगी। और आपको पहली दफा अनुभव होगा कि संभोग का आकर्षण नहीं है मनुष्य के मन में, मनुष्य के मन में समाधि का आकर्षण है। और एक बार उसकी झलक मिल जाए, एक बार बिजली चमक जाए और हमें दिखाई पड़ जाए अंधेरे में कि रास्ता क्या है, फिर हम रास्ते पर आगे निकल सकते हैं।

एक आदमी एक गंदे घर में बैठा है। दीवालें अंधेरी हैं और धुएं से पुती हुई हैं। घर बदबू से भरा हुआ है। लेकिन खिड़की खोल सकता है। उस गंदे घर की खिड़की में खड़े होकर भी वह देख सकता है--दूर आकाश को, तारों को, सूरज को, उड़ते हुए पक्षियों को। और तब उस घर के बाहर निकलने में कठिनाई न रह जाएगी। जिसे एक बार दिखाई पड़ गया कि बाहर निर्मल आकाश है, सूरज है, चांद है, तारे हैं, उड़ते हुए पक्षी हैं, हवाओं में झूमते हुए वृक्ष और फूलों की सुगंध है, मुक्ति है बाहर, वह फिर अंधेरी और धुएं से भरी हुई और सीलन और बदबू से भरी हुई कोठरियों में बैठने को राजी नहीं होगा, वह बाहर निकल जाएगा। जिस दिन आदमी को संभोग के भीतर समाधि

की पहली, थोड़ी सी भी अनुभूति होती है, उसी दिन सेक्स का गंदा मकान, सेक्स की दीवालें, अंधेरे से भरी हुई व्यर्थ हो जाती हैं और आदमी बाहर निकल आता है।

लेकिन यह जानना जरूरी है कि साधारणतः हम उस मकान के भीतर पैदा होते हैं, जिसकी दीवालें बंद हैं, जो अंधेरे से पुती हैं, जहां बदबू है, जहां दुर्गंध है। और इस मकान के भीतर ही पहली दफा मकान के बाहर का अनुभव करना जरूरी है, तभी हम बाहर जा सकते हैं और इस मकान को छोड़ सकते हैं। जिस आदमी ने खिड़की नहीं खोली उस मकान की और उसी मकान के कोने में आंख बंद करके बैठ गया है कि मैं इस गंदे मकान को नहीं देखूंगा, वह चाहे देखे और चाहे न देखे, वह गंदे मकान के भीतर ही है और भीतर ही रहेगा।

जिनको आप ब्रह्मचारी कहते हैं--तथाकथित जबरदस्ती थोपे हुए ब्रह्मचारी--वे सेक्स के मकान के भीतर उतने ही हैं, जितना कि कोई भी साधारण आदमी है। वे आंख बंद किए बैठे हैं, आप आंख खोले हुए बैठे हैं, इतना ही फर्क है। जो आप आंख खोल कर कर रहे हैं, वे आंख बंद करके भीतर कर रहे हैं। जो आप शरीर से कर रहे हैं, वे मन से कर रहे हैं। और कोई भी फर्क नहीं है।

इसलिए मैं कहता हूं कि संभोग के प्रति दुर्भाव छोड़ दें। समझने की चेष्टा, प्रयोग करने की चेष्टा करें, और संभोग को एक पवित्रता की स्थिति दें।

मैंने दो सूत्र कहे। तीसरी एक भाव-दशा चाहिए संभोग के पास जाते समय, वैसी भाव-दशा जैसे कोई मंदिर के पास जाता है। क्योंकि संभोग के क्षण में हम परमात्मा के निकटतम होते हैं। इसीलिए तो संभोग में परमात्मा सृजन का काम करता है और नये जीवन को जन्म देता है। हम क्रिएटर के निकटतम होते हैं। संभोग की अनुभूति में हम स्रष्टा के निकटतम होते हैं। इसीलिए तो हम मार्ग बन जाते हैं और एक नया जीवन हमसे उतरता है और गतिमान हो जाता है। हम जन्मदाता बन जाते हैं। क्यों? स्रष्टा के निकटतम है वह स्थिति। अगर हम पवित्रता से, प्रार्थना से सेक्स के पास जाएं, तो हम परमात्मा की झलक को अनुभव कर सकते हैं।

लेकिन हम तो सेक्स के पास एक घृणा, एक दुर्भाव, एक कंडेमेनशन के साथ जाते हैं। इसलिए दीवाल खड़ी हो जाती है और परमात्मा का वहां कोई अनुभव नहीं हो पाता।

सेक्स के पास ऐसे जाएं जैसे मंदिर के पास। पत्नी को ऐसा समझें जैसे कि वह प्रभु है। पति को ऐसा समझें जैसे कि वह परमात्मा है। और गंदगी में, क्रोध में, कठोरता में, द्वेष में, ईर्ष्या में, जलन में, चिंता के क्षणों में कभी भी सेक्स के पास न जाएं। होता उलटा है। जितना आदमी चिंतित होता है, जितना परेशान होता है, जितना क्रोध से भरा होता है, जितना घबराया होता है, जितना एंग्विश में होता है, उतना ही ज्यादा वह सेक्स के पास जाता है। आनंदित आदमी सेक्स के पास नहीं जाता। दुखी आदमी सेक्स की तरफ जाता है। क्योंकि दुख को भुलाने के लिए इसको एक मौका दिखाई पड़ता है।

लेकिन स्मरण रखें कि जब आप दुख में जाएंगे, चिंता में जाएंगे, उदास, हारे हुए, क्रोध में, लड़े हुए जाएंगे, तब आप कभी भी सेक्स की उस गहरी अनुभूति को उपलब्ध नहीं कर पाएंगे, जिसकी कि प्राणों में प्यास है। वह समाधि की झलक वहां नहीं मिलेगी। लेकिन यही उलटा होता है।

मेरी प्रार्थना है: जब आनंद में हों, जब प्रेम में हों, जब प्रफुल्लित हों और जब प्राण प्रेयरफुल हों, जब ऐसा मालूम पड़े कि आज हृदय शांति से और आनंद से, कृतज्ञता से भरा हुआ है, तभी क्षण है--तभी क्षण है संभोग के निकट जाने का। और वैसा व्यक्ति संभोग में समाधि को उपलब्ध होता है। और एक बार भी समाधि की एक किरण मिल जाए तो संभोग से सदा के लिए मुक्त हो जाता है और समाधि में गतिमान हो जाता है।

स्त्री और पुरुष का मिलन एक बहुत गहरा अर्थ रखता है। स्त्री और पुरुष के मिलन में पहली बार अहंकार टूटता है और हम किसी से मिलते हैं।

मां के पेट से बच्चा निकलता है और दिन-रात उसके प्राणों में एक ही बात लगी रहती है, जैसे कि हमने किसी वृक्ष को उखाड़ लिया जमीन से, तो उस पूरे वृक्ष के प्राण तड़फते हैं कि जमीन से कैसे वापस जुड़ जाए। क्योंकि जमीन से जुड़ा हुआ होकर ही उसे प्राण मिलता था, रस मिलता था, जीवन मिलता था, वाइटेलेटी मिलती थी। जमीन से उखड़ गया, तो उसकी सारी जड़ें चिल्लाएंगी कि मुझे जमीन में वापस

भेज दो! उसका सारा प्राण चिल्लाएगा कि मुझे जमीन में वापस भेज दो! वह उखड़ गया, टूट गया, अपरूटेड हो गया।

आदमी जैसे ही मां के पेट से बाहर निकलता है, अपरूटेड हो जाता है। वह सारे जीवन और जगत से एक अर्थ में टूट गया, अलग हो गया। अब उसकी सारी पुकार और सारे प्राणों की आकांक्षा जगत और जीवन और अस्तित्व से, एन्क्रिस्टेड से वापस जुड़ जाने की है। उसी पुकार का नाम प्रेम की प्यास है।

प्रेम का और अर्थ क्या है? हर आदमी चाह रहा है कि मैं प्रेम पाऊं और प्रेम करूं! प्रेम का मतलब क्या है? प्रेम

का मतलब है कि मैं टूट गया हूं, आइसोलेट हो गया हूं, अलग हो गया हूं, मैं वापस जुड़ जाऊं जीवन से।

लेकिन इस जुड़ने का गहरे से गहरा अनुभव मनुष्य को सेक्स के अनुभव में होता है, स्त्री और पुरुष को होता है। वह पहला अनुभव है जुड़ जाने का। और जो व्यक्ति इस जुड़ जाने के अनुभव को प्रेम की प्यास, जुड़ने की आकांक्षा के अर्थ में समझेगा, वह आदमी एक दूसरे अनुभव को भी शीघ्र उपलब्ध हो सकता है।

योगी भी जुड़ता है, साधु भी जुड़ता है, संत भी जुड़ता है, समाधिस्थ व्यक्ति भी जुड़ता है, संभोगी व्यक्ति भी जुड़ता है।

संभोग करने में दो व्यक्ति जुड़ते हैं। एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से जुड़ता है और एक हो जाता है।

समाधि में एक व्यक्ति समष्टि से जुड़ता है और एक हो जाता है।

संभोग दो व्यक्तियों के बीच मिलन है।

समाधि एक व्यक्ति और अनंत के बीच मिलन है।

स्वभावतः, दो व्यक्तियों का मिलन क्षण भर को हो सकता है। एक व्यक्ति और अनंत का मिलन अनंत के लिए हो सकता है। दोनों व्यक्ति सीमित हैं, उनका मिलन असीम नहीं हो सकता है। यही पीड़ा है, यही कष्ट है सारे दांपत्य का, सारे प्रेम का--कि जिससे हम जुड़ना चाहते हैं उससे भी सदा के लिए नहीं जुड़ पाते, क्षण भर को जुड़ते हैं और फिर फासले हो जाते हैं। फासले पीड़ा देते हैं, फासले कष्ट देते हैं, और निरंतर दो प्रेमी इसी पीड़ा में परेशान रहते हैं कि फासला क्यों है? और हर चीज फिर धीरे-धीरे ऐसी मालूम पड़ने लगती है कि दूसरा फासला बना रहा है। इसलिए दूसरे पर क्रोध पैदा होना शुरू हो जाता है।

लेकिन जो जानते हैं, वे यह कहेंगे कि दो व्यक्ति अनिवार्यतः दो अलग-अलग व्यक्ति हैं। वे जबरदस्ती क्षण भर को मिल सकते हैं, लेकिन सदा के लिए नहीं मिल सकते। यही प्रेमियों की पीड़ा और कष्ट है कि निरंतर एक संघर्ष खड़ा हो जाता है। जिसे प्रेम करते हैं, उसी से संघर्ष खड़ा हो जाता है; उसी से तनाव, अशांति और द्वेष खड़ा हो जाता है! क्योंकि ऐसा प्रतीत होने लगता है, जिससे मैं मिलना चाहता हूं, शायद वह मिलने को तैयार नहीं, इसलिए मिलना पूरा नहीं हो पाता।

लेकिन इसमें व्यक्तियों का कसूर नहीं है। दो व्यक्ति अनंतकालीन तल पर नहीं मिल सकते, एक क्षण के लिए मिल सकते हैं। क्योंकि व्यक्ति सीमित हैं, उनके मिलने का क्षण भी सीमित होगा। अगर अनंत मिलन चाहिए तो वह परमात्मा से हो सकता है, वह समस्त अस्तित्व से हो सकता है।

जो लोग संभोग की गहराई में उतरते हैं, उन्हें पता चलता है--एक क्षण मिलने का इतना आनंद है, तो अनंतकाल के लिए मिल जाने का कितना आनंद होगा! उसका तो हिसाब लगाना मुश्किल है। एक क्षण के मिलन की इतनी अद्भुत प्रतीति है, तो अनंत से मिल जाने की कितनी प्रतीति होगी, कैसी प्रतीति होगी! जैसे एक घर में दीया जल रहा हो और उस दीये से हम हिसाब लगाना चाहें कि सूरज की रोशनी में कितने दीये जल रहे हैं? हिसाब लगाना बहुत मुश्किल हो जाएगा। एक दीया बहुत छोटी बात है। सूरज बहुत बड़ी बात है। सूरज पृथ्वी से साठ हजार गुना बड़ा है। दस करोड़ मील दूर है, तब भी हमें तपाता है, तब भी हमें झुलसा देता है। उतने बड़े सूरज को एक छोटे से दीये से हम तौलने जाएं तो कैसे तौल सकेंगे?

लेकिन नहीं, एक दीये से सूरज को तौला जा सकता है; क्योंकि दीया भी सीमित है और सूरज भी सीमित है। दीये में एक कैंडल का लाइट है, तो अरबों-खरबों कैंडल का लाइट होगा सूरज में; लेकिन सीमा आंकी जा सकती है, तौली जा सकती है। लेकिन संभोग में जो आनंद है और समाधि में जो आनंद है, उसे फिर भी नहीं तौला जा सकता। क्योंकि संभोग अत्यंत क्षणिक दो क्षुद्र व्यक्तियों का मिलन है और समाधि ब्रह्म का अनंत के सागर से मिल जाना है। उसे कोई भी नहीं तौला जा सकता है। उसे तौलने का कोई भी उपाय नहीं है। उसे कोई मार्ग नहीं कि हम जांचें कि वह कितना होगा।

इसलिए जब वह उपलब्ध होता है--जब वह उपलब्ध हो जाता है--तो फिर कहां सेक्स! फिर कहां संभोग! फिर कहां कामना! जब उतना अनंत मिल गया तब कोई कैसे सोचेगा, कैसे विचार करेगा उस क्षण भर के सुख को पाने के लिए! तब वह सुख दुख जैसा प्रतीत होता है। तब वह सुख पागलपन जैसा प्रतीत होता है। तब वह सुख शक्ति का अपव्यय प्रतीत होता है। और ब्रह्मचर्य सहज फलित हो जाता है।

लेकिन संभोग और समाधि के बीच एक सेतु है, एक ब्रिज है, एक यात्रा है, एक मार्ग है। समाधि जिसका अंतिम छोर है आकाश में जाकर, संभोग उस सीढ़ी का पहला सोपान है, पहला पाया है। और जो इस पाए के ही विरोध में हो जाते हैं वे आगे नहीं बढ़ पाते, यह मैं आपसे कह देना चाहता हूं। जो इस पहले पाए को इनकार करने लगते हैं वे दूसरे पाए पर पैर नहीं रख सकते हैं, मैं आपसे यह कह देना चाहता हूं। इस पहले पाए पर भी अनुभव से, ज्ञान से, बोध से पैर रखना जरूरी है। इसलिए नहीं कि हम उसी पर रुके रह जाएं, बल्कि इसलिए कि हम उस पर

पैर रख कर आगे निकल जा सकें।

लेकिन मनुष्य-जाति के साथ एक अदभुत दुर्घटना हो गई। जैसा मैंने कहा, वह पहले पाए के विरोध में हो गया है और अंतिम पाए पर पहुंचना चाहता है! उसे पहले पाए का ही अनुभव नहीं, उसे दीये का भी अनुभव नहीं और वह सूरज के अनुभव की आकांक्षा करता है।

यह कभी भी नहीं हो सकेगा। जो दीया मिला है प्रकृति की तरफ से, पहले उस दीये की रोशनी को समझ लेना जरूरी है। पहले उस दीये की हलकी सी रोशनी को, जो क्षण भर में जीती है और बुझ जाती है, जरा सा हवा का झोंका जिसे मिटा देता है, उस रोशनी को भी जान लेना जरूरी है। ताकि सूरज की आकांक्षा की जा सके, ताकि सूरज तक पहुंचने के लिए कदम उठाया जा सके, ताकि सूरज की प्यास, असंतोष, आकांक्षा और अभीप्सा भीतर पैदा हो सके।

संगीत के एक छोटे से अनुभव से उस परम संगीत की तरफ जाया जा सकता है। प्रकाश के एक छोटे से अनुभव से अनंत प्रकाश की तरफ जाया जा सकता है। एक बंद को जान लेना, पूरे सागर को जान लेने के लिए पहला कदम है। एक छोटे से अणु को जान कर हम पदार्थ की सारी शक्ति को जान लेते हैं।

संभोग का एक छोटा सा अणु है, जो प्रकृति की तरफ से मनुष्य को मुफ्त में मिला हुआ है। लेकिन हम उसे जान नहीं पाते हैं। आंख बंद करके जी लेते हैं किसी तरह, पीठ फेर कर जी लेते हैं किसी तरह। उसकी स्वीकृति नहीं है हमारे मन में, स्वीकार नहीं है हमारे मन में। आनंद और अहोभाव से उसे जानने और जीने और उसमें प्रवेश करने की कोई विधि नहीं है हमारे हाथ में।

मैंने जैसा आपसे कहा, जिस दिन आदमी इस विधि को जान पाएगा, उस दिन हम दूसरे तरह के मनुष्य को पैदा करने में समर्थ हो जाएंगे।

मैं इस संदर्भ में आपसे यह कहना चाहता हूं कि स्त्री और पुरुष दो अपोजिट पोल्स हैं विद्युत के--पाजिटिव और निगेटिव, विधायक और नकारात्मक दो छोर हैं। उन दोनों के मिलन से एक संगीत पैदा होता है; विद्युत का पूरा चक्र पैदा होता है।

मैं आपसे यह भी कहना चाहता हूं कि जैसा मैंने कहा कि अगर गहराई और देर तक संभोग थिर रह जाए--स्त्री और पुरुष का एक जोड़ा अगर आधे घंटे के पार तक संभोग में रह जाए--तो दोनों के पास प्रकाश का एक वलय, दोनों के पास प्रकाश का एक घेरा निर्मित हो जाता है। दोनों की विद्युत जब पूरी तरह मिलती है तो आस-पास अंधेरे में भी एक रोशनी दिखाई पड़ने लगती है। कुछ अदभुत खोजियों ने उस दिशा में काम किया है और फोटोग्राफ भी लिए हैं। जिस जोड़े को उस विद्युत का अनुभव उपलब्ध हो जाता है, वह जोड़ा सदा के लिए संभोग के बाहर हो जाता है।

लेकिन यह हमारा अनुभव नहीं है। और ये बातें अजीब लगेंगी, कि यह तो हमारे अनुभव में नहीं है यह बात। अगर अनुभव में नहीं है तो उसका मतलब है कि आप फिर से सोचें, फिर से देखें और जिंदगी को--कम से कम सेक्स की जिंदगी को--क ख ग से फिर से शुरू करें, समझने के लिए, बोधपूर्वक जीने के लिए।

मेरी अपनी अनुभूति यह है, मेरी अपनी धारणा यह है कि महावीर या बुद्ध या क्राइस्ट और कृष्ण आकस्मिक रूप से पैदा नहीं हो जाते हैं। यह उन दो व्यक्तियों के परिपूर्ण मिलन का परिणाम है। मिलन जितना गहरा होगा, जो संतति पैदा होगी वह उतनी ही अदभुत होगी। मिलन जितना अधूरा होगा, जो संतति पैदा होगी वह उतनी ही कचरा और दलित होगी।

आज सारी दुनिया में मनुष्यता का स्तर रोज नीचे चला जा रहा है। लोग कहते हैं कि नीति बिगड़ गई है, इसलिए स्तर नीचे जा रहा है। लोग कहते हैं कि कलियुग आ गया है, इसलिए स्तर नीचे जा रहा है। गलत, बेकार की और फिजूल की बातें कहते हैं। सिर्फ एक फर्क पड़ा है। मनुष्य के संभोग का स्तर नीचे उतर गया है। मनुष्य के संभोग ने पवित्रता खो दी है। मनुष्य के संभोग ने वैज्ञानिकता खो दी है, सरलता और प्राकृतिकता खो दी है। मनुष्य का संभोग जबरदस्ती, एक नाइटमेयर, एक दुखद स्वप्न जैसा हो गया है। मनुष्य के संभोग ने एक हिंसात्मक स्थिति ले ली है। वह एक प्रेमपूर्ण कृत्य नहीं है, वह एक पवित्र और शांत कृत्य नहीं है, वह एक ध्यानपूर्ण कृत्य नहीं है। इसलिए मनुष्य नीचे उतरता चला जाएगा।

एक कलाकार कुछ चीज बनाता हो--कोई मूर्ति बनाता हो--और कलाकार नशे में हो, तो आप आशा करते हैं कि कोई सुंदर मूर्ति बन पाएगी? एक नृत्यकार नाच रहा हो, क्रोध से भरा हो, अशांत हो, चिंतित हो, तो आप आशा करते हैं कि नृत्य सुंदर हो सकेगा?

हम जो भी करते हैं, वह हम किस स्थिति में हैं, इस पर निर्भर होता है। और सबसे ज्यादा उपेक्षित, निग्लेक्टेड सेक्स है, संभोग है। और बड़े आश्चर्य की बात है, उसी संभोग से जीवन की सारी यात्रा चलती है! नये बच्चे, नई

आत्माएं जगत में प्रवेश करती हैं!

शायद आपको पता न हो, संभोग एक सिचुएशन है, जिसमें एक आकाश में उड़ती हुई आत्मा अपने योग्य स्थिति को समझ कर प्रविष्ट होती है। आप सिर्फ एक अवसर पैदा करते हैं। आप बच्चे के जन्मदाता नहीं हैं, सिर्फ एक अवसर पैदा करते हैं। वह अवसर जिस आत्मा के लिए जरूरी, उपयोगी और सार्थक मालूम होता है, वह आत्मा प्रविष्ट होती है।

अगर आपने एक रुग्ण अवसर पैदा किया है, अगर क्रोध में, दुख में, पीड़ा में और चिंता में आप हैं, तो जो आत्मा अवतरित होगी वह आत्मा इसी तल की हो सकती है, इससे ऊंचे तल की नहीं हो सकती है। श्रेष्ठ आत्माओं की पुकार के लिए श्रेष्ठ संभोग का अवसर और सुविधा चाहिए, तो श्रेष्ठ आत्माएं जन्मती हैं और जीवन ऊपर उठता है।

इसलिए मैंने कहा कि जिस दिन आदमी संभोग के पूरे शास्त्र में निष्णात होगा, जिस दिन हम छोटे-छोटे बच्चों से लेकर सारे जगत को उस कला और विज्ञान के संबंध में सारी बात कह सकेंगे और समझा सकेंगे, उस दिन हम बिलकुल नये मनुष्य को--जिसे नीत्शे सुपरमैन कहता था, जिसे अरविंद अतिमानव कहते थे, जिसको महान आत्मा कहा जा सके--वैसा बच्चा, वैसी संतति, वैसा जगत निर्मित किया जा सकता है। और जब तक हम ऐसा जगत निर्मित नहीं कर लेते हैं, तब तक न शांति हो सकती है विश्व में, न युद्ध रुक सकते हैं, न घृणा रुकेगी, न अनीति रुकेगी, न दुश्चरित्रता रुकेगी, न व्यभिचार रुकेगा, न जीवन का यह अंधकार रुकेगा। लाख राजनीतिज्ञ चिल्लाते रहें...

(बारिश की हलकी बौछारें, श्रोताओं में कुछ हलन-चलन।)

मत फिक्र करें, यह पांच मिनट के पानी गिरने से कोई फर्क नहीं पड़ेगा। बंद कर लें छाते! क्योंकि दूसरे लोगों के पास छाते नहीं हैं; यह बहुत अधार्मिक होगा कि कुछ लोग छाता खोल लें। उसे बंद कर लें! सबके पास छाते होते तो ठीक था। और लोगों के पास नहीं हैं और आप खोल कर बैठेंगे तो कैसा बेहूदा होगा, कैसा असंस्कृत होगा। उसको बंद कर लें! मैं जरूर, मेरे ऊपर छप्पर है, तो जितनी देर आप पानी में बैठे रहेंगे, मीटिंग के बाद उतनी देर मैं पानी में खड़ा हो जाऊंगा।

...नहीं मिटेगे युद्ध, नहीं मिटेगी अशांति, नहीं मिटेगी हिंसा, नहीं मिटेगी ईर्ष्या। कितने दिन हो गए! दस हजार साल हो गए! मनुष्य-जाति के पैगंबर, तीर्थंकर, अवतार समझा रहे हैं कि मत लड़ो, मत करो हिंसा, मत करो क्रोध। लेकिन किसी ने कभी नहीं सुना। जिन्होंने हमें समझाया कि मत करो हिंसा, मत करो क्रोध, उनको हमने सूली पर लटका दिया। यह उनकी शिक्षा का फल हुआ।

गांधी हमें समझाते थे कि प्रेम करो, एक हो जाओ! हमने गोली मार दी। यह कुल उनकी शिक्षा का फल हुआ। दुनिया के सारे मनुष्य, सारे महापुरुष हार गए हैं, यह समझ लेना चाहिए। असफल हो चुके हैं। आज तक का कोई भी मूल्य जीत नहीं सका। सब मूल्य हार गए। सब मूल्य असफल हो गए। बड़े से बड़े पुकारने वाले लोग, भले से भले लोग भी हार गए और समाप्त हो गए। और आदमी रोज अंधेरे और नरक में चला जाता रहा है।

क्या इससे यह पता नहीं चलता कि हमारी शिक्षाओं में कहीं कोई बुनियादी भूल है! अशांत आदमी इसलिए अशांत है कि वह अशांति में जन्मता है। उसके पास अशांति के कीटाणु हैं। उसके प्राणों की गहराई में अशांति का रोग है। जन्म के पहले दिन वह अशांति को, दुख और पीड़ा को लेकर पैदा हुआ है। जन्म के पहले क्षण में ही उसके जीवन का सारा स्वरूप निर्मित हो गया है।

इसलिए बुद्ध हार जाएंगे, महावीर हारेंगे, कृष्ण हारेंगे, क्राइस्ट हारेंगे। हार चुके हैं। हम शिष्टतावश यह कहते हैं कि वे नहीं हारे हैं तो दूसरी बात है, लेकिन वे सब हार चुके हैं। और आदमी रोज बिगड़ता चला गया है, रोज बिगड़ता गया है। अहिंसा की इतने दिन की शिक्षा, और हम छुरी से एटम और हाइड्रोजन बम पर पहुंच गए हैं। यह अहिंसा की शिक्षा की सफलता होगी?

पिछले पहले महायुद्ध में तीन करोड़ लोगों की हमने हत्या की थी। और उसके बाद--शांति और प्रेम की बातें करने के बाद--दूसरे महायुद्ध में हमने साढ़े सात करोड़ लोगों की हत्या की। और उसके बाद भी चिल्ला रहे हैं बर्ट्रेड रसेल से लेकर विनोबा तक सारे लोग कि शांति चाहिए, शांति चाहिए, और हम तीसरे महायुद्ध की तैयारी कर रहे हैं। और तीसरा महायुद्ध दूसरे महायुद्ध को बच्चों का खेल बना देगा।

आइंस्टीन से किसी ने पूछा था कि तीसरे महायुद्ध में क्या होगा? आइंस्टीन ने कहा कि तीसरे के बाबत कुछ भी नहीं कहा जा सकता, लेकिन चौथे के संबंध में मैं कुछ कह सकता हूं। पूछने वालों ने कहा, आश्चर्य! आप तीसरे के संबंध में नहीं कह सकते तो चौथे के संबंध में क्या कहेंगे? आइंस्टीन ने कहा, चौथे के संबंध में एक बात निश्चित है कि चौथा महायुद्ध कभी नहीं होगा। क्योंकि तीसरे के बाद किसी आदमी के बचने की कोई उम्मीद नहीं।

यह मनुष्य की सारी नैतिक और धार्मिक शिक्षा का फल है।

मैं आपसे कहना चाहता हूं, इसकी बुनियादी वजह दूसरी है। जब तक हम मनुष्य के संभोग को सुव्यवस्थित, मनुष्य के संभोग को आध्यात्मिक, जब तक हम मनुष्य के संभोग को समाधि का द्वार बनाने में सफल नहीं होते, तब तक अच्छी मनुष्यता पैदा नहीं हो सकती है। रोज बदतर से बदतर मनुष्यता पैदा होगी, क्योंकि आज के बदतर बच्चे कल संभोग करेंगे और अपने से बदतर लोगों को जन्म दे जाएंगे। हर पीढ़ी नीचे उतरती चली जाएगी, यह बिलकुल ही निश्चित है, इसकी प्रोफेसी की जा सकती है, इसकी भविष्यवाणी की जा सकती है।

और अब तो हम उस जगह पहुंच गए हैं कि शायद और पतन की गुंजाइश नहीं है। करीब-करीब सारी दुनिया एक मैड हाउस, एक पागलखाना हो गई है।

अमेरिका के मनोवैज्ञानिकों ने हिसाब लगाया है कि न्यूयार्क जैसे नगर में केवल अठारह प्रतिशत लोग मानसिक रूप से स्वस्थ कहे जा सकते हैं। अठारह प्रतिशत! अठारह प्रतिशत लोग मानसिक रूप से स्वस्थ हैं, तो बयासी प्रतिशत लोगों की क्या हालत है? बयासी प्रतिशत लोग करीब-करीब विक्षिप्त होने की हालत में हैं।

आप कभी अपने संबंध में कोने में बैठ कर विचार करना, तो आपको पता चलेगा कि पागलपन कितना है भीतर! किसी तरह दबाए हैं पागलपन को, किसी तरह सम्हल कर चले जा रहे हैं, वह बात दूसरी है। जरा सा कोई धक्का दे दे, और कोई भी आदमी पागल हो सकता है। यह संभावना है कि सौ वर्ष के भीतर सारी मनुष्यता एक पागलघर बन जाए, सारे लोग करीब-करीब पागल हो जाएं! फिर हमें एक फायदा होगा कि पागलों के इलाज की कोई जरूरत न रहेगी। एक फायदा होगा कि पागलों के चिकित्सक नहीं होंगे। एक फायदा होगा कि कोई अनुभव नहीं करेगा कि कोई पागल है। क्योंकि पागल का पहला लक्षण यह है कि वह कभी नहीं मानता कि मैं पागल हूं। इतना ही फायदा होगा। लेकिन यह रुग्णता बढ़ती चली जाती है। यह रोग, यह अस्वास्थ्य, यह मानसिक चिंता और मानसिक अंधकार बढ़ता चला जाता है।

क्या मैं आपसे कहूं कि सेक्स को स्प्रिचुएलाइज किए बिना, संभोग को आध्यात्मिक बनाए बिना कोई नई मनुष्यता पैदा नहीं हो सकती है? इन तीन दिनों में यही थोड़ी सी बातें मैंने आपसे कहीं। निश्चित ही एक नये मनुष्य को जन्म देना है। मनुष्य के प्राण आतुर हैं ऊंचाइयों को छूने के लिए, आकाश में उठ जाने के लिए, चांद-तारों जैसे रोशन होने के लिए, फूलों जैसे खिल जाने के लिए, नृत्य के लिए, संगीत के लिए, आदमी की आत्मा रोती है और प्यासी है। और आदमी कोल्हू के बैल की तरह एक चक्कर में घूमता है और उसी में समाप्त हो जाता है, चक्कर के बाहर नहीं उठ पाता है! क्या है कारण?

कारण एक ही है। मनुष्य के जन्म की प्रक्रिया बेहूदी है, एब्सर्ड है। मनुष्य के पैदा होने की विधि पागलपन से भरी हुई है। मनुष्य के संभोग को हम द्वार नहीं बना सके समाधि का, इसलिए।

मनुष्य का संभोग समाधि का द्वार बन सकता है। इन तीन दिनों में इसी छोटे से मंत्र पर मैंने सारी बातें कहीं। और अंत में एक बात दोहरा दूं और आज की चर्चा मैं पूरी करूं।

मैं यह कह देना चाहता हूं कि जीवन के सत्यों से आंखें चुराने वाले लोग मनुष्य के शत्रु हैं। जो आपसे कहे कि संभोग और सेक्स की बात विचार भी नहीं करनी चाहिए, वह आदमी मनुष्य का दुश्मन है। क्योंकि ऐसे ही दुश्मनों ने हमें सोचने नहीं दिया। अन्यथा यह कैसे संभव था कि हम आज तक वैज्ञानिक दृष्टि न खोज लेते और जीवन को नया करने का प्रयोग न खोज लेते! जो आपसे कहे कि सेक्स का धर्म से कोई संबंध नहीं है, वह आदमी सौ प्रतिशत गलत बात कहता है। क्योंकि सेक्स की ऊर्जा ही परिवर्तित और रूपांतरित होकर धर्म के जगत में प्रवेश पाती है। वीर्य की शक्ति ही ऊर्ध्वस्वी होकर मनुष्य को उन लोकों में ले जाती है, जिनका हमें कोई भी पता नहीं है, जहां कोई मृत्यु नहीं है, जहां कोई दुख नहीं है, जहां आनंद के अतिरिक्त और कोई अस्तित्व नहीं है।

उस सत्-चित्-आनंद में ले जाने वाली शक्ति और ऊर्जा किसके पास है और कहां है?

हम उसे व्यय कर रहे हैं। हम उन पात्रों की तरह हैं जिनमें छेद हैं, जिन्हें हम कुओं में डालते हैं खींचने के लिए। ऊपर तक पात्र तो आ जाता है, शोरगुल भी बीच में बहुत होता है और पानी गिरता है और लगता है कि पानी आता होगा। लेकिन पानी सब बीच में गिर जाता है, खाली पात्र हाथ में वापस आ जाते हैं। हम उन नावों की तरह हैं जिनमें छेद हैं। हम नावों को खेते हैं--सिर्फ डूबने के लिए; नावें किसी किनारे पर नहीं पहुंचा पातीं, सिर्फ मझधार में डूबा देती हैं और नष्ट कर देती हैं।

और ये सारे छिद्र मनुष्य की सेक्स ऊर्जा के गलत मार्गों से प्रवाहित और बह जाने के कारण हैं। और उन गलत मार्गों पर बहाने वाले लोग वे नहीं हैं जिन्होंने नंगी तस्वीरें लटकाई हैं, वे नहीं हैं जिन्होंने नंगे उपन्यास लिखे हैं, वे नहीं हैं जो नंगी फिल्में बना रहे हैं। मनुष्य की ऊर्जा को विकृत करने वाले वे लोग हैं जिन्होंने मनुष्य को सेक्स के सत्य से परिचित होने में बाधा दी है। और वे ही लोगों के कारण ये नंगी तस्वीरें बिक रही हैं, नंगी फिल्में बिक रही हैं, लोग नंगे क्लबों को ईजाद कर रहे हैं और गंदगी के नये-नये और बेहूदगी के नये-नये रास्ते निकाल रहे हैं।

किनके कारण? ये उनके कारण जिनको हम साधु और संन्यासी कहते हैं! उन्होंने इनके बाजार का रास्ता तैयार किया है। अगर गौर से हम देखें तो वे इनके विज्ञापनदाता हैं, वे इनके एजेंट हैं।

एक छोटी सी कहानी, मैं अपनी बात पूरी कर दूंगा।

एक पुरोहित जा रहा था अपने चर्च की तरफ। दूर था गांव, भागा हुआ चला जा रहा था। तभी उसे पास की खाई में जंगल में एक आदमी पड़ा हुआ दिखाई पड़ा--घावों से भरा हुआ, खून बह रहा है, छुरी उसकी छाती में चुभी है। पुरोहित को खयाल आया कि चलूं, मैं इसे उठा लूं। लेकिन उसने देखा कि चर्च पहुंचने में देर हो जाएगी और वहां उसे व्याख्यान देना है और लोगों को समझाना है। आज वह प्रेम के संबंध में ही समझाने जाता था। आज उसने विषय चुना था: लव इज़ गॉड। क्राइस्ट के वचन को चुना था कि ईश्वर, परमात्मा प्रेम है। वह यही समझाने जा रहा था, वह उसी का हिसाब लगाता हुआ भागा जा रहा है।

लेकिन उस आदमी ने आंखें खोलीं और उसने चिल्लाया कि पुरोहित, मुझे पता है कि तू प्रेम पर बोलने जा रहा है। मैं भी आज सुनने आने वाला था। लेकिन दुष्टों ने मुझे छुरी मार कर यहां पटक दिया है। लेकिन याद रख, अगर मैं जिंदा रह गया तो गांव भर में खबर कर दूंगा कि आदमी मर रहा था और यह आदमी प्रेम पर व्याख्यान देने चला गया! देख, आगे मत बढ़!

इससे पुरोहित को थोड़ा डर लगा। क्योंकि अगर यह आदमी जिंदा रह जाए और गांव में खबर कर दे, तो लोग कहेंगे कि प्रेम का व्याख्यान बड़ा झूठा था, आपने इस आदमी की फिक्र न की जो मरता था! तो मजबूरी में उसे नीचे उतर कर उसके पास जाना पड़ा। वहां जाकर उसका चेहरा देखा तो वह बहुत घबराया। चेहरा तो पहचाना हुआ सा मालूम पड़ता था! उसने कहा, ऐसा मालूम होता है मैंने तुम्हें कहीं देखा है! और उस मरणासन्न आदमी ने कहा, जरूर देखा होगा। मैं शैतान हूं, और पादरियों से अपना पुराना नाता है। तुमने नहीं देखा होगा तो किसने मुझे देखा होगा!

तब उसे खयाल आया कि वह तो शैतान है, चर्च में उसकी तस्वीर लटकी हुई है। उसने अपने हाथ अलग कर लिए और कहा कि मर जा! शैतान को तो हम चाहते हैं कि वह मर ही जाए। अच्छा हुआ कि तू मर जा। मैं तुझे बचाने का क्यों उपाय करूं? मैंने तेरा खून भी छू लिया, यह भी पाप हुआ। मैं जाता हूं।

वह शैतान जोर से हंसा, उसने कहा, याद रखना, जिस दिन मैं मर जाऊंगा, उस दिन तुम्हारा धंधा भी मर जाएगा। मेरे बिना तुम जिंदा नहीं रह सकते हो। मैं हूं, इसलिए तुम जिंदा हो। मैं तुम्हारे धंधे का आधार हूं। मुझे बचाने की कोशिश करो! नहीं तो जिस दिन शैतान मर जाएगा, उसी दिन पुरोहित, पंडा, पुजारी सब मर जाएगा; क्योंकि दुनिया अच्छी हो जाएगी, पंडे, पुजारी, पुरोहित की कोई जरूरत नहीं रह जाएगी।

पुरोहित ने सोचा और घबराया कि यह तो बहुत बेसिक, बहुत बुनियादी बात कह रहा है वह आदमी। उसने उसे तत्काल कंधे पर उठा लिया और कहा, प्यारे शैतान, घबराओ मत! मैं ले चलता हूं अस्पताल, तुम्हारा इलाज करवाऊंगा, तुम जल्दी ही ठीक हो जाओगे। लेकिन देखो, मर मत जाना। तुम ठीक कहते हो, तुम मर गए तो हम बिलकुल बेकार हो जाने वाले हैं।

हमें खयाल भी नहीं आ सकता कि पुरोहित के धंधे के पीछे शैतान है। हमें यह भी खयाल नहीं आ सकता कि शैतान के धंधे के पीछे पुरोहित है। यह जो शैतान का धंधा चल रहा है--सेक्स का शोषण चल रहा है सारी दुनिया में, हर चीज के पीछे सेक्स का शोषण चल रहा है--हमें खयाल भी नहीं आ सकता कि पुरोहित का हाथ है इसके पीछे। पुरोहित ने जितनी निंदा की है, सेक्स उतना आकर्षक हो गया है। फिर उसने जितने दमन के लिए कहा है, आदमी उतना भोग में गिर गया है। पुरोहित ने जितना इनकार किया कि सेक्स के संबंध में सोचना ही मत, सेक्स उतनी ही अनजान पहली हो गई और हम उसके संबंध में कुछ भी करने में असमर्थ हो गए।

नहीं! ज्ञान चाहिए। ज्ञान शक्ति है। और सेक्स का ज्ञान बड़ी शक्ति बन सकता है। अज्ञान में जीना हितकर नहीं है। और सेक्स के अज्ञान में जीना तो बिलकुल हितकर नहीं है। यह भी हो सकता है कि हम न जाएं चांद पर। कोई जरूरत नहीं है चांद पर जाने की। चांद को जान लेने से कोई मनुष्य-जाति का बहुत हित नहीं हो जाएगा। यह भी जरूरी नहीं है कि हम पैसिफिक महासागर की गहराइयों में उतरें पांच मील, जहां कि सूरज की रोशनी भी नहीं पहुंचती। उसको जान लेने से भी मनुष्य-जाति का कोई बहुत परम मंगल हो जाने वाला नहीं है। यह भी जरूरी नहीं है कि हम एटम को तोड़ें और पहचानें। लेकिन एक बात बिलकुल जरूरी है, सबसे ज्यादा जरूरी है, अल्टीमेट कंसर्न की है, और वह यह है कि हम मनुष्य के सेक्स को ठीक से जान लें और समझ लें, ताकि नये मनुष्य को जन्म देने में सफल हो सकें।

ये थोड़ी सी बातें तीन दिन में मैंने आपसे कहीं। कल आपके प्रश्नों के उत्तर दूंगा। और चूंकि कल का दिन खाली छूट गया, कुछ मित्र आए और भीग कर लौट गए, तो मेरे ऊपर उनका ऋण हो गया है, तो कल मैं दो घंटे उत्तर दे

दूंगा ताकि आपको कोई अड़चन और तकलीफ न हो। अपने प्रश्न आप लिख कर दे देंगे--ईमानदारी से! क्योंकि यह मामला ऐसा नहीं है कि आप परमात्मा, आत्मा के संबंध में जिस तरह की बातें पूछते हैं, वे यहां पूछें। यह मामला जिंदगी का है और सीधे और सच्चे अगर आपने प्रश्न पूछे तो हम इन विषयों की और गहराई में भी उतरने में समर्थ हो सकते हैं।

मेरी बातों को इतने प्रेम से सुना, उसके लिए अनुगृहीत हूं। और अंत में सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं, मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

मेरे प्रिय आत्मन्!

मित्रों ने बहुत से प्रश्न पूछे हैं। सबसे पहले एक मित्र ने पूछा है कि ओशो, मैंने बोलने के लिए सेक्स या काम का विषय क्यों चुना है?

इसकी थोड़ी सी कहानी है। एक बड़ा बाजार है। उस बड़े बाजार को कुछ लोग बंबई कहते हैं। उस बड़े बाजार में एक सभा थी। और उस सभा में एक पंडित जी, कबीर क्या कहते हैं, इस संबंध में बोलते थे। उन्होंने कबीर की एक पंक्ति कही और उसका अर्थ समझाया। उन्होंने कहा कि कबीरा खड़ा बाजार में, लिए लुकाठी हाथ; जो घर बारै आपना, चले हमारे साथ। उन्होंने यह कहा कि कबीर बाजार में खड़ा था और चिल्ला कर लोगों से कहने लगा कि लकड़ी उठा कर मैं बुलाता हूं उन्हें, जो अपने घर को जलाने की हिम्मत रखते हों, वे हमारे साथ आ जाएं।

उस सभा में मैंने देखा कि लोग यह बात सुन कर बहुत खुश हुए। मुझे बड़ी हैरानी हुई! मुझे हैरानी यह हुई कि वे जो लोग खुश हो रहे थे, उनमें से कोई भी अपने घर को जलाने को कभी भी तैयार नहीं था। लेकिन उन्हें प्रसन्न देख कर मैंने समझा कि बेचारा कबीर आज होता तो कितना खुश न होता! जब तीन सौ साल पहले वह था और किसी बाजार में उसने चिल्ला कर कहा होगा, तो एक भी आदमी खुश नहीं हुआ होगा। आदमी की जात बड़ी अदभुत है। जो मर जाते हैं, उनकी बातें सुन कर लोग खुश होते हैं। और जो जिंदा होते हैं, उन्हें मार डालने की धमकी देते हैं।

मैंने सोचा, आज कबीर होते इस बंबई के बड़े बाजार में, तो कितने खुश होते कि लोग कितने प्रसन्न हो रहे हैं! कबीर जी क्या कहते हैं, इसकी सुन कर लोग प्रसन्न हो रहे हैं। कबीर जी को सुन कर वे कभी भी प्रसन्न नहीं हुए थे।

लेकिन लोगों को प्रसन्न देख कर मुझे ऐसा लगा कि जो लोग अपने घर को जलाने के लिए भी हिम्मत रखते हैं और खुश होते हैं, उनसे आज कुछ दिल की बातें कही जाएं। तो मैं भी उसी धोखे में आ गया, जिसमें कबीर और क्राइस्ट और सारे लोग हमेशा आते रहे हैं। तो मैंने लोगों से सत्य की कुछ बात कहनी चाही। और सत्य के संबंध में कोई बात कहनी हो तो उन असत्यों को सबसे पहले तोड़ देना जरूरी है जो आदमी ने सत्य समझ रखे हैं। जिन्हें हम सत्य समझते हैं और जो सत्य नहीं हैं, जब तक उन्हें न तोड़ दिया जाए, तब तक सत्य क्या है, उसे जानने की तरफ कोई कदम नहीं उठाया जा सकता है।

मुझे कहा गया था उस सभा में कि मैं प्रेम के संबंध में कुछ कहूं। और मुझे लगा कि प्रेम के संबंध में तब तक बात समझ में नहीं आ सकती, जब तक कि हम काम और सेक्स के संबंध में कुछ गलत धारणाएं लिए हुए बैठे हैं। अगर गलत धारणाएं हैं सेक्स के संबंध में, तो प्रेम के संबंध में हम जो भी बातचीत करेंगे, वह अधूरी होगी, वह झूठी होगी, वह सत्य नहीं हो सकती।

इसलिए उस सभा में मैंने काम और सेक्स के संबंध में कुछ कहा। और यह कहा कि काम की ऊर्जा ही रूपांतरित होकर प्रेम की अभिव्यक्ति बनती है।

एक आदमी खाद खरीद लाता है, गंदी और बदबू से भरी हुई। और अगर अपने घर के पास ढेर लगा ले तो सड़क पर से निकलना मुश्किल हो जाएगा, इतनी दुर्गंध वहां फैलेगी। लेकिन एक दूसरा आदमी उसी खाद को बगीचे में डालता है और फूलों के बीज डालता है। फिर वे बीज बड़े होते हैं, पौधे बनते हैं, और फूल आते हैं। और फूलों की सुगंध पास-पड़ोस के घरों में निमंत्रण बन कर पहुंच जाती है। राह से निकलते हुए लोगों को भी वह सुगंध छूती है, वह पौधों का लहराता हुआ संगीत अनुभव होता है। लेकिन शायद ही कभी आपने सोचा हो कि फूलों से जो सुगंध बन कर प्रकट हो रहा है, वह वही दुर्गंध है जो खाद से प्रकट होती थी। खाद की दुर्गंध बीजों से गुजर कर फूलों की सुगंध बन जाती है।

दुर्गंध सुगंध बन सकती है। काम प्रेम बन सकता है।

लेकिन जो काम के विरोध में हो जाएगा, वह उसे प्रेम कैसे बनाएगा? जो काम का शत्रु हो जाएगा, वह उसे कैसे रूपांतरित करेगा? इसलिए काम को, सेक्स को समझना जरूरी है--यह मैंने वहां कहा--और उसे रूपांतरित करना

जरूरी है।

मैंने सोचा था, जो लोग सिर हिलाते थे घर जल जाने पर, वे लोग मेरी बातें सुन कर बड़े खुश होंगे। लेकिन मुझसे गलती हो गई। जब मैं मंच से उतरा, तो उस मंच पर जितने नेता थे, जितने संयोजक थे, वे सब भाग चुके थे। वे मुझे उतरते वक्त मंच पर कोई भी नहीं मिले। वे शायद अपने घर चले गए होंगे, कहीं घर में आग न लग जाए, उसे बुझाने का इंतजाम करने भाग गए थे। मुझे धन्यवाद देने को भी संयोजक वहां नहीं थे। जितनी भी सफेद टोपियां थीं, जितने भी खादी वाले लोग थे, वे मंच पर कोई भी नहीं थे, वे जा चुके थे। नेता बड़ा कमजोर होता है, वह अनुयायियों के पहले भाग जाता है।

लेकिन कुछ हिम्मतवर लोग जरूर ऊपर आए। कुछ बच्चे आए, कुछ बच्चियां आईं; कुछ बूढ़े, कुछ जवान। और उन्होंने मुझसे कहा कि आपने वह बात हमें कही है, जो हमें किसी ने भी कभी नहीं कही। और हमारी आंखें खोल दी हैं। हमें बहुत ही प्रकाश अनुभव हुआ है।

तो फिर मैंने सोचा कि उचित होगा कि इस बात को और ठीक से पूरी तरह कहा जाए, इसलिए यह विषय मैंने आज यहां चुना। इन चार दिनों में वह कहानी जो वहां अधूरी रह गई थी, उसे पूरा करने का कारण यह था कि लोगों ने मुझे कहा। और वह उन लोगों ने कहा जिनकी जीवन को समझने की हार्दिक चेष्टा है। और उन्होंने चाहा कि मैं पूरी बात कहूं। एक तो कारण यह था।

और दूसरा कारण यह था कि वे जो लोग भाग गए थे मंच से, उन्होंने जगह-जगह जाकर कहना शुरू कर दिया कि मैंने तो ऐसी बातें कही हैं जिनसे धर्म का विनाश हो जाएगा! मैंने तो ऐसी बातें कही हैं जिनसे कि लोग अधार्मिक हो जाएंगे!

तो मुझे लगा कि उनका भी कहना पूरा स्पष्ट हो सके, उनको भी पता चल सके कि लोग सेक्स के संबंध में समझ कर अधार्मिक होने वाले नहीं हैं। नहीं समझा है उन्होंने आज तक, इसलिए अधार्मिक हो गए हैं। अज्ञान अधार्मिक बना सकता है; ज्ञान कभी भी अधार्मिक नहीं बना सकता। और अगर ज्ञान अधार्मिक बनाता हो, तो मैं कहता हूं कि ऐसा ज्ञान उचित है जो अधार्मिक बना दे, उस अज्ञान की बजाय जो कि धार्मिक बनाता हो। क्योंकि जो अज्ञान धार्मिक बनाता हो, तो वह धर्म भी दो कौड़ी का है जो अज्ञान की बुनियाद पर खड़ा होता हो। धर्म तो वही सत्य है जो ज्ञान के आधार पर खड़ा होता है।

और मुझे नहीं दिखाई पड़ता कि ज्ञान मनुष्य को कभी भी कोई हानि पहुंचा सकता है। हानि हमेशा अंधकार से पहुंचती है और अज्ञान से।

इसलिए अगर मनुष्य-जाति भ्रष्ट हो गई, यौन के संबंध में विकृत और विक्षिप्त हो गई, सेक्स के संबंध में पागल हो गई, तो उसका जिम्मा उन लोगों पर नहीं है जिन्होंने सेक्स के संबंध में ज्ञान की खोज की है। उसका जिम्मा उन नैतिक, धार्मिक और थोथे साधु-संतों पर है जिन्होंने मनुष्य को हजारों वर्षों से अज्ञान में रखने की चेष्टा की है। यह मनुष्य-जाति कभी की सेक्स से मुक्त हो गई होती। लेकिन नहीं यह हो सका। नहीं हो सका उनकी वजह से जो अंधकार कायम रखने की चेष्टा कर रहे हैं।

तो मैंने समझा कि अगर थोड़ी सी किरण से इतनी बेचैनी हुई है तो फिर पूरे प्रकाश की चर्चा कर लेनी उचित है। ताकि साफ हो सके कि ज्ञान मनुष्य को धार्मिक बनाता है या अधार्मिक बनाता है। यह कारण था इसलिए यह विषय चुना। और अगर यह कारण न होता तो शायद मुझे अचानक खयाल न आता इसे चुनने का। शायद इस पर मैं कोई बात न करता। इस लिहाज से वे लोग धन्यवाद के पात्र हैं जिन्होंने अवसर पैदा कर दिया और यह विषय मुझे चुनना पड़ा। और अगर आपको धन्यवाद देना हो तो मुझे मत देना। वह भारतीय विद्याभवन में जिन्होंने सभा आयोजित की थी, उनको धन्यवाद देना। उन्होंने ही यह विषय चुनवा दिया है। मेरा इसमें कोई हाथ नहीं है।

एक मित्र ने पूछा है कि मैंने कहा कि काम का रूपांतरण ही प्रेम बनता है। तो उन्होंने पूछा है कि ओशो, मां का बेटे के लिए प्रेम--क्या वह भी काम है, वह भी सेक्स है?

और भी कुछ लोगों ने इसी तरह के प्रश्न पूछे हैं।

इसे थोड़ा समझ लेना उपयोगी होगा।

अगर मेरी बात आपने ध्यान से सुनी है, तो मैंने कहा कि सेक्स के अनुभव की बड़ी गहराइयां हैं जिन तक आदमी पहुंच भी नहीं पाता है। तीन तल हैं सेक्स के अनुभव के, वह मैं आपसे कहूं।

एक तल तो शरीर का तल है--बिल्कुल फिजियोलॉजिकल। एक आदमी वेश्या के पास जाता है। उसे जो सेक्स का अनुभव होता है, वह शरीर से गहरा नहीं हो सकता। वेश्या शरीर बेच सकती है, मन नहीं बेचा जा सकता। और आत्मा के बेचने का तो कोई उपाय नहीं है। शरीर मिल सकता है। एक आदमी बलात्कार करता है, तो

बलात्कार में किसी का मन भी नहीं मिल सकता और किसी की आत्मा भी नहीं। शरीर पर बलात्कार किया जा सकता है, आत्मा पर बलात्कार करने का न कोई उपाय खोजा जा सका है, न खोजा जा सकता है। तो बलात्कार में भी जो अनुभव होगा, वह शरीर का होगा।

सेक्स का प्राथमिक अनुभव शरीर से ज्यादा गहरा नहीं होता। लेकिन शरीर के अनुभव पर ही जो रुक जाते हैं, वे सेक्स के पूरे अनुभव को उपलब्ध नहीं होते। उन्हें, मैंने जो गहराइयों की बातें कही हैं, उसका उन्हें कोई भी पता नहीं चल सकता। और अधिक लोग शरीर के तल पर ही रुक गए हैं।

इस संबंध में यह भी जान लेना जरूरी है कि जिन देशों में भी प्रेम के बिना विवाह होता है, उस देश में सेक्स शरीर के तल पर ही रुक जाता है, उससे गहरा नहीं जा सकता। विवाह दो शरीरों का हो सकता है, विवाह दो आत्माओं का नहीं। दो आत्माओं का प्रेम हो सकता है। तो अगर प्रेम से विवाह निकलता हो, तब तो विवाह एक गहरा अर्थ ले लेता है। और अगर विवाह दो पंडितों के और दो ज्योतिषियों के हिसाब-किताब से निकलता हो, और जाति के विचार से निकलता हो, और धन के विचार से निकलता हो, तो वैसा विवाह कभी भी शरीर से ज्यादा गहरा नहीं जा सकता।

लेकिन ऐसे विवाह का एक फायदा है। शरीर मन की बजाय ज्यादा स्थिर चीज है। इसलिए शरीर जिन समाजों में विवाह का आधार है, उन समाजों में विवाह सुस्थिर होगा, जीवन भर चल जाएगा। शरीर अस्थिर चीज नहीं है। शरीर बहुत स्थिर चीज है। उसमें परिवर्तन बहुत धीरे-धीरे आता है और पता भी नहीं चलता। शरीर जड़ता का तल है। इसलिए जिन समाजों ने यह समझा कि विवाह को स्थिर बनाना जरूरी है--एक ही विवाह पर्याप्त हो, बदलाव की जरूरत न पड़े, उनको प्रेम अलग कर देना पड़ा। क्योंकि प्रेम होता है मन से और मन चंचल है।

जो समाज प्रेम के आधार पर विवाह को निर्मित करेंगे, उन समाजों में तलाक अनिवार्य होगा। उन समाजों में विवाह परिवर्तित होगा; विवाह स्थायी व्यवस्था नहीं हो सकती। क्योंकि प्रेम तरल है।

मन चंचल है। शरीर स्थिर और जड़ है।

आपके घर में एक पत्थर पड़ा हुआ है। सुबह पत्थर पड़ा था, सांझ भी पत्थर वहीं पड़ा रहेगा। सुबह एक फूल खिला था, सांझ तक मुझा जाएगा और गिर जाएगा। फूल जिंदा है, जन्मेगा, जीएगा, मरेगा। पत्थर मुर्दा है, वैसे का वैसा सुबह था, वैसा ही शाम पड़ा रहेगा। पत्थर बहुत स्थिर है।

विवाह पत्थर की तरह है। शरीर के तल पर जो विवाह है, वह स्थिरता लाता है, समाज के हित में है। लेकिन एक-एक व्यक्ति के अहित में है। क्योंकि वह स्थिरता शरीर के तल पर लाई गई है और प्रेम से बचा गया है। इसलिए शरीर के तल से ज्यादा पति और पत्नी का संभोग और सेक्स नहीं पहुंच पाता गहरे में। एक यांत्रिक, एक मैकेनिकल रूटीन हो जाती है। एक यंत्र की भांति जीवन हो जाता है सेक्स का। उस अनुभव को रिपीट करते रहते हैं और जड़ होते चले जाते हैं। लेकिन उससे ज्यादा गहराई कभी भी नहीं मिलती।

जहां प्रेम के बिना विवाह होता है उस विवाह में और वेश्या के पास जाने में बुनियादी भेद नहीं है, थोड़ा सा भेद है। बुनियादी नहीं है वह। वेश्या को आप एक दिन के लिए खरीदते हैं और पत्नी को आप पूरे जीवन के लिए खरीदते हैं। इससे ज्यादा फर्क नहीं पड़ता। जहां प्रेम नहीं है, वहां खरीदना ही है, चाहे एक दिन के लिए खरीदो, चाहे पूरी जिंदगी के लिए खरीदो। हालांकि साथ रहने से रोज-रोज एक तरह का संबंध पैदा हो जाता है एसोसिएशन से। लोग उसी को प्रेम समझ लेते हैं। वह प्रेम नहीं है। प्रेम और ही बात है। शरीर के तल पर विवाह है इसलिए शरीर के तल से गहरा संबंध कभी भी नहीं उत्पन्न हो पाता। यह एक तल है।

दूसरा तल है सेक्स का--मन का तल, साइकोलाजिकल। वात्स्यायन से लेकर पंडित कोक तक जिन लोगों ने भी इस तरह के शास्त्र लिखे हैं सेक्स के बाबत, वे शरीर के तल से गहरे नहीं जाते। दूसरा तल है मानसिक। जो लोग प्रेम करते हैं और फिर विवाह में बंधते हैं, उनका सेक्स शरीर के तल से थोड़ा गहरा जाता है। वह मन तक जाता है। उसकी गहराई साइकोलाजिकल है। लेकिन वह भी रोज-रोज पुनरुक्त होने से थोड़े दिनों में शरीर के तल पर आ जाता है और यांत्रिक हो जाता है।

पश्चिम ने जो व्यवस्था विकसित की है दो सौ वर्षों में प्रेम-विवाह की, वह मानसिक तल तक सेक्स को ले जाती है। और इसीलिए पश्चिम में समाज अस्तव्यस्त हो गया है; क्योंकि मन का कोई भरोसा नहीं है। वह आज कहता है कुछ, कल कुछ कहने लगता है। सुबह कुछ कहता है, सांझ कुछ कहने लगता है। घड़ी भर पहले कुछ कहता है, घड़ी भर बाद कुछ कहने लगता है।

शायद आपने सुना होगा कि बायरन ने जब शादी की, तो कहते हैं कि तब तक वह कोई साठ-सत्तर स्त्रियों से संबंधित रह चुका था। एक स्त्री ने उसे मजबूर ही कर दिया विवाह के लिए। तो उसने विवाह किया। और जब वह चर्च से उतर रहा था विवाह करके अपनी पत्नी का हाथ हाथ में लेकर--घंटियां बज रही हैं चर्च की; मोमबत्तियां

अभी जो जलाई गई हैं, जल रही हैं; अभी जो मित्र स्वागत करने आए थे, वे विदा हो रहे हैं; और वह अपनी पत्नी का हाथ पकड़ कर सामने खड़ी घोड़ागाड़ी में बैठने के लिए चर्च की सीढ़ियां उतर रहा है--तभी उसे चर्च के सामने ही एक और स्त्री जाती हुई दिखाई पड़ी। एक क्षण को वह भूल गया अपनी पत्नी को, उसके हाथ को, अपने विवाह को। सारा प्राण उस स्त्री का पीछा करने लगा।

जाकर वह गाड़ी में बैठा। बहुत ईमानदार आदमी रहा होगा। उसने अपनी पत्नी से कहा कि तूने कुछ ध्यान दिया? एक अजीब घटना घट गई। कल तक तुझसे मेरा विवाह नहीं हुआ था तो मैं विचार करता था कि तू मुझे मिल पाएगी या नहीं? तेरे सिवाय मुझे कोई भी नहीं दिखाई पड़ता था। और आज जब कि विवाह हो गया है, मैं तेरा हाथ पकड़ कर नीचे उतर रहा हूं, मुझे एक स्त्री दिखाई पड़ी गाड़ी के उस तरफ जाती हुई--और तू मुझे भूल गई और मेरा मन उस स्त्री का पीछा करने लगा। और एक क्षण को मुझे लगा कि काश, यह स्त्री मुझे मिल जाए!

मन इतना चंचल है। तो जिन लोगों को समाज को व्यवस्थित रखना था, उन्होंने मन के तल पर सेक्स को नहीं जाने दिया, उन्होंने शरीर के तल पर रोक लिया। विवाह करो, प्रेम नहीं। फिर विवाह से प्रेम आता हो तो आए, न आता हो न आए। शरीर के तल पर स्थिरता हो सकती है। मन के तल पर स्थिरता बहुत मुश्किल है।

लेकिन मन के तल पर सेक्स का अनुभव शरीर से ज्यादा गहरा होता है। पूरब की बजाय पश्चिम का सेक्स का अनुभव ज्यादा गहरा है। तो पश्चिम के जो मनोवैज्ञानिक हैं फ्रायड से जुंग तक, उन सारे लोगों ने जो भी लिखा है, वह सेक्स की दूसरी गहराई है, वह मन की गहराई है।

लेकिन मैं जिस सेक्स की बात कर रहा हूं, वह तीसरा तल है। वह न आज तक पूरब में पैदा हुआ है, न पश्चिम में। वह तीसरा तल है--स्प्रिचुअल। वह तीसरा तल है--आध्यात्मिक।

शरीर के तल पर भी एक स्थिरता है, क्योंकि शरीर जड़ है। और आत्मा के तल पर भी एक स्थिरता है, क्योंकि आत्मा के तल पर कोई परिवर्तन कभी होता ही नहीं। वहां सब शांत है, वहां सब सनातन है। बीच में एक तल है मन का, जहां तरलता है, पारे की तरह तरल है मन, जरा में बदल जाता है।

पश्चिम मन के साथ प्रयोग कर रहा है, इसलिए विवाह टूट रहा है, परिवार नष्ट हो रहा है। मन के साथ विवाह और परिवार खड़े नहीं रह सकते। अभी दो वर्ष में तलाक है, कल दो घंटे में तलाक हो सकता है। मन तो घंटे भर में बदल जाता है। तो पश्चिम का सारा समाज अस्तव्यस्त हो गया है। पूरब का समाज व्यवस्थित था। लेकिन सेक्स की जो गहरी अनुभूति थी, वह पूरब को उपलब्ध नहीं हो सकी।

एक और स्थिरता है, एक और घड़ी है--आध्यात्म की। उस तल पर जो पति-पत्नी एक बार मिल जाते हैं या दो व्यक्ति एक बार मिल जाते हैं, उन्हें तो ऐसा लगता है कि वे अनंत जन्मों के लिए एक हो गए। वहां फिर कोई परिवर्तन नहीं है। उस तल पर चाहिए स्थिरता। उस तल पर चाहिए अनुभव।

तो मैं जिस अनुभव की बात कर रहा हूं, जिस सेक्स की बात कर रहा हूं, वह स्प्रिचुअल सेक्स है। आध्यात्मिक अर्थ नियोजन करना चाहता हूं काम की वासना में। और अगर मेरी यह बात समझेंगे तो आपको पता चल जाएगा कि मां का बेटे के प्रति जो प्रेम है, वह आध्यात्मिक काम है, वह स्प्रिचुअल सेक्स का हिस्सा है।

आप कहेंगे, यह तो बहुत उलटी बात है! मां का बेटे के प्रति काम का क्या संबंध?

लेकिन जैसा मैंने कहा कि पुरुष और स्त्री, पति और पत्नी एक क्षण के लिए मिलते हैं, एक क्षण के लिए दोनों की आत्माएं एक हो जाती हैं। और उस घड़ी में जो उन्हें आनंद का अनुभव होता है, वही उनको बांधने वाला हो जाता है। कभी आपने सोचा कि मां के पेट में बेटा नौ महीने तक रहता है और मां के अस्तित्व से मिला रहता है। पति एक क्षण को मिलता है। बेटा नौ महीने के लिए एक होता है, इकट्ठा होता है। इसीलिए मां का बेटे से जो गहरा संबंध है, वह पति से भी कभी नहीं होता। हो भी नहीं सकता। पति एक क्षण के लिए मिलता है अस्तित्व के तल पर, जहां एक्झिस्टेंस है, जहां बीइंग है, वहां एक क्षण को मिलता है, फिर बिछुड़ जाता है। एक क्षण को करीब आते हैं और फिर कोसों का फासला शुरू हो जाता है। लेकिन बेटा नौ महीने तक मां की सांस से सांस लेता है, मां के हृदय से धड़कता है, मां के खून से खून, मां के प्राण से प्राण। उसका अपना कोई अस्तित्व नहीं होता, वह मां का एक हिस्सा होता है।

इसीलिए स्त्री मां बने बिना कभी भी पूरी तरह तृप्त नहीं हो पाती। कोई पति स्त्री को कभी तृप्त नहीं कर सकता, जो उसका बेटा उसको कर देता है। कोई पति कभी उतना गहरा कंटेंटमेंट उसे नहीं दे पाता, जितना उसका बेटा उसको दे पाता है। स्त्री मां बने बिना पूरी नहीं हो पाती। उसके व्यक्तित्व का पूरा निखार और पूरा सौंदर्य उसके मां बनने पर प्रकट होता है। उससे उसके बेटे के आत्मिक संबंध बहुत गहरे हैं।

और इसीलिए आप यह भी समझ लो कि जैसे ही स्त्री मां बन जाती है, उसकी सेक्स में रुचि कम हो जाती है। यह कभी आपने खयाल किया? जैसे ही स्त्री मां बन जाती है, सेक्स के प्रति उसकी रुचि कम हो जाती है। फिर

सेक्स में उसे उतना रस नहीं मालूम पड़ता। उसने एक और गहरा रस ले लिया है--मातृत्व का। वह एक प्राण के साथ और नौ महीने तक इकट्ठी जी ली है, अब उसे सेक्स में रस नहीं रह जाता।

अक्सर पति हैरान होते हैं। क्योंकि पति के पिता बनने से पुरुषों में कोई फर्क नहीं पड़ता। लेकिन मां बनने से स्त्री में बुनियादी फर्क पड़ जाता है। पिता बनने से पति में कोई फर्क नहीं पड़ता। क्योंकि पिता कोई बहुत गहरा संबंध नहीं है। जो नया व्यक्ति पैदा होता है उससे पिता का कोई गहरा संबंध नहीं है। पिता बिल्कुल सामाजिक व्यवस्था है, सोशल इंस्टीट्यूशन है। पिता के बिना भी दुनिया चल सकती है। इसीलिए पिता से कोई गहरा संबंध नहीं है बेटे का।

मां से उसके बहुत गहरे संबंध हैं। और मां तृप्त हो जाती है उसके बाद, और उसमें एक और ही तरह की आध्यात्मिक गरिमा प्रकट होती है। जो मां नहीं बनी है स्त्री, उसको देखें; और जो मां बन गई है, उसे देखें। और उन दोनों की चमक और उनकी ऊर्जा और उनका व्यक्तित्व अलग मालूम पड़ेगा। मां में एक दीप्ति दिखाई पड़ेगी--शांत। जैसे नदी जब मैदान में आ जाती है तब शांत हो जाती है। जो अभी मां नहीं बनी है, उस स्त्री में एक दौड़ दिखेगी। जैसे पहाड़ पर नदी दौड़ती है, झरने की तरह टूटती है, चिल्लाती है, गड़गड़ाहट है, आवाज है, दौड़ है। मां बन कर वह एकदम शांत हो जाती है।

इसीलिए मैं आपसे इस संदर्भ में यह भी कहना चाहता हूं कि जिन स्त्रियों को सेक्स का पागलपन सवार हो गया है--जैसे पश्चिम में--वे इसीलिए मां नहीं बनना चाहतीं, क्योंकि मां बनने के बाद सेक्स का रस कम हो जाता है। पश्चिम की स्त्री मां बनने से इनकार करती है, क्योंकि मां बनी कि सेक्स का रस गया। सेक्स का रस तभी तक रह सकता है, जब तक वह मां न बने।

तो पश्चिम की अनेक हुकूमतें घबरा गई हैं इस बात से कि यह रोग अगर बढ़ता चला गया तो उनकी संख्या का क्या होगा! हम यहां घबरा रहे हैं कि हमारी संख्या न बढ़ जाए। पश्चिम में मुल्क घबरा रहे हैं कि उनकी संख्या कहीं कम न हो जाए! क्योंकि स्त्रियों को अगर इतने तीव्र रूप से यह भाव पैदा हो जाए कि मां बनने से सेक्स का रस कम हो जाता है और वे मां न बनना चाहें तो क्या किया जा सकता है! कोई कानूनी जबरदस्ती की जा सकती है? किसी को संतति-नियमन के लिए तो कानूनी जबरदस्ती भी की जा सकती है कि हम जबरदस्ती बच्चे नहीं होने देंगे। लेकिन किसी स्त्री को मजबूर नहीं किया जा सकता कि बच्चे पैदा करने ही पड़ेंगे।

पश्चिम के सामने हमसे बड़ा सवाल है। हमारा सवाल उतना बड़ा नहीं है। हम संख्या को रोक सकते हैं जबरदस्ती, कानूनन। लेकिन संख्या को कानूनन बढ़ाने का कोई भी रास्ता नहीं है। किसी व्यक्ति को जबरदस्ती नहीं की जा सकती कि तुम बच्चे पैदा करो। और आज से दो सौ साल के भीतर पश्चिम के सामने यह प्रश्न बहुत भारी हो जाएगा। क्योंकि पूरब की संख्या बढ़ती चली जाएगी, वह सारी दुनिया पर छा सकती है। और पश्चिम की संख्या क्षीण होती जा सकती है। स्त्री को मां बनने के लिए उन्हें फिर से राजी करना पड़ेगा।

और उनके कुछ मनोवैज्ञानिकों ने यह सलाह देनी शुरू की है कि बाल-विवाह शुरू कर दो, अन्यथा खतरा है। क्योंकि स्त्री होश में आ जाती है तो वह मां नहीं बनना चाहती, उसे सेक्स का रस लेने में ज्यादा ठीक मालूम पड़ता है। इसलिए बचपन में शादी कर दो, उसे पता ही न चले वह कब मां बन गई।

पूरब में जो बाल-विवाह चलता था, उसके एक कारणों में यह भी था। स्त्री जितनी युवा हो जाएगी और जितनी समझदार हो जाएगी और सेक्स का जैसे रस लेने लगेगी, वैसे वह मां नहीं बनना चाहेगी। हालांकि उसे कुछ पता नहीं कि मां बनने से क्या मिलेगा। यह तो मां बनने से ही पता चल सकता है। उसके पहले कोई उपाय नहीं है।

स्त्री तृप्त होने लगती है मां बन कर--क्यों? उसने एक आध्यात्मिक तल पर सेक्स का अनुभव कर लिया बच्चे के साथ। और इसीलिए मां और बेटे के पास एक आत्मीयता है। मां अपने प्राण दे सकती है बेटे के लिए। मां बेटे के प्राण लेने की कल्पना भी नहीं कर सकती है। पत्नी पति के प्राण ले सकती है। लिए हैं अनेक बार। और अगर नहीं भी लेती तो पूरी जिंदगी में प्राण लेने की हालत पैदा कर देती है। लेकिन बेटे के लिए कल्पना भी नहीं कर सकती। वह संबंध बहुत गहरा है।

और मैं आपसे यह भी कह दूं, जब उसका अपने पति से संबंध भी इतना गहरा हो जाता है, तो पति भी उसे बेटे की तरह दिखाई पड़ने लगता है, पति की तरह नहीं। यहां इतनी स्त्रियां बैठी हैं और इतने पुरुष बैठे हैं। मैं उनसे यह पूछता हूं कि जब उन्होंने अपनी पत्नी को बहुत प्रेम किया है तो क्या उन्होंने इस तरह व्यवहार नहीं किया है जैसे छोटा बच्चा अपनी मां के साथ करता है? क्या आपको इस बात का खयाल है कि पुरुष के हाथ स्त्री के स्तन की तरफ क्यों पहुंच जाते हैं?

वे छोटे बच्चे के हाथ हैं, जो अपनी मां के स्तन की तरफ जा रहे हैं। जैसे ही पुरुष स्त्री के प्रति गहरे प्रेम से भरता है, उसके हाथ उसके स्तन की तरफ बढ़ते हैं--क्यों? स्तन से क्या संबंध है सेक्स का? स्तन से कोई संबंध नहीं है।

स्तन से मां और बेटे का संबंध है। बचपन से वह जानता रहा है। बेटे का संबंध स्तन से है। और जैसे ही पुरुष गहरे प्रेम से भरता है, वह बेटा हो जाता है।

और स्त्री का हाथ कहां पहुंच जाता है?

वह पुरुष के सिर पर पहुंच जाता है। उसके बालों में अंगुलियां चली जाती हैं। वह पुराने बेटे की याद है। वह पुराने बेटे का सिर है, जिसे उसने सहलाया है। इसलिए अगर ठीक से प्रेम आध्यात्मिक तल तक विकसित हो जाए तो पति आखिर में बेटा हो जाता है। और बेटा हो जाना चाहिए, तो आप समझिए कि हमने तीसरे तल पर सेक्स का अनुभव किया--अध्यात्म के तल पर, स्प्रिचुएलिटी के तल पर। इस तल पर एक संबंध है जिसका हमें कोई पता ही नहीं! पति-पत्नी का संबंध उसकी तैयारी है, उसका अंत नहीं है। वह यात्रा की शुरुआत है, पूर्णता नहीं है।

इसीलिए पति-पत्नी सदा कष्ट में रहते हैं, क्योंकि वह यात्रा है, यात्रा सदा कष्ट में होती है। मंजिल पर शांति मिलती है। पति-पत्नी कभी शांत नहीं हो सकते। वह बीच की यात्रा है। और अधिक लोग यात्रा में ही खत्म हो जाते हैं, मुकाम पर कभी पहुंच ही नहीं पाते।

इसलिए पति-पत्नी के बीच एक इनर कांफ्लिक्ट चौबीस घंटे चलती है। चौबीस घंटे एक कलह चलती है। जिसे हम प्रेम करते हैं, उसी के साथ चौबीस घंटे कलह चलती है! लेकिन न पति समझता, न पत्नी समझती कि कलह का कारण क्या है? पति सोचता है कि शायद दूसरी स्त्री होती तो सब ठीक हो जाता। पत्नी सोचती है कि शायद दूसरा पुरुष होता तो सब ठीक हो जाता। यह जोड़ा गलत हो गया।

लेकिन मैं आपसे कहता हूं कि दुनिया भर के जोड़ों का यही अनुभव है। और आपको अगर बदलने का मौका दे दिया जाए तो इतना ही फर्क पड़ेगा जैसे कि कुछ लोग अरथी को लेकर मरघट जाते हैं--कंधे पर रख कर अरथी को--एक कंधा दुखने लगता है तो उठा कर दूसरे कंधे पर रख लेते हैं। थोड़ी देर राहत मिलती है, कंधा बदल गया। थोड़ी देर के बाद पता चलता है कि बोझ उतना का उतना ही फिर शुरू हो गया है।

पश्चिम में इतने तलाक हो रहे हैं। उनका अनुभव यह है कि दूसरी स्त्री दस-पांच दिन के बाद पहली स्त्री फिर साबित हो जाती है। दूसरा पुरुष पंद्रह दिन के बाद पहला पुरुष फिर साबित हो जाता है। इसके कारण गहरे हैं। इसके कारण इस स्त्री और इस पुरुष से संबंधित नहीं हैं। इसके कारण इस बात से संबंधित हैं कि स्त्री और पुरुष का, पति और पत्नी का संबंध बीच की यात्रा का संबंध है, वह मुकाम नहीं है, वह अंत नहीं है। अंत तो वहीं होगा जहां स्त्री मां बन जाएगी और पुरुष फिर बेटा हो जाएगा।

तो मैं आपसे कह रहा हूं कि मां और बेटे का संबंध आध्यात्मिक काम का संबंध है। और जिस दिन स्त्री और पुरुष में, पति और पत्नी में भी आध्यात्मिक काम का संबंध उत्पन्न होगा, उस दिन फिर मां-बेटे का संबंध स्थापित हो जाएगा। और वह स्थापित हो जाए तो एक तृप्ति, जिसको मैंने कहा कंटेंटमेंट, अनुभव होगा। और उस अनुभव से ब्रह्मचर्य फलित होता है।

तो यह मत सोचें कि मां और बेटे के संबंध में कोई काम नहीं है। आध्यात्मिक काम है। अगर हम ठीक से कहें तो आध्यात्मिक काम को ही प्रेम कह सकते हैं, वह प्रेम है। स्प्रिचुअल जैसे ही सेक्स हो जाता है, वह प्रेम हो जाता है।

एक मित्र ने इस संबंध में और एक बात पूछी है। उन्होंने पूछा है कि ओशो, आपको हम सेक्स पर कोई अथारिटी, कोई प्रामाणिक व्यक्ति नहीं मान सकते हैं। हम तो आपसे ईश्वर के संबंध में पूछने आए थे और आप सेक्स के संबंध में बताने लगे। हम तो सुनने आए थे ईश्वर के संबंध में। तो आप हमें ईश्वर के संबंध में बताइए!

उन्हें शायद पता नहीं कि जिस व्यक्ति को हम सेक्स के संबंध में भी अथारिटी नहीं मान सकते, उससे ईश्वर के संबंध में पूछना फिजूल है। क्योंकि जो पहली सीढ़ी के संबंध में कुछ नहीं जानता, उससे आप अंतिम सीढ़ी के संबंध में पूछना चाहते हैं? अगर सेक्स के संबंध में जो मैंने कहा वह स्वीकार्य नहीं है, तो फिर तो भूल कर ईश्वर के संबंध में मुझसे पूछने कभी मत आना। क्योंकि वह बात ही खत्म हो गई। पहली कक्षा के योग्य भी मैं सिद्ध नहीं हुआ, तो अंतिम कक्षा के योग्य कैसे सिद्ध हो सकता हूं?

लेकिन उनके पूछने का कारण है। अब तक काम को और राम को दुश्मन की तरह देखा जाता रहा है। सेक्स को और परमात्मा को दुश्मन की तरह देखा जाता रहा है। अब तक ऐसा समझा जाता रहा है कि जो राम की खोज करते हैं, उनको काम से कोई संबंध नहीं है। और जो लोग काम की यात्रा करते हैं, उनको अध्यात्म से कोई संबंध नहीं है।

ये दोनों बातें बेवकूफी की हैं। आदमी काम की यात्रा भी राम की खोज के लिए ही करता है। वह काम का इतना तीव्र आकर्षण, राम की ही खोज है। और इसीलिए काम में कभी तृप्ति नहीं मिलती; कभी ऐसा नहीं लगता कि बस पूरा हो गया सब। वह जब तक राम न मिल जाए तब तक लग भी नहीं सकता है। और जो लोग काम के शत्रु

होकर राम को खोजते हैं, राम की खोज नहीं है वह, वह सिर्फ राम के नाम में काम से एस्केप है, पलायन है; काम से बचना है। इधर प्राण घबराते हैं, डर लगता है, तो राम की चदरिया ओढ़ कर उसमें छुप जाना है और राम-राम, राम-राम, राम-राम जपते रहना है कि वह काम की याद न आए। जब भी कोई आदमी राम-राम, राम-राम जपते मिले, तो जरा गौर करना। उसके भीतर राम-राम के जप के पीछे काम का जप चल रहा होगा, सेक्स का जप चल रहा होगा। स्त्री को देखेगा और माला फेरने लगेगा, कहेगा: राम-राम, राम-राम, राम-राम। वह स्त्री दिखी कि वह ज्यादा जोर से माला फेरता है, ज्यादा जोर से राम राम कहता है। क्यों?

वह भीतर जो काम बैठा है, वह धक्के मार रहा है। राम का नाम ले-ले कर उसे भुलाने की कोशिश करता है। लेकिन इतनी आसान तरकीबों से अगर जीवन बदलते होते तो दुनिया कभी की बदल गई होती। उतना आसान रास्ता नहीं है।

तो मैं आपसे कहना चाहता हूं कि काम को समझना जरूरी है अगर आप अपने राम की और परमात्मा की खोज को भी समझना चाहते हैं। क्यों? यह इसलिए मैं कहता हूं कि एक आदमी बंबई से कलकत्ता की यात्रा करना चाहे, वह कलकत्ते के संबंध में पता लगाए कि कलकत्ता कहां है, किस दिशा में है। लेकिन उसे यही पता न हो कि बंबई कहां है और किस दिशा में है और कलकत्ते की वह यात्रा करना चाहे, तो क्या वह कभी सफल हो सकेगा?

कलकत्ता जाने के लिए सबसे पहले यह पता लगाना जरूरी है कि बंबई कहां है जहां मैं हूं। वह किस दिशा में है? फिर कलकत्ते की तरफ दिशा-विचार की जा सकती है। लेकिन मुझे यही पता नहीं कि बंबई कहां है, तो कलकत्ते के बाबत सारी जानकारी फिजूल है। क्योंकि यात्रा मुझे बंबई से शुरू करनी पड़ेगी। यात्रा का प्रारंभ बंबई से करना है। और प्रारंभ पहले है, अंत बाद में है।

आप कहां खड़े हैं? राम की यात्रा करना चाहते हैं, वह ठीक। भगवान तक पहुंचना चाहते हैं, वह ठीक। लेकिन खड़े कहां हैं आप? खड़े तो काम में हैं, खड़े तो वासना में हैं, खड़े तो सेक्स में हैं। वह आपका निवासगृह है, जहां से आपको कदम उठाने हैं और यात्रा करनी है। तो पहले तो उस जगह को समझ लेना जरूरी है जहां हम हैं। जो एक्चुअलिटी है उसे पहले, जो वास्तविक है उसे पहले समझ लेना जरूरी है, तब हम उसे भी समझ सकते हैं जो संभावना है। जो पासिबिलिटी है, जो हम हो सकते हैं, उसे जानने के लिए, जो हम हैं उसे पहले जान लेना जरूरी है। अंतिम कदम को समझने के पहले पहला कदम समझ लेना जरूरी है, क्योंकि पहला कदम ही अंतिम कदम तक पहुंचाने का रास्ता बनेगा। और अगर पहला कदम ही गलत हो गया तो अंतिम कदम कभी भी सही नहीं होने वाला है।

राम से भी ज्यादा महत्वपूर्ण काम को समझना है, परमात्मा से भी ज्यादा महत्वपूर्ण सेक्स को समझना है। क्यों इतना महत्वपूर्ण है? इसलिए महत्वपूर्ण है कि अगर परमात्मा तक पहुंचना है तो सेक्स को बिना समझे आप नहीं पहुंच सकते हैं।

इसलिए यह मत पूछें। रह गई अथारिटी की बात कि मैं अथारिटी हूं या नहीं--यह कैसे निर्णय होगा? अगर मैं ही इस संबंध में कुछ कहूंगा तो वह निर्णायक नहीं रहेगा, क्योंकि मेरे संबंध में ही निर्णय होना है। अगर मैं ही कहूं कि मैं अथारिटी हूं, तो उसका कोई मतलब नहीं है; अगर मैं कहूं कि मैं अथारिटी नहीं हूं, तो उसका भी कोई मतलब नहीं है; क्योंकि मेरे दोनों वक्तव्यों के संबंध में विचारणीय है कि अथारिटेटिव आदमी कह रहा है कि गैर-अथारिटेटिव। मैं जो भी कहूंगा इस संबंध में, वह फिजूल है। मैं अथारिटी हूं या नहीं, यह तो आप थोड़े सेक्स की दुनिया में प्रयोग करके देखें। और जब अनुभव आएगा तो पता चलेगा कि जो मैंने कहा था, वह अथारिटी थी या नहीं। उसके बिना कोई रास्ता नहीं है।

मैं आपसे कहता हूं कि तैरने का यह रास्ता है। आप कहें कि लेकिन हम कैसे मानें कि आप तैरने के संबंध में प्रामाणिक बात कह रहे हैं? तो मैं कहता हूं कि चलिए, आपको साथ लेकर नदी में उतरा जा सकता है, आपको नदी में उतारे देता हूं। मैंने जो कहा है आपको, अगर वह कारगर हो जाए पार होने में और हाथ-पैर चलाने में और तैरने में, तो आप समझना कि जो मैंने कहा है वह कुछ जान कर कहा है।

उन्होंने यह भी कहा है कि फ्रायड अथारिटी हो सकते हैं।

लेकिन मैं आपसे कहता हूं, जो मैं कह रहा हूं, उस पर फ्रायड दो कौड़ी भी नहीं जानते। फ्रायड मानसिक तल से कभी भी ऊपर नहीं उठ पाया। उसको कल्पना भी नहीं है आध्यात्मिक सेक्स की। फ्रायड की सारी जानकारी रुग्ण सेक्स की है--हिस्टेरिक, होमोसेक्सुअलिटी, मैस्टरबेशन--इस सबकी खोजबीन है। रुग्ण सेक्स, विकृत सेक्स के बाबत खोजबीन है। पैथॉलाजिकल है, बीमार की चिकित्सा की वह खोज है। फ्रायड एक डाक्टर है। फिर पश्चिम में जिन लोगों का उसने अध्ययन किया, वे मन के तल के सेक्स के लोग हैं। उसके पास एक भी अध्ययन नहीं, एक भी केस हिस्ट्री नहीं, जिसको स्पिचुअल सेक्स कहा जा सके।

तो अगर खोज करनी है कि जो मैं कह रहा हूं वह कहां तक सच है, तो सिर्फ एक दिशा में खोज हो सकती है, वह दिशा है तंत्र। और तंत्र के बावत हमने हजारों साल से सोचना बंद कर दिया है। तंत्र ने सेक्स को स्प्रिचुअल बनाने का दुनिया में सबसे पहला प्रयास किया था। खजुराहो में खड़े मंदिर, पुरी और कोणार्क के मंदिर सबूत हैं।

कभी आप खजुराहो गए हैं? कभी आपने जाकर खजुराहो की मूर्तियां देखी हैं?

तो आपको दो बातें अदभुत अनुभव होंगी। पहली तो बात यह कि नग्न मैथुन की प्रतिमाओं को देख कर भी आपको ऐसा नहीं लगेगा कि उनमें जरा भी कुछ गंदा है, जरा भी कुछ अग्ली है। नग्न मैथुन की प्रतिमाओं को देख कर कहीं भी ऐसा नहीं लगेगा कि कुछ कुरूप है, कुछ बुरा है। बल्कि मैथुन की प्रतिमाओं को देख कर एक शांति, एक पवित्रता का अनुभव होगा, जो बड़ी हैरानी की बात है! वे प्रतिमाएं, आध्यात्मिक सेक्स को जिन लोगों ने अनुभव किया था, उन शिल्पियों से निर्मित करवाई गई हैं। उन प्रतिमाओं के चेहरों पर...

आप एक सेक्स से भरे हुए आदमी को देखें, उसकी आंखें देखें, उसका चेहरा देखें। वह घिनौना, घबराने वाला, कुरूप प्रतीत होगा। उसकी आंखों से एक झलक मिलती हुई मालूम होगी, जो घबराने वाली और डराने वाली होगी। प्यारे से प्यारे आदमी को, अपने निकटतम प्यारे से प्यारे व्यक्ति को भी स्त्री जब सेक्स से भरा हुआ पास आते हुए देखती है तो उसे दुश्मन दिखाई पड़ता है, मित्र नहीं दिखाई पड़ता। प्यारी से प्यारी स्त्री को अगर कोई पुरुष अपने निकट सेक्स से भरा हुआ आता हुआ दिखाई देगा तो उसे उसके भीतर नरक दिखाई पड़ेगा, स्वर्ग नहीं दिखाई पड़ सकता।

लेकिन खजुराहो की प्रतिमाओं को देखें, तो उनके चेहरों को देख कर ऐसा लगता है, जैसे बुद्ध का चेहरा हो, महावीर का चेहरा हो। मैथुन की प्रतिमाएं और मैथुनरत जोड़े के चेहरे पर जो भाव हैं, वे समाधि के हैं। और सारी प्रतिमाओं को देख लें और पीछे एक हलकी सी शांति की झलक छूट जाएगी, और कुछ भी नहीं। और एक आश्चर्य आपको अनुभव होगा। आप सोचते होंगे कि नंगी तस्वीरें और मूर्तियां देख कर आपके भीतर कामुकता पैदा होगी। तो मैं आपसे कहता हूं, फिर आप देर न करें और सीधे खजुराहो चले जाएं। खजुराहो पृथ्वी पर इस समय अनूठी चीज है।

लेकिन हमारे कई नीतिशास्त्री, पुरुषोत्तमदास टंडन और उनके कुछ साथी इस सुझाव के थे कि खजुराहो के मंदिर पर मिट्टी छाप कर दीवालें बंद कर देनी चाहिए, क्योंकि उनको देखने से वासना पैदा हो सकती है। मैं तो हैरान हो गया!

खजुराहो के मंदिर जिन्होंने बनाए थे, उनका खयाल यह था कि इन प्रतिमाओं को अगर कोई बैठ कर घंटे भर देखे तो वासना से शून्य हो जाएगा। वे प्रतिमाएं आब्जेक्ट्स फॉर मेडिटेशन रहीं हजारों वर्ष तक। वे प्रतिमाएं ध्यान के लिए आब्जेक्ट का काम करती रही हैं। जो लोग अति कामुक थे, उन्हें खजुराहो के मंदिर के पास भेज कर उन पर ध्यान करवाने के लिए कहा जाता था कि तुम ध्यान करो--इन प्रतिमाओं को देखो और इनमें लीन हो जाओ।

और यह आश्चर्य की बात है...हालांकि हमारे अनुभव में है, लेकिन हमें खयाल नहीं। आपको पता है, रास्ते पर दो आदमी लड़ रहे हों और आप रास्ते से चले जा रहे हों, तो आपका मन होता है कि खड़े होकर वह लड़ाई देख लें। लेकिन क्यों? आपने कभी खयाल किया? लड़ाई देखने से आपको क्या फायदा है? हजार जरूरी काम छोड़ कर आप आधे घंटे तक दो आदमियों की मुक्केबाजी देख सकते हैं खड़े होकर--फायदा क्या है? शायद आपको पता नहीं, फायदा एक है। दो आदमियों को लड़ते देख कर आपके भीतर जो लड़ने की प्रवृत्ति है वह विसर्जित होती है, उसका निकास होता है, वह एवोपरेट हो जाती है।

अगर मैथुन की प्रतिमा को कोई घंटे भर तक शांत बैठ कर ध्यानमग्न होकर देखे, तो उसके भीतर जो मैथुन करने का पागल भाव है, वह विलीन हो जाता है।

एक मनोवैज्ञानिक के पास एक आदमी को लाया गया था। वह एक दफ्तर में काम करता है। और अपने मालिक से, अपने बॉस से बहुत रुष्ट है। मालिक उससे कुछ भी कहता है तो उसे बहुत अपमान मालूम होता है और उसके मन में होता है कि निकालूं जूता और इसे मार दूं। लेकिन मालिक को जूता कैसे मारा जा सकता है? हालांकि ऐसे नौकर कम ही होंगे जिनके मन में यह खयाल न आता हो कि निकालूं जूता और मार दूं। ऐसा नौकर खोजना मुश्किल है। अगर आप मालिक हैं तो भी आपको पता होगा और आप अगर नौकर हैं तो भी आपको पता होगा--कि नौकर के मन में नौकर होने की भारी पीड़ा है और मन होता है कि इसका बदला ले लूं। लेकिन नौकर अगर बदला ले सकता तो नौकर होता क्यों?

तो वह बेचारा मजबूर है और दबाए चला जाता है, दबाए चला जाता है। फिर तो हालत उसकी ऐसी रुग्ण हो गई कि उसे यह डर पैदा हो गया कि किसी दिन आवेश में मैं जूता मार ही न दूं। तो वह जूता घर ही छोड़ जाता

है। लेकिन दफ्तर में उसे जूते की दिन भर याद आती है और जब भी मालिक दिखाई पड़ता है वह पैर टटोल कर देखता है कि जूता? लेकिन जूता तो वह घर छोड़ आया है, और खुश होता है कि अच्छा हुआ मैं छोड़ आया, किसी दिन आवेश के क्षण में निकल आए जूता तो मुश्किल हो गई।

लेकिन घर जूता छोड़ आने से जूते से मुक्ति नहीं होती। जूता उसका पीछा करने लगा। वह कागज पर कुछ भी बनाता है तो जूता बन जाता है। वह रजिस्टर पर कुछ ऐसे ही लिख रहा है और पाता है कि जूते ने आकार लेना शुरू कर दिया। उसके प्राणों में जूता घिरने लगा है। वह बहुत घबरा गया है और उसे ऐसा डर लगने लगा है धीरे-धीरे कि मैं किसी भी दिन हमला कर सकता हूं।

तो उसने अपने घर आकर कहा कि अब मुझे नौकरी पर जाना ठीक नहीं, मैं छुट्टी लेना चाहता हूं; क्योंकि अब हालत ऐसी हो गई है कि मैं दूसरे का जूता निकाल कर भी मार सकता हूं। अब अपने जूते की जरूरत नहीं रह गई है। मेरे हाथ दूसरे लोगों के पैरों की तरफ भी बढ़ने की कोशिश करते हैं।

तो घर के लोगों ने समझा कि वह पागल हो गया है, उसे एक मनोवैज्ञानिक के पास ले गए। उस मनोवैज्ञानिक ने कहा कि इसकी बीमारी बड़ी नहीं, छोटी सी है। इसके मालिक की एक तस्वीर घर में लगा लो और इससे कहो कि रोज सुबह पांच जूते धार्मिक भाव से मारा करो। पांच जूते मारे, तब दफ्तर जाए--बिलकुल रिलीजसली। ऐसा नहीं कि किसी दिन चूक जाए। जैसे लोग ध्यान, जप करते हैं। बिलकुल वक्त पर पांच जूते मारे। दफ्तर से लौट कर पांच जूते मारे।

वह आदमी पहले तो बोला कि यह क्या पागलपन की बात है! लेकिन भीतर उसे खुशी मालूम हुई। वह हैरान हुआ, उसने कहा, लेकिन मुझे भीतर खुशी मालूम हो रही है।

तस्वीर टांग ली गई और वह रोज पांच जूते मार कर दफ्तर गया। पहले दिन ही जब वह पांच जूते मार कर दफ्तर गया तो उसे एक बड़ा अदभुत अनुभव हुआ--मालिक के प्रति उसने दफ्तर में उतना क्रोध अनुभव नहीं किया। और पंद्रह दिन के भीतर तो वह मालिक के प्रति अत्यंत विनयशील हो गया। मालिक को भी हैरानी हुई। उसे तो कुछ पता नहीं कि भीतर क्या चल रहा है। उसने उसको पूछा कि तुम आजकल बहुत आज्ञाकारी, बहुत विनम्र, बहुत हंबल हो गए हो। बात क्या है? उसने कहा, वह मत पूछिए, नहीं तो सब गड़बड़ हो जाएगा।

क्या हुआ? तस्वीर को जूते मारने से कुछ हो सकता है? लेकिन तस्वीर को जूते मारने से, वह जो जूते मारने का भाव है, वह तिरोहित हुआ, वह एवोपरेट हुआ, वह वाष्पीभूत हुआ।

खजुराहो के मंदिर या कोणार्क और पुरी के मंदिर जैसे मंदिर सारे देश के गांव-गांव में होने चाहिए। बाकी मंदिरों की कोई जरूरत नहीं है, वे बेवकूफी के सबूत हैं, उनमें कुछ नहीं है। उनमें न कोई वैज्ञानिकता है, न कोई अर्थ है, न कोई प्रयोजन है। वे निपट गंवारी के सबूत हैं। लेकिन खजुराहो के मंदिर जरूर अर्थपूर्ण हैं। जिस आदमी का भी मन सेक्स से बहुत भरा हो, वह जाकर उन पर ध्यान करे; और वह हलका लौटेगा, शांत लौटेगा।

तंत्र ने जरूर सेक्स को आध्यात्मिक बनाने की कोशिश की थी। लेकिन इस मुल्क के नीतिशास्त्री और जो मॉरल प्रीचर्स हैं, उन दुष्टों ने उनकी बात को समाज तक नहीं पहुंचने दिया। वे मेरी बात भी नहीं पहुंचने देना चाहते हैं।

यहां से मैं भारतीय विद्याभवन से बोल कर जबलपुर वापस लौटा और तीसरे दिन मुझे एक पत्र मिला कि अगर आप इस तरह की बातें कहना बंद नहीं कर देते हैं तो आपको गोली क्यों न मार दी जाए?

मैं उन्हें उत्तर देना चाहता था, लेकिन वे गोली मारने वाले सज्जन बहुत कायर मालूम पड़े, न उन्होंने नाम लिखा था, न पता लिखा था। शायद वे डरे होंगे कि मैं पुलिस को न दे दूं। लेकिन अगर वे यहां कहीं हों--अगर होंगे तो किसी झाड़ के पीछे या कहीं दीवाल के पीछे छिपे होंगे--अगर वे यहां कहीं हों तो मैं उनको कहना चाहता हूं कि पुलिस को देने की कोई भी जरूरत नहीं है। वे अपना नाम और पता मुझे भेज दें, ताकि मैं उनको उत्तर दे सकूं। लेकिन अगर उनकी हिम्मत न हो तो मैं उत्तर यहीं दिए देता हूं, ताकि वे सुन लें।

पहली तो बात यह है कि इतनी जल्दी गोली मारने की मत करना। क्योंकि गोली मारते ही, जो बात मैं कह रहा हूं वह परम सत्य हो जाएगी, इसका उनको पता होना चाहिए।

जीसस क्राइस्ट को दुनिया कभी की भूल गई होती, अगर उसको सूली पर न लटकाया गया होता। जीसस क्राइस्ट को दुनिया कभी की भूल गई होती, अगर उसको सूली न मिली होती। सूली देने वाले ने बड़ी कृपा की।

और मैंने तो यहां तक सुना है कुछ इनर सर्किल्स में--जो जीवन की गहराइयों की खोज करते हैं, उनसे मुझे यह भी ज्ञात हुआ है--कि जीसस ने खुद अपनी सूली लगवाने के लिए योजना और षड्यंत्र किया था। जीसस ने चाहा था कि मुझे सूली लगा दी जाए। क्योंकि सूली लगते ही, जो जीसस ने कहा है, वह करोड़ों-करोड़ों वर्ष के लिए अमर हो जाएगा और हजारों लोगों के, लाखों लोगों के काम आ सकेगा।

इस बात की बहुत संभावना है। क्योंकि जुदास, जिसने ईसा को बेचा तीस रुपयों में, वह ईसा के प्यारे से प्यारे

शिष्यों में से एक था। और यह संभव नहीं है कि जो वर्षों से ईसा के पास रहा हो, वह सिर्फ तीस रुपये में ईसा को बेच दे, सिवाय इसके कि ईसा ने उसको कहा हो कि तू कोशिश कर, दुश्मन से मिल जा, और किसी तरह मुझे उलझा दे और सूली लगवा दे! ताकि मैं जो कह रहा हूँ, वह अमृत का स्थान ले ले और करोड़ों लोगों का उद्धार बन जाए।

महावीर को अगर सूली लगी होती तो दुनिया में केवल तीस लाख जैन नहीं होते, तीस करोड़ हो सकते थे। लेकिन महावीर शांति से मर गए, सूली का उन्हें पता भी नहीं था। न किसी ने लगाई, न उन्होंने लगवाने की व्यवस्था की। आज आधी दुनिया ईसाई है। उसका सिवाय इसके कोई कारण नहीं कि ईसा अकेला सूली पर लटका हुआ है--न बुद्ध, न मोहम्मद, न महावीर, न कृष्ण, न राम। सारी दुनिया भी ईसाई हो सकती है। वह सूली पर लटकने से यह फायदा हो गया।

तो मैं उनसे कहता हूँ कि जल्दी मत करना, नहीं तो नुकसान में पड़ जाओगे।

दूसरी बात यह कहना चाहता हूँ कि घबराएं न वे। मेरे इरादे खाट पर मरने के हैं भी नहीं। मैं पूरी कोशिश करूंगा कि कोई न कोई गोली मार ही दे! तो मैं खुद ही कोशिश करूंगा, जल्दी उनको करने की आवश्यकता नहीं है। समय आने पर मैं चाहूंगा कि कोई गोली मार ही दे! जिंदगी भी काम आती है और गोली लग जाए तो मौत भी काम आती है और जिंदगी से ज्यादा काम आ जाती है। जिंदगी जो नहीं कर पाती है, वह गोली लगी हुई मौत कर देती है।

अब तक हमेशा यह भूल की है दुश्मनों ने, नासमझी की है। सुकरात को जिन्होंने सूली पर लटका दिया, जिन्होंने जहर पिला दिया; मंसूर को जिन्होंने सूली पर लटका दिया; और अभी गोडसे ने गांधी को गोली मार दी। गोडसे को पता नहीं कि गांधी के भक्त और गांधी के अनुयायी गांधी को इतने दूर तक स्मरण कराने में कभी भी सफल नहीं हो सकते थे, जितना अकेले गोडसे ने कर दिया है। और अगर गांधी ने मरते वक्त, जब उन्हें गोली लगी और हाथ जोड़ कर गोडसे को नमस्कार किया होगा, तो बड़ा अर्थपूर्ण था वह नमस्कार। वह अर्थपूर्ण था कि मेरा अंतिम शिष्य सामने आ गया। अब जो मुझे आखिरी और हमेशा के लिए अमर किए दे रहा है। भगवान ने आदमी भेज दिया जिसकी जरूरत थी।

जिंदगी का ड्रामा, वह जो जिंदगी की कहानी है, वह बहुत उलझी हुई है। वह इतनी आसान नहीं है। खाट पर मरने वाले हमेशा के लिए मर जाते हैं, गोली खाकर मरने वालों का मरना बहुत मुश्किल हो जाता है।

सुकरात से किसी ने पूछा--उसके मित्रों ने--कि अब तुम्हें जहर दे दिया जाएगा और तुम मर जाओगे, तो हम तुम्हारे गाड़ने की कैसी व्यवस्था करें? जलाएं, कब्र बनाएं, क्या करें?

सुकरात ने कहा, पागलो, तुम्हें पता नहीं है कि तुम मुझे नहीं गाड़ सकोगे। तुम जब सब मिट जाओगे, तब भी मैं जिंदा रहूंगा। मैंने मरने की तरकीब जो चुनी है, वह हमेशा जिंदा रहने वाली है।

तो वे मित्र अगर कहीं हों तो उनको पता होना चाहिए, जल्दी न करें। जल्दी में नुकसान हो जाएगा उनका। मेरा कुछ होने वाला नहीं है। क्योंकि जिसको गोली लग सकती है, वह मैं नहीं हूँ; और जो गोली लगने के बाद भी पीछे बच जाता है, वही हूँ। तो वे जल्दी न करें। और दूसरी बात यह कि वे घबराएं भी ना। मैं हर तरह की कोशिश करूंगा कि खाट पर न मर सकूँ। वह मरना बड़ा गड़बड़ है। वह बेकार ही मर जाना है। वह निरर्थक मर जाना है। मर जाने की भी सार्थकता चाहिए। और तीसरी बात यह कि वे दस्तखत करने से न घबराएं, न पता लिखने से घबराएं। क्योंकि अगर मुझे लगे कि कोई आदमी मारने को तैयार हो गया है, तो वह जहां मुझे बुलाएगा, मैं चुपचाप बिना किसी को खबर किए वहां आने को हमेशा तैयार हूँ, ताकि उस पर पीछे कोई मुसीबत न आए।

लेकिन ये पागलपन सूझते हैं। इस तरह के धार्मिक...और जिस बेचारे ने लिखा है, उसने यही सोच कर लिखा है कि वह धर्म की रक्षा कर रहा है। उसने यही सोच कर लिखा है कि मैं धर्म को मिटाने की कोशिश कर रहा हूँ, वह धर्म की रक्षा कर रहा है। उसकी नीयत में कहीं कोई खराबी नहीं है। उसके भाव बड़े अच्छे और बड़े धार्मिक हैं। ऐसे ही धार्मिक लोग तो दुनिया को दिक्कत में डालते रहे हैं। उनकी नीयत बड़ी अच्छी है, लेकिन बुद्धि मूढ़ता की है।

तो हजारों साल से तथाकथित नैतिक लोगों ने जीवन के सत्यों को पूरा-पूरा प्रकट होने में बाधा डाली है, उसे प्रकट नहीं होने दिया। नहीं प्रकट होने के कारण एक अज्ञान व्यापक हो गया। और उस अज्ञान की अंधेरी रात में हम टटोल रहे हैं, भटक रहे हैं, गिर रहे हैं। और वे मॉरल टीचर्स, वे नीतिशास्त्र के उपदेशक, हमारे इस अंधकार के बीच में मंच बना कर उपदेश देने का काम करते रहते हैं!

यह भी सच है कि जिस दिन हम अच्छे लोग हो जाएंगे, जिस दिन हमारे जीवन में सत्य की किरण आएगी, समाधि की कोई झलक आएगी, जिस दिन हमारा सामान्य जीवन भी परमात्म-जीवन में रूपांतरित होने लगेगा,

उस दिन उपदेशक व्यर्थ हो जाएंगे, उनकी कोई जगह नहीं रह जाने वाली है। उपदेशक तभी तक सार्थक है, जब तक लोग अंधेरे में भटकते हैं।

गांव में चिकित्सक की तभी तक जरूरत है, जब तक लोग बीमार पड़ते हैं। जिस दिन आदमी बीमार पड़ना बंद कर देगा, उस दिन चिकित्सक को विदा कर देना पड़ेगा। तो हालांकि चिकित्सक ऊपर से बीमार का इलाज करता हुआ मालूम पड़ता है, लेकिन भीतर से उसके प्राणों की आकांक्षा यही होती है कि लोग बीमार पड़ते रहें। यह बड़ी उलटी बात है! क्योंकि चिकित्सक जीता है लोगों के बीमार पड़ने पर। उसका प्रोफेशन बड़ा कंट्राडिक्टरी है, उसका धंधा बड़ा विरोधी है। कोशिश तो उसकी यह है कि लोग बीमार पड़ते रहें। और जब मलेरिया फैलता है और फ्लू की हवाएं आती हैं, तो वह भगवान को एकांत में धन्यवाद देता है। क्योंकि यह धंधा का वक्त आया-- सीजन!

मैंने सुना है, एक रात एक मधुशाला में बड़ी देर तक कुछ मित्र आकर खाना-पीना करते रहे, शराब पीते रहे। उन्होंने खूब मौज की। और जब वे चलने लगे आधी रात को तो शराबखाने के मालिक ने अपनी पत्नी को कहा कि भगवान को धन्यवाद, बड़े भले लोग आए। ऐसे लोग रोज आते रहें तो कुछ ही दिनों में हम मालामाल हो जाएं। विदा होते मेहमानों को सुनाई पड़ गया और जिसने पैसे चुकाए थे उसने कहा कि दोस्त, भगवान से प्रार्थना करो कि हमारा भी धंधा रोज चलता रहे, तो हम तो रोज आएंगे।

चलते-चलते उस शराबघर के मालिक ने पूछा कि भाई, तुम्हारा धंधा क्या है?

उसने कहा, मेरा धंधा पूछते हो, मैं मरघट पर लकड़ियां बेचता हूं मुर्दों के लिए। जब आदमी ज्यादा मरते हैं, तब मेरा धंधा चलता है, तब हम थोड़े खुश होते हैं। हमारा धंधा रोज चलता रहे, हम रोज यहां आते रहें।

चिकित्सक का धंधा है कि लोगों को ठीक करे। लेकिन फायदा, लाभ और शोषण इसमें है कि लोग बीमार पड़ते रहें। तो एक हाथ से चिकित्सक ठीक करता है और उसके प्राणों के प्राणों की प्रार्थना होती है कि मरीज जल्दी ठीक न हो जाए।

इसीलिए पैसे वाले मरीज को ठीक होने में बड़ी देर लगती है। गरीब मरीज जल्दी ठीक हो जाता है; क्योंकि गरीब मरीज को ज्यादा देर बीमार रहने से कोई फायदा नहीं है, चिकित्सक को कोई फायदा नहीं है। चिकित्सक को फायदा है अमीर मरीज से! तो अमीर मरीज लंबा बीमार रहता है। सच तो यह है कि अमीर अक्सर ही बीमार रहते हैं। वह चिकित्सक की प्रार्थनाएं काम कर रही हैं। उसकी आंतरिक इच्छा भी उसके हाथ को रोकती है कि मरीज एकदम ठीक ही न हो जाए।

उपदेशक की स्थिति भी ऐसी ही है। समाज जितना नीतिभ्रष्ट हो, जितना व्यभिचार फैले, जितना अनाचार फैले, उतना ही उपदेशक का मंच ऊपर उठने लगता है। क्योंकि जरूरत आ जाती है कि वह लोगों को कहे: अहिंसा का पालन करो, सत्य का पालन करो, ईमानदारी स्वीकार करो; यह व्रत पालन करो, वह व्रत पालन करो। अगर लोग व्रती हों, अगर लोग संयमी हों, अगर लोग शांत हों, ईमानदार हों, तो उपदेशक मर गया। उसकी कोई जगह न रही।

और हिंदुस्तान में सारी दुनिया से ज्यादा उपदेशक क्यों हैं? ये गांव-गांव गुरु और घर-घर स्वामी और संन्यासी क्यों हैं? यह महात्माओं की इतनी भीड़ और यह कतार क्यों है?

यह इसलिए नहीं है कि आप बड़े धार्मिक देश हैं जहां कि संत-महात्मा पैदा होते हैं। यह इसलिए है कि आप इस समय पृथ्वी पर सबसे ज्यादा अधार्मिक और अनैतिक देश हैं, इसलिए इतने उपदेशकों को पालने का ठेका और धंधा मिल जाता है। हमारा तो जातीय रोग हो गया।

मैंने सुना है कि अमेरिका में किसी ने एक लेख लिखा हुआ था। किसी मित्र ने वह लेख मेरे पास भेज दिया। उसमें एक कमी थी, उन्होंने मेरी सलाह चाही। किसी ने लेख लिखा था वहां--मजाक का कोई लेख था--उसने लिखा था कि हर आदमी और हर जाति का लक्षण शराब पिला कर पता लगाया जा सकता है कि बेसिक कैरेक्टर क्या है? तो उसने लिखा था कि अगर डच आदमी को शराब पिला दी जाए तो वह एकदम से खाने पर टूट पड़ता है, फिर वह किचेन के बाहर ही नहीं निकलता, फिर वह एकदम खाने की मेज से उठता ही नहीं। बस शराब पी कि वह दो-दो, तीन-तीन घंटे खाने में लग जाता है। अगर फ्रेंच को शराब पिला दी जाए तो शराब पीने के बाद वह एकदम नाच-गाने के लिए तत्पर हो जाता है। और अगर अंग्रेज को शराब पिला दी जाए तो वह एकदम चुप होकर एक कोने में मौन हो जाता है। वह वैसे ही चुप बैठा रहता है। और शराब पी ली, तो उसका कैरेक्टर है, वह और चुप हो जाता है। ऐसे दुनिया के सारे लोगों के लक्षण थे। लेकिन भूल से या अज्ञान के वश भारत के बाबत कुछ भी नहीं लिखा था। तो किसी मित्र ने मुझे लेख भेजा और कहा कि आप भारत के कैरेक्टर के बाबत क्या कहते हैं? अगर भारतीय को शराब पिलाई जाए तो क्या होगा?

तो मैंने कहा कि वह तो जग-जाहिर बात है। भारतीय शराब पीएगा और तत्काल उपदेश देना शुरू कर देगा। यह उसकी कैरेक्टरस्टिक है। वह उनका जातीय गुण है।

यह जो उपदेशकों का समाज और साधु-संतों और महात्माओं की ये लंबी कतार हैं, ये रोग के लक्षण हैं, ये अनीति के लक्षण हैं। और मजा यह है कि इनमें से कोई भी भीतरी हृदय से कभी नहीं चाहता कि अनीति मिट जाए, रोग मिट जाए; क्योंकि उसके मिटने के साथ वे भी मिट जाते हैं। प्राणों की पुकार यही होती है कि रोग बना रहे और बढ़ता चला जाए।

और उस रोग को बढ़ाने के लिए जो सबसे सुगम उपाय है, वह यह है कि जीवन के संबंध में सर्वांगीण ज्ञान उत्पन्न न हो सके। और जीवन के जो सबसे ज्यादा गहरे केंद्र हैं, जिनके अज्ञान के कारण अनीति और व्यभिचार और भ्रष्टाचार फैलता है, उन केंद्रों को आदमी कभी भी न जान सके। क्योंकि उन केंद्रों को जान लेने के बाद मनुष्य के जीवन से अनीति तत्काल विदा हो सकती है।

और मैं आपसे कहना चाहता हूं कि सेक्स मनुष्य की अनीति का सर्वाधिक केंद्र है। मनुष्य के व्यभिचार का, मनुष्य की विकृति का सबसे मौलिक, सबसे आधारभूत केंद्र वहां है। और इसीलिए धर्मगुरु उसकी बिलकुल बात नहीं करना चाहते!

एक मित्र ने मुझे खबर भिजवाई है कि कोई संत-महात्मा सेक्स की बात नहीं करता। और आपने सेक्स की बात की तो हमारे मन में आपका आदर बहुत कम हो गया है।

मैंने उनसे कहा, इसमें कुछ गलती न हुई। पहले आदर था, उसमें गलती थी। इसमें क्या गलती हुई? मेरे प्रति आदर होने की जरूरत क्या है? मुझे आदर देने का प्रयोजन क्या है? मैंने कब मांगा है कि मुझे आदर दें? देते थे तो आपकी गलती थी; नहीं देते हैं, आपकी कृपा है। मैं महात्मा नहीं रहा। मैंने कभी चाहा होता कि मैं महात्मा होऊं तो मुझे बड़ी पीड़ा होती। और मैं कहता, क्षमा करना, भूल से ये बातें मैंने कह दीं।

मैं महात्मा था नहीं, मैं महात्मा हूं नहीं, मैं महात्मा होना चाहता नहीं। जहां इतने बड़े जगत में इतने लोग दीन-हीन हैं, वहां एक आदमी महात्मा होना चाहे, उससे ज्यादा निम्न प्रवृत्ति और स्वार्थ से भरा हुआ आदमी नहीं है। जहां इतने दीन-हीन जन हैं, जहां इतनी हीन आत्माओं का विस्तार है, वहां महात्मा होने की कल्पना और विचार ही पाप है।

महान मनुष्यता मैं चाहता हूं। महान मनुष्य मैं चाहता हूं। महात्मा होने की मेरे मन में कोई भी इच्छा और आकांक्षा नहीं है। महात्माओं के दिन विदा हो जाने चाहिए। महात्माओं की कोई जरूरत नहीं। महान मनुष्य की जरूरत है। महान मनुष्यता की जरूरत है। ग्रेटमैन नहीं, ग्रेट ह्यूमैनिटी! बड़े आदमी बहुत हो चुके। उनसे क्या फायदा हुआ? अब बड़े आदमियों की जरूरत नहीं, बड़ी आदमियत की जरूरत है।

तो मुझे बहुत अच्छा लगा कि कम से कम एक आदमी का इल्यून तो टूटा। एक आदमी तो डिसइल्यूजंड हुआ। एक आदमी को तो यह पता चल गया कि यह आदमी महात्मा नहीं है। एक आदमी का भ्रम टूट गया, यह भी बड़ी बात है।

वे शायद सोचे होंगे कि इस भांति कह कर वे शायद मुझे प्रलोभन दे रहे हैं कि मुझे महात्मा और महर्षि बनाया जा सकता है, अगर मैं इस तरह की बातें न करूं।

आज तक महर्षियों और महात्माओं को इसी तरह बनाया गया है। और इसीलिए उन कमजोर लोगों ने इस तरह की बातें नहीं कीं जिनसे महात्मापन छिन सकता था। अपने महात्मापन के बचा रखने के लिए--उस प्रलोभन में--जीवन का कितना अहित हो सकता है, इसका उन्होंने कोई भी खयाल नहीं किया है।

मुझे चिंता नहीं है, मुझे विचार भी नहीं है, मुझे खयाल भी नहीं है! और मुझे घबराहट ही होती है, जब कोई मुझे महात्मा मानना चाहे। और आज की दुनिया में महात्मा बन जाना और महर्षि बन जाना इतना आसान है, जिसका कोई हिसाब नहीं। हमेशा आसान रहा है। हमेशा आसान रहा है। वह सवाल नहीं है। सवाल यह है कि महान मनुष्य कैसे पैदा हो--उसके लिए हम क्या कर सकते हैं? क्या सोच सकते हैं? क्या खोज कर सकते हैं? और मुझे लगता है कि मैंने बुनियादी सवाल पर जो बातें आपसे कही हैं, वे आपके जीवन में एक दिशा तोड़ने में सहयोगी हो सकती हैं। उनसे एक मार्ग प्रकट हो सकता है। और क्रमशः आपकी वासना का रूपांतरण आत्मा की दिशा में हो सकता है। अभी हम वासना हैं, आत्मा नहीं। कल हम आत्मा भी हो सकते हैं। लेकिन वह होंगे कैसे? इसी वासना के सर्वांग रूपांतरण से! इसी शक्ति को निरंतर ऊपर से ऊपर ले जाने से!

जैसा मैंने कल आपको कहा, उस संबंध में भी बहुत से प्रश्न हैं, उसके संबंध में एक बात कहूंगा।

मैंने आपको कहा कि संभोग में समाधि की झलक का स्मरण रखें, रिमेंबरिंग रखें और उस बिंदु को पकड़ने की कोशिश करें--उस बिंदु को जो विद्युत की तरह संभोग के बीच में चमकता है समाधि का। एक क्षण को जो चमक

आती है और विदा हो जाती है, उस बिंदु को पकड़ने की कोशिश करें कि वह क्या है? उसे जानने की कोशिश करें। उसको पकड़ लें पूरी तरह से कि वह क्या है?

और एक दफा उसे आपने पकड़ लिया, तो उस पकड़ में आपको दिखाई पड़ेगा कि उस क्षण में आप शरीर नहीं रह जाते हैं--बाँडीलेसनेस। उस क्षण में आप शरीर नहीं हैं। उस क्षण में एक झलक की तरह आप कुछ और हो गए हैं, आप आत्मा हो गए हैं।

और वह झलक आपको दिखाई पड़ जाए तो फिर उस झलक के लिए ध्यान के मार्ग से श्रम किया जा सकता है। उस झलक को फिर ध्यान की तरफ से पकड़ा जा सकता है। उस झलक को फिर ध्यान के रास्ते से जाकर परिपूर्ण रूप से, पूरे रूप से जाना और जीया जा सकता है। और वह अगर हमारे ज्ञान, जानने और जीवन का हिस्सा बन जाए तो आपके जीवन में सेक्स की कोई जगह नहीं रह जाएगी।

एक मित्र ने पूछा है कि ओशो, अगर इस भांति सेक्स विदा हो जाएगा तो दुनिया में संतति का क्या होगा? अगर इस भांति सारे लोग समाधि का अनुभव करके ब्रह्मचर्य को उपलब्ध हो जाएंगे तो बच्चों का क्या होगा?

जरूर इस भांति के बच्चे पैदा नहीं होंगे जिस भांति आज पैदा होते हैं। यह ढंग कुत्ते, बिल्लियों और इल्लियों का तो ठीक है, आदमियों का ठीक नहीं। यह कोई ढंग है? यह कोई बच्चों की कतार लगाए चले जाना--निरर्थक, अर्थहीन, बिना जाने-बूझे--यह भीड़ पैदा करते चले जाना। यह भीड़ कितनी हो गई? यह भीड़ इतनी हो गई है कि वैज्ञानिक कहते हैं कि अगर सौ बरस तक इसी भांति बच्चे पैदा होते रहे और कोई रुकावट नहीं लगाई जा सकी, तो जमीन पर टेहुनी हिलाने के लिए भी जगह नहीं बचेगी। हमेशा आप सभा में ही खड़े हुए मालूम होंगे। जहाँ जाएंगे, वहीं सभा मालूम होगी। सभा करना बहुत मुश्किल हो जाएगा। टेहुनी हिलाने की जगह नहीं रह जाने वाली है सौ साल के भीतर, अगर यही स्थिति रही।

वे मित्र ठीक पूछते हैं कि अगर इतना ब्रह्मचर्य उपलब्ध होगा तो बच्चे कैसे पैदा होंगे?

उनसे भी मैं एक और बात कहना चाहता हूँ, वह भी अर्थ की है और आपके खयाल में आ जानी चाहिए। ब्रह्मचर्य से भी बच्चे पैदा हो सकते हैं, लेकिन ब्रह्मचर्य से बच्चों के पैदा करने का सारा प्रयोजन और अर्थ बदल जाता है। काम से बच्चे पैदा होते हैं, सेक्स से बच्चे पैदा होते हैं।

सेक्स से बच्चे पैदा होना--बच्चे पैदा करने के लिए कोई सेक्स में नहीं जाता है। बच्चे पैदा होना आकस्मिक है, एक्सीडेंटल है। सेक्स में आप जाते हैं किसी और कारण से, बीच में बच्चे आ जाते हैं। बच्चों के लिए आप कभी सेक्स में नहीं जाते हैं। बिना बुलाए मेहमान हैं बच्चे। और इसीलिए बच्चों के प्रति आपके मन में वह प्रेम नहीं हो सकता। जो बिना बुलाए मेहमानों के प्रति कब होता है? घर में कोई आ जाए अतिथि बिना बुलाए तो जो हालत घर में हो जाती है--विस्तर भी लगाते हैं उसको सुलाने के लिए, खाना भी खिलाते हैं उसको खिलाने के लिए, आवभगत भी करते हैं, हाथ भी जोड़ते हैं--लेकिन पता होगा आपको कि बिना बुलाए मेहमान के साथ क्या घर की हालत हो जाती है! यह सब ऊपर-ऊपर होता है, भीतर कुछ भी नहीं। और पूरे वक्त यही इच्छा होती है कि कब आप विदा हों, कब आप जाएं।

बिना बुलाए बच्चों के साथ भी दुर्व्यवहार होगा, सद्व्यवहार नहीं हो सकता। क्योंकि उन्हें हमने कभी चाहा न था, कभी हमारे प्राणों की वे आकांक्षा न थे। हम तो किसी और ही तरफ गए थे, वे बाइ-प्रॉडक्ट हैं, प्रॉडक्ट नहीं। आज के बच्चे प्रॉडक्ट नहीं हैं, बाइ-प्रॉडक्ट हैं। वे उत्पत्ति नहीं हैं। वह उत्पत्ति के साथ, जैसे गेहूँ के साथ भूसा पैदा हो जाता है, वैसी हालत है। आपका विचार, आपकी कामना दूसरी थी, बच्चे बिलकुल आकस्मिक हैं।

और इसीलिए सारी दुनिया में हमेशा से यह कोशिश चली है--वात्स्यायन से लेकर आज तक यह कोशिश चली है--कि सेक्स को बच्चों से किसी तरह मुक्त कर लिया जाए। उसी से बर्थ-कंट्रोल विकसित हुआ, संतति-नियमन विकसित हुआ, कृत्रिम साधन विकसित हुए कि हम बच्चों से भी बच जाएं और सेक्स को भी भोग लें। बच्चों से बचने की चेष्टा हजारों साल से चल रही है। आयुर्वेद के ग्रंथों में दवाइयों का उल्लेख है, जिनको लेने से बच्चे नहीं होंगे, गर्भधारण नहीं होगा। आयुर्वेद के तीन-चार-पाँच हजार साल पुराने ग्रंथ इसका विचार करते हैं। और अभी आज का आधुनिकतम स्वास्थ्य का मिनिस्टर भी इसी की बात करता है। क्यों? आदमी ने यह ईजाद करने की चेष्टा क्यों की?

बच्चे बड़े उपद्रव का कारण हो गए। वे बीच में आते हैं, जिम्मेवारियां ले आते हैं। और भी एक खतरा--बच्चों के आते से ही स्त्री परिवर्तित हो जाती है। पुरुष भी बच्चे नहीं चाहता।

नहीं होते हैं तो चाहता है, इस कारण नहीं कि बच्चों से प्रेम है, बल्कि अपनी संपत्ति से प्रेम है--कल मालिक कौन होगा? बच्चों से प्रेम नहीं है। बाप जब चाहता है कि बच्चा हो जाए एक घर में, लड़का नहीं है, तो आप यह मत

सोचना कि लड़के के लिए बड़े उनके प्राण आतुर हो रहे हैं। नहीं, आतुरता यह हो रही है कि मैं रुपये कमा-कमा कर मरा जा रहा हूँ, न मालूम कौन कब्जा कर लेगा! एक हकदार मेरे खून का उसको बचाने के लिए होना चाहिए।

बच्चों के लिए कोई कभी नहीं चाहता कि बच्चे आ जाएं। बच्चों से हम बचने की कोशिश करते रहे हैं। लेकिन बच्चे पैदा होते चले गए। हमने संभोग किया और बच्चे बीच में आ गए। वह उसके साथ जुड़ा हुआ संबंध था। यह कामजन्य संतति है। यह बाइ-प्रॉडक्ट है सेक्सुअलिटी की। और इसीलिए मनुष्य इतना रुग्ण, इतना दीन-हीन, इतना उदास, इतना चिंतित है।

ब्रह्मचर्य से भी बच्चे आएंगे। लेकिन वे बच्चे सेक्स के बाइ-प्रॉडक्ट नहीं होंगे। उन बच्चों के लिए सेक्स एक वीहिकल होगा। उन बच्चों को लाने के लिए सेक्स एक माध्यम होगा। सेक्स से कोई संबंध नहीं होगा। जैसे एक आदमी बैलगाड़ी में बैठ कर कहीं गया। उसे बैलगाड़ी से कोई मतलब है? वह हवाई जहाज में बैठ कर गया। उसे हवाई जहाज से कोई मतलब है? आप यहां से बैठ कर दिल्ली गए हवाई जहाज में। हवाई जहाज से आपको कोई भी मतलब है? कोई भी संबंध है? कोई भी नाता है? कोई नाता नहीं है। नाता है दिल्ली जाने से। हवाई जहाज सिर्फ वीहिकल है, सिर्फ माध्यम है।

ब्रह्मचर्य को जब लोग उपलब्ध हों और संभोग की यात्रा समाधि तक हो जाए, तब भी वे बच्चे चाह सकते हैं। लेकिन उन बच्चों का जन्म उत्पत्ति होगी, वे प्रॉडक्ट होंगे, वे क्रिएशन होंगे, वे सृजन होंगे। सेक्स सिर्फ माध्यम होगा। और जिस भांति अब तक यह कोशिश की गई है--इसे बहुत गौर से सुन लेना--जिस भांति अब तक यह कोशिश की गई है कि बच्चों से बच कर सेक्स को भोगा जा सके, वह नई मनुष्यता यह कोशिश कर सकती है कि सेक्स से बच कर बच्चे पैदा किए जा सकें।

मेरी आप बात समझे?

ब्रह्मचर्य अगर जगत में व्यापक हो जाए तो हम एक नई खोज करेंगे, जैसे हमने पुरानी खोज की है कि बच्चों से बचा जा सके और सेक्स का अनुभव पूरा हो जाए। इससे उलटा प्रयोग आने वाले जगत में हो सकता है, जब ब्रह्मचर्य व्यापक होगा, कि सेक्स से बचा जा सके और बच्चे हो जाएं। और यह हो सकता है, इसमें कोई भी कठिनाई नहीं है। इसमें जरा भी कठिनाई नहीं है, यह हो सकता है।

ब्रह्मचर्य से जगत के अंत होने का कोई संबंध नहीं है। जगत के अंत होने का संबंध सेक्सुअलिटी से पैदा हो गया है। तुम करते जाओ बच्चे पैदा और जगत अंत हो जाएगा। न एटम बम की जरूरत है, न हाइड्रोजन बम की जरूरत है। यह बच्चों की इतनी बड़ी तादाद, यह कतार, यह काम से उत्पन्न हुए कीड़े-मकोड़ों जैसी मनुष्यता, यह अपने आप नष्ट हो जाएगी।

ब्रह्मचर्य से तो एक और ही तरह का आदमी पैदा होगा। उसकी उम्र बहुत लंबी हो सकती है। उसकी उम्र इतनी लंबी हो सकती है, जिसकी हम कोई कल्पना भी नहीं कर सकते हैं। उसका स्वास्थ्य अदभुत हो सकता है कि उसमें बीमारी पैदा न हो। उसका मस्तिष्क वैसा होगा, जैसी कभी-कभी कोई प्रतिभा दिखाई पड़ती है। उसके व्यक्तित्व में सुगंध ही और होगी, बल ही और होगा, सत्य ही और होगा, धर्म ही और होगा। वह धर्म को साथ लेकर पैदा होगा।

हम अधर्म को साथ लेकर पैदा होते हैं और अधर्म में जीते हैं और अधर्म में मरते हैं, और इसलिए दिन-रात जिंदगी भर धर्म की चर्चा करते हैं। शायद उस मनुष्यता में धर्म की कोई चर्चा नहीं होगी, क्योंकि धर्म लोगों का जीवन होगा। हम चर्चा उसी की करते हैं जो हमारा जीवन नहीं होता; जो जीवन होता है उसकी हम चर्चा नहीं करते। हम सेक्स की चर्चा नहीं करते, क्योंकि वह हमारा जीवन है। हम ईश्वर की चर्चा करते हैं, क्योंकि वह हमारा जीवन नहीं है। असल में, जिस चीज को हम जिंदगी में उपलब्ध नहीं कर पाते, बातचीत करके उसको पूरा कर लेते हैं।

आपने खयाल किया होगा, स्त्रियां पुरुषों से ज्यादा लड़ती हैं। स्त्रियां लड़ती ही रहती हैं, कुछ न कुछ खटपट पास-पड़ोस, सब तरफ चलती रहती है। कहते हैं कि दो स्त्रियां साथ-साथ बहुत देर तक शांति से बैठी रहें, यह बहुत कठिन है।

मैंने तो सुना है कि चीन में एक बार एक बड़ी प्रतियोगिता हुई और उस प्रतियोगिता में चीन के सबसे बड़े झूठ बोलने वाले लोग इकट्ठे हुए। झूठ बोलने की प्रतियोगिता थी कि कौन सबसे बड़ा झूठ बोलता है, उसको पहला पुरस्कार मिल जाएगा।

एक आदमी को पहला पुरस्कार मिल गया। और उसने यह बात बोली थी सिर्फ कि मैं एक बगीचे में गया। दो औरतें एक ही बेंच पर पांच मिनट तक चुप बैठी रहीं। और लोगों ने कहा कि इससे बड़ा झूठ कुछ भी नहीं हो

सकता! यह तो अल्टीमेट अनट्रुथ हो गया। और भी बड़ी-बड़ी झूठ लोगों ने बोली थी। उन्होंने कहा, वह सब बेकार, पुरस्कार इसको दे दो। यह आदमी बाजी मार ले गया।

लेकिन कभी आपने सोचा कि स्त्रियां इतनी बातें क्यों करती हैं? पुरुष काम करते हैं, स्त्रियों के हाथ में कोई काम नहीं है। और जब काम नहीं होता तो बात होती है।

भारत इतनी बातचीत क्यों करता है? वही स्त्रियों वाला दुर्गुण है। काम कुछ भी नहीं है, बातचीत-बातचीत है। ब्रह्मचर्य से एक नये मनुष्य का जन्म होगा, जो बातचीत करने वाला नहीं, जीने वाला होगा। वह धर्म की बात नहीं करेगा, धर्म को जीएगा। लोग भूल ही जाएंगे कि धर्म कुछ है, वह इतना स्वभाव हो सकता है। उस मनुष्य के बाबत विचार करना भी अदभुत है। वैसे कुछ मनुष्य पैदा होते रहे हैं। आकस्मिक था उनका पैदा होना।

कभी एक महावीर पैदा हो जाता है। ऐसा सुंदर आदमी पैदा हो जाता है कि अगर वह वस्त्र पहने तो उतना सुंदर न मालूम पड़े। नग्न खड़ा हो जाता है। उसके सौंदर्य की सुगंध फैल जाती है सब तरफ। लोग महावीर को देखने चले आते हैं। वह ऐसा मालूम होता है, संगमरमर की प्रतिमा हो। उसमें इतना वीर्य प्रकट होता है कि-- उसका नाम तो वर्धमान था--लोग उसको महावीर कहने लगते हैं। उसके ब्रह्मचर्य का तेज इतना प्रकट होता है कि लोग अभिभूत हो जाते हैं कि वह आदमी ही और है।

कभी एक बुद्ध पैदा होता है, कभी एक क्राइस्ट पैदा होता है, कभी एक कनफ्यूशियस पैदा होता है। पूरी मनुष्य-जाति के इतिहास में दस-पच्चीस नाम हम गिन सकते हैं जो पैदा हुए हैं।

जिस दिन दुनिया में ब्रह्मचर्य से बच्चे आएंगे--और यह शब्द ही सुनना आपको अजीब लगेगा कि ब्रह्मचर्य से बच्चे! मैं एक नये ही कंसेप्ट की बात कर रहा हूं। ब्रह्मचर्य से जिस दिन बच्चे आएंगे, उस दिन सारे जगत के लोग ऐसे होंगे--ऐसे सुंदर, ऐसे शक्तिशाली, ऐसे मेधावी, ऐसे विचारशील। फिर कितनी देर होगी उन लोगों को कि वे परमात्मा को न जानें? वे परमात्मा को इसी भांति जानेंगे, जिस तरह हम रात को सोते हैं।

लेकिन जिस आदमी को नींद नहीं आती, उससे अगर कोई कहे कि मैं सिर्फ तकिए पर सिर रखता हूं और सो जाता हूं, तो वह आदमी कहेगा, यह बिलकुल गलत, झूठ बात है। मैं तो बहुत करवट बदलता हूं, उठता हूं, बैठता हूं, माला फेरता हूं, गाय-भैंस गिनता हूं; लेकिन कुछ नहीं! नींद आती नहीं। आप झूठ कहते हैं। ऐसा कैसे हो सकता है कि तकिए पर सिर रखा और नींद आ जाए। तकिए पर सिर रखा और नींद आ जाती है? आप सरासर झूठ बोलते हैं! क्योंकि मैंने तो बहुत प्रयोग करके देख लिया; नींद तो कभी नहीं आती, रात-रात गुजर जाती है।

अमेरिका में न्यूयार्क जैसे नगरों में तीस से लेकर चालीस प्रतिशत लोग नींद की दवाएं लेकर सो रहे हैं। और अमेरिकी मनोवैज्ञानिक कहता है कि सौ वर्ष के भीतर न्यूयार्क जैसे नगर में एक भी आदमी सहज रूप से नहीं सो सकेगा, दवा लेनी ही पड़ेगी। तो यह हो सकता है कि न्यूयार्क में सौ साल बाद होगा, दो सौ साल बाद हिंदुस्तान में होगा; क्योंकि हिंदुस्तान के नेता इस बात के पीछे पड़े हैं कि हम उनका मुकाबला करके रहेंगे! हम उनसे पीछे नहीं रह सकते। वे कहते हैं कि हम उनसे पीछे नहीं रह सकते, उनकी सब बीमारियों में हम मुकाबला करके रहेंगे!

तो यह हो सकता है कि पांच सौ साल बाद सारी दुनिया के लोग नींद की दवा लेकर ही सोएं! और बच्चा जब पहली दफा पैदा हो मां के पेट से, तो वह दूध न मांगे, वह कहे--ट्रैकेलाइजर! नौ महीने सो नहीं पाया तुम्हारे पेट में, ट्रैकेलाइजर कहां है? तो पांच सौ साल बाद उन लोगों को यह विश्वास दिलाना कठिन होगा कि आज से पांच सौ साल पहले सारी मनुष्यता आंख बंद करती थी और सो जाती थी। वे कहेंगे, इंपासिबल! असंभव है यह बात। यह नहीं हो सकता। कैसे हो सकती है यह बात!

मैं आपसे कहता हूं, उस ब्रह्मचर्य से जो जीवन उपजेगा, उसको यह विश्वास करना कठिन हो जाएगा कि लोग चोर थे, लोग बेईमान थे, लोग हत्यारे थे, लोग आत्महत्याएं कर लेते थे, लोग जहर खाते थे, लोग शराब पीते थे, लोग छुरे भोंकते थे, लोग युद्ध करते थे। यह उनको विश्वास करना मुश्किल होगा कि यह कैसे हो सकता है?

काम से अब तक उत्पत्ति हुई है। और वह भी उस काम से जो फिजियोलाजिकल से ज्यादा नहीं है। एक आध्यात्मिक काम का जन्म हो सकता है और एक नये जीवन का प्रारंभ हो सकता है। उस नये जीवन के प्रारंभ के लिए ये थोड़ी सी बातें इन चार दिनों में मैंने आपसे कही हैं।

मेरी बातों को इतने प्रेम और इतनी शांति से--और ऐसी बातों को, जिन्हें प्रेम और शांति से सुनना बहुत मुश्किल गया होगा, बड़ी कठिनाई मालूम पड़ी होगी।

एक मित्र तो मेरे पास आए और कहने लगे कि मैं डर रहा था कि कहीं दस-बीस आदमी खड़े होकर यह न कहने लगे कि बंद करिए, यह बात नहीं होनी चाहिए!

मैंने कहा, इतने हिम्मतवर आदमी भी होते तो भी ठीक था। इतने हिम्मतवर आदमी भी कहां हैं कि किसी को कह दें कि बंद करिए यह बात! अगर इतने ही हिम्मतवर आदमी इस मुल्क में होते तो बेवकूफों की कतार, जो कुछ

भी कह रही है मुल्क में, वह कभी की बंद हो गई होती। लेकिन वह बंद नहीं हो पा रही। मैंने कहा, मैं तो प्रतीक्षा करता हूं कि कभी कोई बहादुर आदमी खड़े होकर कहेगा कि बंद कर दो यह बात, उससे कुछ बात करने का मजा होगा।

तो ऐसी बातों को, जिनसे कि मित्र डरे हुए थे कि कहीं कोई खड़े होकर न कह दे, आप इतने प्रेम से सुनते रहे, आप बड़े भले आदमी हैं और जितना आपका ऋण मानूं उतना कम है। अंत में यही कामना करता हूं परमात्मा से कि प्रत्येक व्यक्ति के भीतर जो काम है, वह राम के मंदिर तक पहुंचाने की सीढ़ी बन सके। बहुत-बहुत धन्यवाद! और अंत में सबके भीतर बैठे हुए परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

ओशो--एक परिचय



हम कौन हैं, इसे समझने की दिशा में ओशो ने जो अद्वितीय योगदान दिया है उसे किसी श्रेणी में नहीं बांधा। वे एक रहस्यवादी, अंतर-जगत के वैज्ञानिक और विद्रोही चेतना हैं। उनकी संपूर्ण रुचि इस बात में है कि मानवता को तत्काल एक नई जीवन-शैली खोज निकालने की आवश्यकता के प्रति कैसे सजग किया जाए। अतीत का अनुसरण किए जाना इस अद्वितीय और अति सुंदर ग्रह के अस्तित्व को ही संकट में डाल देने के लिए आमंत्रण देना है।

ओशो की बातों का सार-निचोड़ यह है कि केवल स्वयं को बदलने, एक-एक व्यक्ति के बदलने, के परिणामस्वरूप हमारा संपूर्ण “स्व”--हमारा समाज, हमारी संस्कृति, हमारे विश्वास, हमारा संसार--सभी कुछ बदल जाता है। और इस बदलाव का द्वार है--ध्यान।

ओशो ने एक वैज्ञानिक की तरह अतीत के सारे दृष्टिकोणों पर समीक्षा और प्रयोग किए हैं और आधुनिक मनुष्य पर उनके प्रभाव का परीक्षण किया है, तथा उनकी कमियों को दूर करते हुए इक्कीसवीं सदी के अतिक्रियाशील मन के लिए एक नवीन प्रारंभ बिंदु: ‘ओशो सक्रिय ध्यानों’ का आविष्कार किया है। [OSHO Active Meditations](#) उनके अनूठे ओशो सक्रिय ध्यान इस तरह रचे गए हैं कि वे पहले शरीर और मन में एकत्रित तनावों को रेचन हो सके, जिसमें रोजमर्रा के जीवन में सहज स्थिरता फलित हो व विचाररहित विश्रान्ति अनुभव की जा सके।

एक बार जब आधुनिक जीवन की आपाधापी थमना शुरू हुई, तो “सक्रियता” “निष्क्रियता” में परिवर्तित होने लगती है, यही वास्तविक ध्यान की शुरुआत का प्रारंभ बिंदु है। इसे सहयोग देने के लिए, अगले कदम के रूप में ओशो ने प्राचीन ‘सुनने की कला’ को सूक्ष्म समकालीन विधि के रूप में रूपांतरित किया है, वहीं हैं ‘ओशो-प्रवचना’ यहां शब्द संगीत हो जाते हैं, और श्रोता खोज पाता है उसे जो सुन रहा है, और व्यक्ति का ध्यान जो सुना जा रहा है उसके साथ-साथ सुनने वाले पर भी बना रहता है। जैस-जैसे मौन उतरता है, वैसे-वैसे जो भी सुनने योग्य है वह जैसे किसी जादुई ढंग से सीधे-सीधे समझ लिया जाता है, मन के बिना किसी अवरोध के जो कि इस सूक्ष्म प्रक्रिया में केवल हस्तक्षेप और बाधा भर डाल सकता है।

यह हजारों प्रवचन अर्थवत्ता की व्यक्तिगत तलाश से लेकर आज समाज के समक्ष उपस्थित सर्वाधिक ज्वलंत सामाजिक व राजनैतिक समस्याओं तक सब-कुछ पर प्रकाश डालते हैं। ओशो की पुस्तकें लिखी नहीं गई हैं, अपितु अंतर्राष्ट्रीय श्रोताओं के समक्ष उनकी तत्क्षण दी गई ध्वनिमुद्रित ऑडियो/वीडियो वार्ताओं के संकलन हैं। जैसा कि वे कहते हैं: “तो याद रहे, मैं जो भी कह रहा हूं वह केवल तुम्हारे लिए ही नहीं... मैं भविष्य की पीढ़ियों के लिए भी बोल रहा हूं।”

ओशो को लंदन के दै संडे टाइम्स ने “बीसवीं सदी के 1000 निर्माताओं” में से एक कह कर वर्णित किया है। [Tom Robbins](#) सुप्रसिद्ध अमरीकी लेखक टॉम राबिन्स ने लिखा है कि ओशो “जीसस क्राइस्ट के बाद सर्वाधिक खतरनाक व्यक्ति हैं।” भारत के संडे मिड-डे ने ओशो को गांधी, नेहरू और बुद्ध के साथ उन दस लोगों में चुना है जिन्होंने भारत का भाग्य बदल दिया।

अपने कार्य के बारे में ओशो ने कहा है कि वे एक नये मनुष्य के जन्म के लिए परिस्थितियां तैयार कर रहे हैं। इस नये मनुष्य को वे ‘ज़ोरबा दि बुद्धा’ कहते हैं--जो ‘ज़ोरबा दि ग्रीक’ की तरह पृथ्वी के समस्त सुखों को भोगने की क्षमता रखता हो और गौतम बुद्ध की तरह मौन स्थिरता में जीता हो।

ओशो के हर आयाम में एक धारा की तरह बहता हुआ वह जीवन-दर्शन है जो पूरब की समयातीत प्रज्ञा और पश्चिम के विज्ञान और तकनीकी की सर्वोच्च संभावनाओं को एक साथ समाहित करता है।

ओशो आंतरिक रूपांतरण के विज्ञान में अपने क्रांतिकारी योगदान के लिए जाने जाते हैं और ध्यान की उन विधियों के प्रस्तोता हैं जो आज के गतिशील जीवन को ध्यान में रख कर रची गई हैं। [Osho's talks](#)

ओशो की दो आत्मकथात्मक कृतियां:

ऑटोबायोग्राफी ऑफ ए स्प्रिचुअली इनकरेक्ट मिस्टिक, (सेंट मार्टिस प्रेस, यू एस ए) (बुक एंड ई-बुक)

[Autobiography of a Spiritually Incorrect Mystic](#),

ग्लिम्प्सेस ऑफ ए गोल्डन चाइल्डहुड, (हिंदी पुस्तक: स्वर्णिम बचपन) (ओशो मीडिया इंटरनेशनल, पुणे, भारत) (बुक एंड ई-बुक)

[Glimpses of a Golden Childhood](#)

ओशो इंटरनेशनल मेडिटेशन रिजॉर्ट OSHO International Meditation Resort



हर वर्ष मेडिटेशन रिजॉर्ट 100 से भी अधिक देशों से आने वाले हजारों मित्रों का स्वागत करता है। रिजॉर्ट का अनूठा परिसर अधिक होशपूर्ण, विश्रान्त, उत्सवमय व सृजनात्मक जीवन जीने के एक नये ढंग का प्रत्यक्ष अनुभव करने के लिए अवसर प्रदान करता है। चौबीसों घंटे और पूरे वर्ष चलने वाले कार्यक्रमों का भव्य, विविधतापूर्ण चुनाव उपलब्ध है--कुछ भी न करना व केवल विश्राम उनमें से एक है!

यहां के सभी कार्यक्रम ओशो की 'ज़ोरबा दि बुद्धा' की अंतर्दृष्टि पर आधारित हैं। ज़ोरबा एक गुणात्मक रूप से नये ढंग का मनुष्य जो दैनंदिन जीवन को सृजनात्मक ढंग से जीने के साथ ही मौन और ध्यान में ठहर जाने की क्षमता रखता है।

स्थान - Location

मुंबई से सौ मील दक्षिणपूर्व में फलते-फूलते आधुनिक शहर पुणे में स्थित ओशो इंटरनेशनल मेडिटेशन रिजॉर्ट छुट्टियां बिताने का एक ऐसा स्थल है जो औरों से सर्वथा भिन्न है। वृक्षों की कतारों से घिरे आवासीय क्षेत्र में मेडिटेशन रिजॉर्ट 28 एकड़ के दर्शनीय बगीचों में फैला हुआ है।



ओशो ध्यान

हर तरह के व्यक्ति के अनुरूप दिन भर चलने वाले ध्यान-कार्यक्रमों में सक्रिय और निष्क्रिय, परंपरागत और

क्रांतिकारी, तथा खासकर ओशो डाइनैमिक मेडिटेशन जैसी ध्यान-विधियां उपलब्ध हैं। [OSHO Active Meditations](#). ये सभी ध्यान-विधियां विश्व के संभवतः सर्वाधिक भव्य व विशाल ध्यान-सभागार 'ओशो ऑडिटोरियम' में होती हैं। [OSHO Auditorium](#).

ओशो मल्टीवर्सिटी

यहां होने वाले विभिन्न व्यक्तिगत सेशन, कोर्स और वर्कशॉप अपने आप में सृजनात्मक कला से लेकर समग्र स्वास्थ्य तक, व्यक्तिगत रूपांतरण, मानवीय रिश्ते एवं जीवन-परिवर्तन, कार्य-ध्यान, गृह्य-विज्ञान, तथा खेलों व मनोरंजन में “झेन” ढंग तक सब-कुछ समाहित करते हैं। [OSHO Multiversity's](#) मल्टीवर्सिटी की सफलता का राज इस तथ्य में है कि इसके समस्त कार्यक्रम ध्यान से जुड़े होते हैं, जो इस समझ को बढ़ावा देता है कि मनुष्य केवल अंगों का जोड़ मात्र नहीं है, वरन उससे बढ़ कर बहुत कुछ है।

ओशो बाशो स्पा - [OSHO Basho Spa](#)

वैभवमय बाशो स्पा में उपलब्ध है हरे-भरे पेड़ों व हरियाली भरे वातावरण के बीच खुली हवा में तैरने का आनंद विशालकाय स्विमिंग-पूल में। अनूठे ढंग से बनी विशाल ज़कूजी, सौना, जिम, टेनिस कोर्ट... मनमोहक सुंदर पृष्ठभूमि में उभर-उभर आते हैं।



भोजन - [Cuisine](#)

अलग-अलग ढंग के विभिन्न भोजन-स्थलों पर परोसे जाने वाले सुस्वादु व शाकाहारी पाश्चात्य, एशियायी व भारतीय भोजन में मेडिटेशन रिजॉर्ट के लिए विशेष रूप से उगाई गई आर्गेनिक सब्जियों का ही उपयोग होता है। ब्रेड और केक इत्यादि रिजॉर्ट की अपनी बेकरी में ही तैयार किए जाते हैं।

सांध्य गतिविधियां

चूने के लिए सांध्य-गतिविधियों की लिस्ट लंबी है जिसमें नृत्य करना सबसे ऊपर है। अन्य गतिविधियों में तारों की छांव में फुलमून-ध्यान, वैरायटी शो, संगीत-कार्यक्रम तथा दैनिक जीवन के लिए ध्यान शामिल हैं।



सुविधाएं

आप प्रतिदिन उपयोग में आने वाली बुनियादी चीजें मेडिटेशन रिजॉर्ट के गैलेरिया से खरीद सकते हैं। [Galleria](#). मल्टीमीडिया गैलरी में ओशो की सभी मीडिया सामग्री उपलब्ध है। बैंक, ट्रेवल एजेंसी तथा साइबर कैफे की सुविधाएं भी परिसर के भीतर ही उपलब्ध हैं। खरीददारी के शौकीन मित्रों के लिए पुणे में सभी चुनाव उपलब्ध हैं--परंपरागत भारतीय वस्तुओं से लेकर अंतर्राष्ट्रीय ब्रैंड्स के स्टोर्स तक।

आवास

आप ओशो गेस्टहाउस के सुरचिपूर्ण कमरों में ठहरने का चुनाव कर सकते हैं। [OSHO Guesthouse](#), अगर आप लंबे समय तक रुकना चाहते हैं तो 'लिविंग-इन' कार्यक्रम के पैकेज भी चुन सकते हैं। [OSHO Living-In](#) इसके अतिरिक्त नजदीक ही बहुत प्रकार के होटल व सर्विस अपार्टमेंट भी उपलब्ध हैं।



अधिक जानकारी के लिए:



ओशो की अद्वितीय वाणी को अब आप विभिन्न भाषाओं व प्रारूपों में निम्नलिखित ऑनलाइन वेबसाइटों पर पा सकते हैं:

ओशो की अन्य अद्वितीय सामग्री विभिन्न भाषाओं और प्रारूपों में पाने के लिए देखें:

www.osho.com/allaboutosho



ओशो इंटरनेशनल की आधिकारिक और संपूर्ण वेबसाइट:

www.osho.com



ओशो सक्रिय ध्यान विधियां:

www.osho.com/meditate



iosho, ओशो के ढेरों डिजिटल अनुभवों जिनमें ओशो ड्रेन टैरो, टीवी, लाइब्रेरी, होरोस्कोप, ई-ग्रीटिंग और रेडियो। कृपया एक क्षण के लिए ठहरिए, एकबारगी पंजीकरण के लिए--जो आपको सदैव के लिए लॉगिन सुविधा प्रदान करती है। पंजीकरण फ्री है और वैलिड ई-मेल आईडी के साथ हर किसी के लिए उपलब्ध:

www.osho.com/iosho



ओशो आनलाइन शॉप:
www.osho.com/shop



ओशो इंटरनेशनल मेडिटेशन रिजॉर्ट आने की योजना बनाएं:
www.osho.com/visit



ओशो ट्रांसलेशन प्रोजेक्ट के द्वारा योगदान दें:
www.dotsub.com



ओशो न्यूजलेटर पढ़ें:
www.osho.com/NewsLetter



यू-ट्यूब पर ओशो को देखें:
www.youtube.com/user/OSHOInternational



फेसबुक पर ओशो को देखें:

www.facebook.com/osho.international.meditation.resort

and Twitter:

twitter.com/OSHO

यह ओशो ई-बुक खरीदने के लिए धन्यवाद।